चुटकी भर चाँदनी

लेखक

डॉ० केशनी प्रसाद चौरसिया

• जूझती-छटपटाती मानव-चेतना की नकारात्मक नाइलॉनी झलकियाँ •

अमिताभ प्रकाशन

५२८ कटरा, इलाहाबाद-२

•

प्रथम संस्करण : जुलाई १९६३
उर्दू एडीसन (प्रेस मे)

[प्रस्तुत रचना मे गुम्फित सारी रोमाचकारी झलकियाँ कल्पित हैं। किसी जीवित पात्र अथवा घटना से तद्रूपता को केवल संयोग के रूप मे ही स्वीकार किया जाय।]

•

पुस्तकालय संस्करण (सजिल्द) मूल्य : चार रुपये
अल्पमोली संस्करण मूल्य : दो रुपये

मुद्रक
जवाहर प्रिंटिंग प्रेस
इलाहाबाद

चुटकी भर चाँदनी | युग-पीड़ा का सफल आकलन

●व्यापक मानवीय धरातल पर अंकित एक विराट जीवन-सत्य के विविध, बहुरंगी चित्र 'चुटकी भर चाँदनी' के प्रत्येक कोर-किरण में व्याप्त हैं। उपन्यास मे एक ओर जहाँ जीवन का श्रेष्ठतर, गहनतर और चिरस्थायी मूल्य उभरा-निखरा है वही उसमे वंचक, कायर, व्यक्तित्वहीन शोषण दैत्यो और विकलाग प्रेतो की बेतरतीब कतारें भी है। अँधेरे उजाले के यही टुकडे तो कमोबेश मात्रा में हर इंसान तथा हर समाज मे विद्यमान है और उपन्यासकार ने उपलब्धि के इन्ही माध्यमो से अन्दर के 'मनुष्य' तक पहुँचने का सफल प्रयास किया है और यही कारण है कि 'चुटकी भर चाँदनी' मे लेखक अर्थहीन, कल्पित, कृत्रिम कुहालोक मे न भटक कर वास्तविक जीवन के रहस्यमय सफेद-स्याह पर्दों को उठाता है और नये सौन्दर्यपरक-सम्वेदनपूर्ण चित्र प्रस्तुत करता है।

प्रस्तुत उपन्यास के अनेक पात्र है सो अनेक जीवन-दर्शन से मंडित 'व्यक्ति' छिछले-गहरे स्तरो मे उतराते-पैठते नज़र आते हैं। किसी का माथा ऊँचा है तो किसी का झुका, किसी के होठो पर गुलाब हैं तो किसी के होठो पर पपडिया, किसी की हर रात शबाब-शराब की रात है तो किसी का हर क्षण टूटते ख़्वाब और झूठे नक़ाब का है। को. औरत ख़रीदता है तो कोई बीवी-बहन बेंचता है। मनुष्य एक मरणा- सन्न जाति का वंशज होता जा रहा है। विषमतापूर्ण ज़िन्दगी का यह वीभत्स रूप आज दिनो-दिन टूटता-बिखरता हुआ भी फैलता जा रहा है और जीवन एक विकट समस्या और अकथनीय नारकीय सकट का पुज बनता जा रहा है। यथार्थ की यह घोरतम मार्मिक कटुता-पीड़ा न तो उपन्यासकार के निकट स्वीकृति अथवा अनुकृति के रूप मे सिद्ध हुई है अपितु इस जिन्दगी को उसने सहधर्मी होकर जिया है, पूरी तर

से भोगा है अत: प्रस्तुत कृति मे विविध जीवन सत्यो के माध्यम से अनेक सत्य- सम्वेदनाओ का आकलन हुआ है वह खण्डो मे विभाजि होते हुए भी पूर्णता, समग्रता और युगधर्मी सत्य सा प्रतिभासि होता है ।

बाहर से निष्क्रिय और अन्तर्द्वन्द्व से ग्रस्त, दिक्भ्रम जड मूर्च्छा के शिकार, जीवत-जागरूक सघर्षरत लोग और उनकी अनेक गुम्फि समस्याओ तथा स्वरूपो का चित्रण एक विराट कैनवास पर हुआ है तभी तो कही जीवन-सूत्र बुरी तरह उलझे, एक फ़ॅचलेदरी सस्कृति क निर्माण कर रहे है । कितना भयानक, अमानुषिक जीवन-दर्शन पन रहा है आज के युग में । फिर भी इस घोर नारकीय जीवन जीने वाल की भी बडी काव्यात्मक मनोरम धारणायें है । नवोपलब्ध जीवन-दृष्टि से सम्पन्न ये भूखे-फटेहाल विवस्त्र लोग—'चुटकी भर चाँदनी' का भूखा नंगा जेबकतरा मीनाकुमारी पूरन को अपना 'नवा-नवा सूट जिसे पैन के अपन ने सिरफ एक सुहागरात खल्लास कियाच' दे देता है और पूरन के अच्छे दिन लौट आने पर भी अपने सूट का जिक्र तक नही करता । आज के अनास्थापूर्ण घोर वैयक्तिक युग की चरमराती, आर्थिक सामाजिक व्यवस्था मे बम्बई की फुटपाथी जिन्दगी के ऐसे अनेक तरल-सरल और झकझोरने वाले चित्र प्रस्तुत उपन्यास मे उरेहे गये है जो नये जीवन को विकास देने और उसका रक्षण करने का सकेत करते है और जो मानवीय गरिमा के प्रति हमारी प्रसुप्त सम्वेदनशीलता को पूरी तरह जागृत करते हैं । ऐसे सन्दर्भहीन, मूल्यहीन, व्यवस्थाहीन जीवन-रूप आप इस उपन्यास में अनेक परिप्रेक्ष्य से पायेंगे जो कभी हमारी खंडित यान्त्रिक व्यवस्था की ओर सकेत करेंगे, मृत्यु की हिचकियों में जूझती गरीबी और भुखमरी से भरी जिन्दगी की मर्मान्तक कहानी सुनायेंगे और कही वासना की घोर पापाचारी वृत्तियो का उद्घाटन करेंगे जिनसे व्यक्ति क्लीव, पंगु या विकृतमना होता है और जिसे गुनाहों का स्वाद लेकर जीने मे ही सुख प्राप्त होता है । जैसे गुरुमुखदास, मुसरदास, मुन्शी मनसुखलाल, रुस्तम चंदानी और रूबी ।

•विवशतापूर्ण असमर्थता, असफल असन्तोष की कटुता, बेबसी और पुंसत्वहीनता—आधुनिक युग के टूटे रीढ वाले' यही सारे अधूरे सपने ही तो पूनम के चरित्र से उभरकर नये 'लघु-भूखे मानव' का प्रतीकात्मक चित्र प्रस्तुत करते है। एक भयानक रोग से पीडित नकली न्यूयार्क बम्बई और इसके बदहवास बाशिन्दे, सब की आखो मे अनजानी, पोली-डरावनी डोलती परछाइयाँ, प्रत्येक के मुख से निकलने-बिछलने को बेकरार भाग, हर एक के भीतर सुलगता एक पूरा ज्वालामुखी। सर्वनाश, शोषण, बलात्कार और विस्फोट का तनावपूर्ण वातावरण और इसमे पनपने वाला एक घिनौना फोडा—'चुटकी भर चाँदनी' मे जीवन की यही समस्यामूलक बेबसी और घुटन से भरी छटपटाती जिन्दगी की मर्मान्तिक गाथा अकित है।

प्रस्तुत उपन्यास एक सफल रूपक है जिसमे आधुनिक जीवन की समग्र जय-पराजय, आस्था-अनास्था और आँसू-मुस्कान का बेपनाह कथ्य है। बेकार, निरर्थक और निकम्मे जीवन चित्रो मे लेखक ने चिन्तन के जो नये आयाम उद्घाटित किये हैं उसमे उसके भीतर पलने वाला मानवता के प्रति प्यार और उसके लिए कुछ करने की इच्छा ही तो है।

ऐसी उलझी-बिखरी जिन्दगी को एक सर्वथा अनूठी-अछूती भाषा मे व्यक्त किया गया है। व्यापक जीवन-चित्रण की अनेकरूपता, टूटे चित्र, यान्त्रिक झनझनाहट—सभी के ध्वन्यात्मक रूप इसमे उपलब्ध है। संगीताकुल स्निग्धता-शीतलता तो चाँदनी सी आद्योपान्त निखरी-बिखरी है। नवलेखन मे ऐसी समृद्ध, सशक्त, गौरवशाली अनुभूति और अभिव्यक्ति प्रस्तुत उपन्यास के अनुपात, सन्तुलन, व्यवस्था और रूप-गठन का परिमार्जन ही नही करती अपितु कल के आने वाले साहित्य को एक स्वस्थ सृजनपरक दिशा-दृष्टि भी देती है।

त्रिलोकी नाथ श्रीवास्तव

• उत्पत्स्यते मम तु कोऽपि समानधर्मा
कालो ह्ययं निरवधिर्विपुला च पृथ्वी

● मैं नही, किन्तु कुछ लोगो का विचार है कि 'दुनिया किस दिशा में जा रही है'—यह जानना आज से नौ-दस वर्ष पहले बहुत आवश्यक नही था, जो इस बारे में सचेत नही थे उन्हे क्षमा किया जा सकता था। किन्तु आज यह तथ्य इतना अधिक महत्वपूर्ण हो गया है कि ऐसे लोगों को कभी क्षमा नही किया जा सकता। जो आज दुनिया को देखने से इंकार करते हैं वे न तो अन्धे है और न एकदम भोले !...

-एँन रैण्ड

दर्पणी मुस्कान

जैसे ही कच्ची धूप का नरम गुच्छा तकिये पर गिरा, मै आँख मलते हुए हडबडा कर उठ बैठा। मेरे रस्मी मेहमान पूनम जी साफ्ट विनाका ब्रश से पिपरमेण्टी पेस्ट के झाग उठाकर अपनी 'वरदन्त की पंगति कुन्द कलियो' को चमकाते हुए बीच बीच मे 'आयेगा आयेगा आने वाला' को फिल्मी धुन नकसुरे सुर से गुनगुनाते कमरे में थिरक रहे थे। पीले कनेर के फूलो सी चटक, जून की प्रातःकालीन धूप आँगन मे छलछला उठी थी। मै नित्य की तरह पैरो मे चप्पल डालकर ऊपर छत पर निकल गया, कुछ देर चहलकदमी करता रहा। कच्ची धूप गर्मी पाकर जल्दी ही गदराने लगी, उतर आया। देखा पूनम जी नहा धोकर अपनी अटैची मे लगे आइने के सामने बैठे सिंगार पटार मे खोये हैं।

पूनम जी ने पहले अपने प्रयोगवादी चेहरे पर क्लोन्सिग क्रीम की फाउन्डेशन दी फिर धीरे धीरे थपकिया कर उससे मिलते जुलते रंग का पौडर लगाया, घुंघराले बालों को सेट किया, कान की लवों पर सेंट लगाकर शेष अपनी बुश्शर्ट पर सुखा लिया। अचानक आँखें चार हुईं, कुछ झेंप से गये।

'इतनी अलस्सुबह से कहाँ भाई?'

बिदुराते हुए बोले : कहा न, कवि जी से मिलने जाना है, कुछ देर से लौटूंगा, मेरा इतजार न कीजियेगा, जलपान 'नॉवल्टी' मे कर लूंगा। 'रूपशिखा' के अगले अक के लिए मैटर इकट्ठा करना है, कई और लेखको से मिलना है। कलाकारो की नगरी है न प्रयाग (तभी तो

एक कलाकार दिल्ली से बम्बई जाते हुए जेब कटाकर यहाँ ड्रॉप कर गये हैं) वे अपना आकर्षक फोलियो बगल मे दबाकर चले गये।

मेरी उनकी दोस्ती अभी बमुश्किल तमाम बारह-चौदह घण्टे पहले हुई थी। बात कुछ यो हुई कि अपने जिस जिगरी दोस्त के साथ मैं कल शाम एक दूकान पर खडा जिंजर की बोतल सुडक रहा था उसी के ऊपर एक होटल मे मेरे ये नये मेहमान चार दिन से अड्डा जमाये पडे थे। दिल, दिमाग़ और पैसे से खाली। मेरा पुराना यार पता नही कैसे इनकी गिरफ्त मे पहले से आ चुका था। जब इठलाते बलखाते वे सीढियाँ चढते हुये ऊपर जाने लगे तो उनकी ओर इशारा करके धीरे से उसने मुझसे कहा :

'भाई साब! देखिये तो पोयट पूनम साहब जा रहे हैं, बम्बई में रहते हैं और कई फिल्मों के गीत लिख चुके है।'

'यार, आदमी तो दिलचस्प मालूम पडता है, चलो कुछ बात ही की जाय लेकिन......'

'लेकिन वेकिन क्या, वे मुझे जानते हैं।'

'अच्छा, तो तुम कैसे जानते हो रज्जन इन्हे ?'

'वैसे ही रास्ते चलते भेंट हो गई थी, ख़ुद उन्होने परसो शाम को जान्सटनगज से साथ साथ आते समय अपना हाल-चाल बताया, चलते-चलते एक गीत भी सुना डाला जो पता नही किस आने वाली फिल्म मे फिट हो चुका है लेकिन शोर गुल के कारण कुछ पल्ले नहीं पड़ा। शायद मुझे देखा नही, नही ज़रूर इधर मुखातिब होते।'

'हो सकता है, अच्छा तो आओ चलें।'

पूनम जी बडे तपाक से खूब खूब दिल खोल कर मुझसे मिले। ऐसा अहसास हुआ कि जैसे जनम जनम से वे मुझे जानते रहे हैं; इसे एक प्रकार का कुसयोग ही कहना चाहिये कि इतने अजर अमर आत्मिक स्तर पर होते हुए भी हम दोनो इस धराधाम पर अवतरित होने के बीस बाइस साल बाद मिल सके। ख़ैर मिल तो गये।

अब भला आत्मा का आत्मा से परिचय क्या, लेकिन दुनियाँदारी निबाहने के लिए फर्जी कारवाई तो करनी ही पडती है सो इस वसूल के पक्के पूनम जी खुद ब खुद मेरे कन्धे को बड़े अपनापे से थपथपाते व्यक्त हो पडे :

'डियर, तुम्हारे ही प्रान्त का हूँ, गैर न समझना, रोटी के कारण... तुम लोगो की तरह मुझे ऊँचो शिक्षा का अवसर तो नही मिला लेकिन हाँ, स्वतंत्र रूप से मैने पढा खूब है। किस्सा तोता मैना से लेकर पतजलि के योग दशन तक। और मित्र, मै तो समझता हूँ कि सब कुछ पढना चाहिये, कोई भी नगण्य से नगण्य वस्तु इस जगत्याम् जगत् मे त्याज्य नही, सब का अपना सापेक्षिक महत्त्व है। हम अपनी सकुचित दृष्टि और छिछले प्रतिमानो से किसी वस्तु को हेय या अश्लील ठहरा देते हैं। दरअसल अपने आप मे वह इतनी बुरी होती नही लेकिन लेकिन······फिर अगर नही मानते (मेरे कधे पर मुक्का मार कर) तो इस सृष्टि का सूत्रपात ही आदिम खुराफात से हुआ है।

पूनमजी की हमलावर किस्म की तकरीर से इतना तो मुझे मालूम हो ही गया कि इस आदमी ने किसी स्कूल कालेज में भले ही न पढा-लिखा हो लेकिन व्यावहारिकता के विश्वविद्यालय मे तो भरपूर शिक्षा पाई है और सचमुच यही पढाई-लिखाई हर एक दृष्टि से हमे ज़िन्दगी से जूझने के लिए एक पायेदार पुख्ता जमीन देती है। थोड़ी देर बाद उन्होनें चाय मँगवाई, हम दोनो चुस्कियो मे सिप करते रहे। अतिरिक्त जानने के लिए मैंने उन्हे फिर छेड़ा। इस बार कुछ चोट खाये से बोले :

'बन्धू ! क्या कहूँ, तुमसे अब क्या छिपाना, दिल्ली से यहाँ आते समय रास्ते मे किसी ने आँख झपकने पर पर्स पार कर दिया, अटैची में दस बीस रुपये पड़े थे, दो दिन से वही फूँक रहा हूँ वैसे मैंने सुलोचना जी को टेलीग्राम कर दिया है, रुपये आजकल में आते ही होगे लेकिन शाम को ···········'

'सुलोचना जी कौन पूनमजी ?'

अँगडाई लेकर छुछलाते से बोले : 'अरे भाई मत पूछो, मेरी आश्रयदाता, मेरी प्रेरणा, मेरी वीरान उम्मीदो की जाने-बहार, मैगनीज के प्रसिद्ध उद्योगपति सेठ छावडीवाला की एक मात्र कुँवारी कन्या, कई लाख की स्वामिनी, उसीने तो अपने कदमो मे मुझ गरीब को ठिकाना दिया है वरना इतनी बडी दुनियाँ मे मेरा और कौन था ?'

पूनमजी का यह मासल रहस्यवाद मेरे खाक समझ मे न आया, मैंने निवेदन किया कि ज़रा खोलकर फरमाइये प्रभुवर !

'सब समझ मे आ जायेगा यार, समझाने और समझ आने की भी एक उम्र होती है समझे, लो सिग्रेट पियो ।'

'थैंक्स' मैं शौक नही करता'

'अमाँ यार कैसे युनिवर्सिटी स्टूडेन्ट हो, देखो न डा० रामकुमार वर्मा के बेहतरीन हास्य एकाकी तो धुयें के छल्लो का जाम पीने-पिलाने के बीच ही पढने मे एक लाजवाब लज्ज़त देते है और हाँ उनका वह गीत जो किसी ज़माने मे मेरी बीमार रातो का मसीहा बना रहा है ।

'कौन सा गीत पूनम जी ?'

'अरे वही : मैं तुम्हारी मौन करुणा का सहारा चाहता हूँ ।

आह, वाह, कितनी खूबी के साथ विराट परिकल्पना के माध्यम से कवि ने अपने असीम के प्रति एक आर्द्र सजल अन्तस्तलबेधिनी दृष्टि का सीमान्त उभारा है ?'

'हाँ पूनम जी, अब जरा अपनी वीरान उम्मीदो की जाने-बहार सुलोचना जी के बारे मे भी कुछ बताइये, जानना चाहता हूँ ।'

'अरे रुक यार, सुलोचना, आलोचना, इन सबसे तो मैं अब तग आ गया हूँ । सच, सल्लो के लिए स्वयं की बूँद-बूँद अर्पित करते हुये निचुड़ गया हू भाई ! कहाँ से लाऊँ अब वह अमृतत्त्व : क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया । आह रे चक्रवाक मिथुन ! बन्धु ! जानते हो न, मात्र खनक पर तो साहित्य-साधना चलती नहीं । इस मधुमती

भूमिका के लिए तो घनघोर साधना करनी पड़ती है उरोजों के उन्मद काठिन्य सी, तभी न पर्वतीय वज्र कारा को फोड़कर सृजन की पयस्विनी उमड़ पड़ती है।

अच्छा तो मित्र सुनो, बोर तो नही हो रहे, मेरी सुलोचना जी का निवास स्थान मैरिनड्राइव पर है, वही उन्होने एक कमरे मे रहने की सुविधा मुझे दे दी है, हिन्दी पढने का उन्हे बेहद चाव है, कुछ परीक्षायें भी दे रही हैं, मै उन्हे साहित्य पढाता हू। तीन सौ देती है। खाने-पीने और रहने की सुविधा तो है ही। और भी अनेक सुविधायें है, सब धीरे-धीरे समझ जाओगे। उन्होने ही मेरे लिए एक सिने-मैगजीन निकलवाई है मैगनीज की कमाई मैगजीन मे। देखा, कितना बलिष्ठ विरोधाभास है? 'रूपशिखा' दस हजार छपती है, प्रत्येक अंक मे उनकी कोई न कोई नई रचना नये चित्र के साथ दस हजार हाथो मे पहुँचती है। बडे लोगो के बडे चोचले भी बड़े अजीब होते है न?

हाय रे, मानसर की दुग्ध-धवल हंसिनी सी, सुगंधियों-सताई सुलोचना जी की पालसन-पोसी सलोनी देह।'

'क्या? क्या?? पूनम जी!'

'यह प्राइवेट मामला है भाई, डोन्ट डिस्कस। हाँ, तो तुम कहाँ रहते हो यहा?'

'यही पास मे, महज एक दो फर्लाङ्ग दूर।'

'तो चलूँ?'

'चलिये।'

कलाकार जी ने बड़े कृतज्ञित नेत्रो से मुझे निहारा। और मय साज-सामान के आध घण्टे के अंदर-अंदर मंहगा होटल छोड एक मुड़ियाये मित्र के मुफ्तो मेहमान बनकर घर पर आ सर पर सवार हो गए। रात खा पीकर जब खुली छत पर हमलोग लेटे तो तकिये को तोड-मोड़कर उस पर इतमीनान से टिकते हुये रस ले लेकर बड़े नाटकीय अंदाज मे अपने विगत जीवन के सस्मरण सुनाने लगे। बकौल उनके

ये संस्मरण किताबी या काल्पनिक नही वरन् बूँद-बूँद जीवन जीकर तिल-तिल दर्द को भोगते हुए उनकी सुखद सिहरनमयी घडियो के नायाब तोहफे हैं ।

'सुनो डियर !'

'सुनाइये'

'यार तुम तो शब्दों तक मे कंजूसी करते हो, बहुत स्वस्थ लक्षण नही है चिरजीव, खूब बोला करो, बिना सोचे समझे बोला करो, आजकल कनस्तर पीट-पीट कर अपनी बात दूसरों के कान में डालने से ही काम चलता है और तभी लोग कुछ तवज्जह देते है । ख़ैर, अभी नही, घाटी के नीचे आने पर अपने आप समझ जाओगे !'

'हाँ पूनमजी, अभी आप क्या सुनाने जा रहे थे ?'

'जा कहाँ रहा हूँ यार, अभी तो होटल से आ रहा हूँ । तुम लोग वाक्य रचना तक मे अंग्रेजी से अछूते नही रह पाते, वैसे आजकल की कलकतिया हिन्दी के एक एक वाक्य मे सत्तर फीसदी अंग्रेजी शब्दो के प्रयोग का प्रचलन बतौर फैशन या अधिक मॉर्डन बनने के लिहाज से धडल्ले के साथ होने लगा है, देखो ख़ुद सावधान रहने पर भी मैं नही बच सका : मुई मुँह ही ऐसी लग गई है ।'

'अच्छा जल्दी सुनाइये पूनमजी, मुझे नीद आ रही है ।'

'बन्धु ! नीद न आने की ही तो गोलियाँ तुम्हे खिलाने जा रहा हू, खानगी ख़्वाबों की गोलियाँ, जामुनी रंग वाली धूप छाँह की गुलाबी पखुरियाँ, हिरनी के नुकीले सीग और चुम्बनो की चौखट पर चहकने वाले गदराये-पपड़ाये होठ ।

'मित्र ! अगर ऐसे ही पहेलियाँ बुझाना हो तो यह बकवास बंद करो और मुझे सोने दो !'

'अच्छा जाओ, मेरा फोलियो उठा लाओ, मैं तो तुम्हारी तिश्नगी को सप्तम स्वर पर चढ़ा रहा था तभी न आबेज़मज़म का रूहानी लुत्फ हासिल होगा ।

'..........................'

'यह क्या मज़ाक है ? आप से मुझे ऐसी उम्मीद नहीं थी ।'

'उम्मीद सुम्मीद को मारो गोली और इधर नज्जारा करो, पूरे सौ रुपये खर्च किये है मैने इन्हे हासिल करने मे : सैर कर दुनियाँ की ग़ालिब (?) जिंदगानी फिर कहाँ ?'

'लेकिन पूनमजी ये न्यूड्स ? आखिर शर्म की भी एक हद होती है ।'

'यार हो तुम निरे बगडुम, किस महापुरुष की जीवनी पढ रहे हो आजकल ?'

चचा ने कितना दुरुस्त फर्माया है कि : हमको मालूम है जन्नत का हकीकत लेकिन·· ···· ····तो क्यो नही प्यारे मुफ्त मे हाथ आये जन्नत का जल्वा देखता, देख ये रहे रूबी के वी-कट वाली फ्राक की फुनगी पर के दो दहकते छतनार गुलाब । और ये नसीम की काजली उबटन से निखरी निखरी गम्माज आँखे, तराशा हुआ बदन और उफ़ रे, ये कश्मीरी नाशपातियाँ।'

'अच्छा अब यह सब बन्द कीजिए श्रीमान् !'

'जो आज्ञा गुरुदेव !'

तीन दिन तक वे मेरे साथ रहे । एक दिन तो रात को बारह बजे लौटे, सफाई दी, ज़रा 'अनारकली' देखने चला गया था, तुम्हारी कमी बेहद खली यार और उसी वेशभूषा मे बिस्तर पर धराशायी होकर हिचकियो के साथ रात भर 'अनारकली' का मशहूर गीत गाते रहे ।

तीन दिन तक मैं उनके स्वभाव के विस्तृत भूगोल के भारतवर्ष मे भटकता रहा, अवाक्, हतमूढ़ : बड़ी-बड़ी अतलान्तक गहराइयाँ, हिमगिरि की उत्तुंग चोटियाँ, विंध्य के सघन कान्तार, गंगा-यमुना के द्वाबे के उर्वर कछार। खजुराहो, अजन्ता और एलोरा और साँची के स्तूप और कन्याकुमारी की अंतिम चट्टान पर का सजल सूर्यास्त । तीन दिन तक उनके छरहरे जिस्म की ज्योमेट्री

इलाहाबाद की समानातर सडको पर त्रिकोण और षट्कोण खीचती रही। सीधी पड़ी रेखाओ पर बहकते कदमो के लम्ब थिरकते रहे, घेरे फैलते सिमटते रहे और प्रमेय-उपमेय की समस्याएँ हल होती रही। महराज ने मेज पर चाय और मठरियाँ रखी नही कि गायब कलाकार सदेह उपस्थित, खाने की थाली परोसी गई नही कि छिगुनी पर फोलियो को झुलाते हुए पूनम जी द्वार पर विद्यमान। उनके रहस्यमय स्वभाव की भाँति उनका फोलियो भी उनके आकर्षक व्यक्तित्व का एक अटूट अंग था। उसमें झाँकने की इच्छा तो जगती थी लेकिन मन मार कर रह जाना पडता था। अंदाजा लगाता 'रूपशिखा' के अगले अंक की सामग्री होगी। कलाकार का अपना लेटर पैड, परिचय कार्ड, चिट्ठी-पत्री और एकाध छोटी मोटी किताबें होगी और थी भी। 'रूपशिखा' के सम्पादक ने बताया कि तीन दिन की घनघोर मेहनत से उन्होने अपनी पत्रिका के लिए थोड़ी बहुत सामग्री बटोर ली है। प्रयाग के एक दो प्रतिष्ठित साहित्यकारो से 'ए ग्रेड' पेमेण्ट करने की शर्त पर उनकी अप्रकाशित रचनाएँ प्राप्त कर ली है लेकिन अधिकाश प्रतिष्ठित तथाकथित साहित्यकार 'रूपशिखा' को देखकर बिचक गये और सहयोग देने से इकार कर दिया। भाड मे जायें, भारतवर्ष मे लिखने वालो की कमी है क्या ? पढने वालो से लिखने वाले ज्यादा हैं, तभी न सत्यं शिवं सुन्दरम् का सपना देखने वाली पत्रिकायें अपनी सालगिरह तक नही मना पाती। 'रँगीला काजल' और 'बहकते आँचल' को छापने वाले अँगूठा छाप देखते-देखते फुटपाथ से उठकर कारों और कोठियों के मालिक बन बैठते हैं और बेकार चिंतन का नवनीत आने पाई टके सेर गुदड़ी बाजारों में बेभाव बिकता है, जितना चाहो खरीद लो, अख़बार की रद्दी से भी कम दाम में अठन्नी सेर।

जैसे कसाई खुले आम चिक की आड़ में बकरे के दस्त की कसावट, रान, सीना, गुर्दा और कलेजी की क़ुव्वत बेंचता है,

वैसे ही ये लो शरद का सीना, रवीन्द्र की रान, प्रेमचन्द की पसलियाँ, ग़ालिब का गुर्दा, खलील जिब्रान/ की खाल और निराला के पहाड़ जैसे हाड़। स्थायी साहित्य वाली पुस्तकें शेल्फ पर रखे रखे ऐसी बदरंग और फीकी पड़ जाती है जैसे बेकारी की शिकार उच्चशिक्षिता कन्याएँ दहेज के अभाव में वर न मिलने पर अपने राजा की आने वाली बारात की रँगीली रात के सपने देखती-देखती, मुँहबोले भाइयों के लिए स्वीटर्स बुनती-बुनती, फलवती भाभियों के ताने सुनती-सुनती और लल्लू और टिम्मू और पप्पू को खिलाती-खिलाती वक्त के पहले ही ढल जाती है।

देखिये न मेरी रूपशिखा, अय हय, रूप की शिखा हर पहली को दस हजार छपती है और पन्द्रह तारीख तक ह्वीलर्स और बुकस्टालों से फुर्र लेकिन ये कवि जी, ये लेखक जी, अपने आप को तीसमार खाँ समझने वाले नट नौटंकीबाज लटकेधारी चंडूल, पहले सीधे सादे इसान तो बनें फिर नई रौशनी देने की मसीहाई का दावा करेंगे। फटे पायचे वाले पायजामा और थिगलियो वाले कुरते के ऊपर सदरी पहने घूमेंगे लेकिन लिखेंगे स्थायी साहित्य। एक कप चाय या काँफी के लिए घटो बहस करते-करते साहित्य जगत् के नये वातायन खोलेंगे लेकिन सियेंगे स्थायी साहित्य। बीवी की हल्दी-प्याज के दागो से चितकबरी हैंडलूम की मीटी साडी चाहे तार तार हो जाय, म्युनिसपैल्टी स्कूल मे पढने का बहाना लेकर रास्ते मे रुककर दुग्घाडा तिग्घाडा की आवाज बुलद करने वाले लाडले का चाहे नाम कट जाय, चार महीने का किराया न देने पर मकान मालिक बिजली का कनेक्शन काट दे और आगे जल-कल विभाग की सुविधाओ से भी वचित कर देने की पूर्व सूचना दे दे लेकिन ये चिरंजीव दुहैंगे स्थायी साहित्य।

अब तो मैं सीरियसली सोचता हूँ भाई कि सिर्फ अनछपी कवयित्रियों और लेखिकाओं को ही छापूँ। साहित्य की पुनीत यज्ञवेदी मे उन जरठ-

जटिल शीर्ष-होमी समिधाओ का क्या काम ? गोल सुडौल गदकारी कलाइयो वाली केसरिया हथेलियो की भाप से सीझी संकल्पो की अगुरु-धूप को अंगीकार करते हुए तृप्त तुष्ट अग्निदेव वसुमित्र। कहिये कैसा आइडिया है ? अनछपी को छापने का सुख, पुण्य का पुण्य फिर पारिश्रमिक भी तो नाम मात्र का देना पडता है। वे तो मात्र छपकर ही सनाथ हो जाती है। स्थायी साहित्यकार के द्वार पर दर्जनो चक्कर लगाने और अग्रिम मुद्रा देने पर भी मिलती है नकचढी ऊबड-खाबड सात पंक्तियाँ, न कोल्ड ड्रिंक, न चाय वाय, पता नही ये अपने आपको क्या समझते है ? किसी लेखिका या कवयित्री के 'कामायनी-कक्ष' पर पधारिये तो बाप रे बाप, वह श्रद्धा, वह आभार, वह नयन सुख भीनी सेवा कि देह तो देह, आत्मा तक के तार झनझना उठते है। बधु ! अब तो तमाम अभाषा-भाषी लेखक-लेखिकाएँ हिन्दी मे लिखने लगी हैं, गुजराती, मराठी, पजाबी, मलयालमी, केरली और हाँ अपनी प्यारी बगभूमि : छन्दे छन्दे नाचि उठे सिन्धु माझे तरगेर दल।'

सौभाग्य या दुर्भाग्य से कलाकार पूनम की इस अपरिचित लच्छेदार वक्तृता को सुनने का यह मेरा प्रथम अवसर था। चिबुक कर उग आई हल्की श्यामलता पर हाथ फेरते हुए बोले—आज एक बहुत जरुरी काम से शिनप्पा रोड तक जाना चाहता हूँ, शेव करने का समय नही, जरा सैलून तक हो लूँ। एक 'जरूरी काम' की जल्दबाजी मे वे अपना एक-लौता फोलियो भूल गये। खूँटी पर टँगा हुआ कलाकार का फोलियो मध्याश्च हीरोइन की रगीन रेशमी सलवार सा हिल रहा था, निहायत दिलकश, रोमाच रचित, दर्पणी मुस्कान सा।

●●●

●●दो ख़त . दो ख़ुशबू

मेरे सपनो के सरताज़ !

कल सारी रात जागकर तुम्हारी कवितायें पढ़ती रही और पढते पढते सो गई। कब नीद आई, पता नही, सुबह जब जगी तो देखा, पास पड़े तुम मुस्करा रहे हो। तुम यानी तुम्हारी चित-चोर तस्वीर। सच, तस्वीर के दबाव से मेरे ख़्वाबों की ख़ामोशी बोझिल होती रही, सारी रात मेरी पलकों पर तुम्हारी साँसों के साये थिरकते रहे। हाय इत्ता अच्छा तुम कैसे लिख लेते हो :- चाँदनी के झोकों से बची खुची बची अगर, भोर की निगाहों से बचके कहाँ जाओगी : बड़े निठुर हो जी तुम ! झूठे !!

तुम्हारे भेजे बीस रुपये और 'रूपशिखा' का एप्रिल अक मिल गया था। तुम्हारे स्पर्श मात्र से मेरी लजीली कविता बन सँवर कर कहाँ से कहाँ पहुँच गई है, इसकी मैंने कभी कल्पना तक न की थी फिर एहसान क्यों स्वीकारूँ तुम्ही ने तो लिखवाई, तुम्ही उसे सुधारो चाहे बिगाड़ो, मुझे क्या ?

आओ जरा क़रीब आओ ! एक ख़ुशखबरी सुनाऊँ, ऐसे नही कान में, कल मम्मी ने तुम्हारी छपी तस्वीर देखी, देर तक न जाने क्या सोचती रही फिर एक ठंडी साँस खीचकर मेरी ओर देखते हुए बोली— बड़ा अच्छा है, होनहार दोखे है।

अच्छा जी, कवि महराज; किस कल्पना निकुंज मे खोये हो, इत्ते सारे वादे किये कि जल्दी ही आऊँगा लेकिन अब तक भी नही आये। बोलो कब आ रहे हो ऽ ? छोडो भी, ढेर सारे काम पड़े है, मम्मी पूज

पर है, केतली मे चाय उफना रही है, अभी फिलासफी के नोट्स भी फेयर करने है, ओ माँ ! साढे नौ ! !

अच्छा विदा मेरे प्यार !

जनम जनम की प्यासी

शकुन्त

फोलियो के दूसरे खाने मे ढेर सारे पत्रो के बीच दबे इस खत की ख़ुशबू न दब सकी। यह खत बडे इतमीनान के साथ निहायत ख़ूबसूरत घुघराली लिखावट मे लिखा गया था। कण्व की शकुन्तला ने दुष्यन्त के लिए कमल पत्र पर जो 'प्रेम पत्र' लिखा था वह धरती का प्रथम अमर गीति काव्य था। 'रूपशिखा' की इस शकुन्तला ने रंगीन लेटरपैड पर बैंगनी स्याही से जो पत्र पूनम के प्रति लिखा था वह प्लेटोनिक प्रेमियों के लिए अतीन्द्रिय सौन्दर्यलोक मे बिचरण करने की एक अद्भुत उत्तेजना जगा रहा था। ख़त मे भरपूर फूले बेले की सी भीनी-भीनी महक लहरियोदार अँगडाई ले रही थी और उसके ऊपरी सिरे पर इलाहाबाद का नाम टँका हुआ था। देश के विभिन्न अचलो से लिखे गये महिला पाठिकाओ के अनेक पत्र तो थे ही लेकिन उनमे वह रस गुम्फित गार्हस्थिक लावण्यशीलता न थी जो समर्पिता शकुन्तला की सोंधी साँसो से छलक रही थी। अन्य मर्यादाशील महिलाओं (?) ने बडे तटस्थ भाव से अपनी अभिनव फिल्मी जानकारी का परिचय देते हुए दाम्पत्य जीवन के गोपन रहस्यो को सुलझाने के लिए सम्पादक जी का सहयोग चाहा था। मिथिलेश नंदिनी के देश की तथाकथित कन्याओ ने विद्यापति की भावना को शमशाद बेगम की ट्यून में प्रस्तुत कर जो उत्तप्त मासलता अपने पत्रो मे पिरोई थी उसको पढकर खुद अपनी आँखो पर मुझे विश्वास न रहा। कैशोरिक प्रणय मे डुबकियाँ लगाने वाले कालेजीय छोकरो के 'लेटर्स' कुछ भिन्न प्रकार के थे, उनमे धरती की धड़कन कम, वायवी रंगो का इद्रजाल अधिक था। इन सारे पत्रों से सवथा भिन्न सादे कागज पर काली स्याही के नरकुल की मोटी

कलम से अशुद्धियो भरी एक तुडी-मुडी बैरग चिट्ठी भी थी जो ग्राम सीतापुर, जिला बाँदा से उसके काका रामबिसाल सिंह द्वारा पूरन सिंह बम्बई वाले के पते पर लिखी गई थी। इस चिट्ठी में बरसात के पहले दौंगरे की सी उमस थी साथ ही पूस-माघ की ठिठुरन। जो चीथड़ों को चुमकारते हुये भी मज्जा तक को कँपा देता है। ढिबरी की टिमटिमाती मंद ज्योति में अटक-अटक कर पढ़ी गई रामायण की सी अगाध आस्तिकता, आस्था और पवित्रता इस ग्राम्यलिपि में पिरोई हुई थी। तुलसी चौरे की सुरभि स्नात मंद गमक, हीरा-मोती के हौदों की वह खली-भूसे की वनस्पति वास और माँ के खुरदरे हाथों की हरारत, बहन की राखी का रोमांच तथा पास-पड़ोसियों की अनासक्त निश्छल हितचिन्ता सब कुछ इसमें समाई हुई थी।

सिद्धि श्री सर्वोपमा जोग लीषा गाँव सीतापुर जिला बादा से बम्बई निवासी दादू पूरनसिंह को काका रामबिसाल सिंह की ओर से आशीरवाद पहुँचे। यहाँ घर-गाँव मे सब कुशल मगल है, तुम्हारी कुशलता श्री कामता नाथ से सदा नेक चाहते हैं। आगे समाचार यह है कि तुम्हारी चीट्ठी मीली, जी जुडा गया। तुम्हारी छापी पोथी भी आई, पोथी मे तुम्हारी भहर-भहर करती फोट्ट को देखकर तुम्हारा छोटा भाई और तुम्हारी काकी कुलक गई। दुपहर तक घर गाँव में घूम घूम सब खाँ दिखावत फिरी। बेटा! जब से बड़े भइया और भौजी गई और हाय हमार चिरइया फुलमतिया, तब से तुम्हरे दरसनन का सारा गाँव तरस गवा। कवहूँ तौ एक दुइ दिन का आ जाव। हम जानित है कि तुम इत्ती दूर बम्बई विलायत माँ रहत हौ, चार बीसी कलदार चाही एक रूपा के आवैं बरे, तबौं गाँव-गोइठ कै ममता तो भइया गुहरावति होबै करी। हो भइया, छोट लरकवा मिडिल पास हुई गवा है कौनो छोट मोट नउकरी माँ लगुवाय देव। तुम तौ पूरे इसपिट्टर होइ गये हौ, पोथिन माँ तुम्हार नाम छपत है, फोट्ट से पहिचाने

नही जाते हौ पर हमरे खातिर तुम तौ वई पुरनवाँ हौ भइया, जौन हमरे पीछे-पीछे खेत खलिहान जात रहा। होरा उखार कै हम झरबेरी के काँटन से भूँजत रहे और खात खात कलमुहाँ बन जात रहे। बेटा ऊ दिन कहाँ गे, अब तौ कौनो तरह से माटी ढोइत है, हिरवा खूँटा सून करि कै चला गा, गोहूँ चना कै खडी फसल माँ पाथर पड गा, सिगरे गाँव माँ हाय हाय मची है अब तौ भगुवानै मालिक है। तुम जहाँ रहौ भगुवान स अरदास है नीकी तरा रहौ। काकी कै असीस, गाँव भर कै राम राम और रमचन्ना कै चरन छुवन। काका रामबिसाल सिंह, मौजा सीतापुर, डाकखाना चित्रकूट, जिला बाँदा। ●●●

●●अनास्वादित अनावृत

शिनप्पा रोड। २१० ए, बी, २१२···।

हाँ यही कही होना चाहिए···

बस, रिक्शेवाले जरा-सा आगे और। शायद वही है वह बिजली का खभा और कनेर का पेड··· ··हाँ······यह मकान भी लाल ईटो का है। ···बस यही रोक दो।

लाल मकान के दरवाजे पर हल्की दस्तक।

कौ ऽ ऽ न·· है ऽ ···ऽएक थकी टूटी आवाज आई।

'जी, मैं···, क्या शकुन्तला जी यही रहती हैं?'

'हाँ ऽ ऽ, कहाँ से आये हो बेटा, आओ आओ!'

'जी माँ जी, बम्बई से आया हूँ, नाम है पूनम, वहाँ एक पत्रिका निकालता हूँ।'

'अच्छा, तो शकुन तुम्हारा ही जिक्र करै रही थी उस दिन। तुम्हारी तस्वीर भी दिखाई थी, बेटा अब बुढापे में कम दीखे है, पगली तो तुम्हारो चर्चा करते कभी थके नही, पढने गई है, आती होगी।'

दुबली-पतली पचास वर्षीया गौर वर्ण की सभ्रात महिला जिसके चेहरे पर मीरा के पदो की सी अगाध भक्तिविह्वल व्यग्रता और अगुरुवर्ती सी तिल-तिल सुलगने वाली कसक स्पष्ट उभरो हुई थी, पूनम के सामने बैठी हुई थी। फर्श पर जो मोटा कालीन बिछा हुआ था उसके चटकीले फूल अब मुरझाकर बिखर रहे थे। एक ओर कोने मे पीतल के सिंहासन पर पूजा की विविध सामग्रियों से घिरे ठाकुर जी विराजमान थे, कुछ दूर पर निवाडी पलँग पड़ा था जिस पर एक धुला पलँग पोश बिछा हुआ था, दूसरे कोने पर एक बडा सा सितार रखा था, पास ही अस्त-व्यस्त से घुघरू पडे थे। उखड़ी-उखड़ी सी अल्मारी के ऊपरी खानो मे कॉकरी सजी हुई थी, काँच के मर्तबान मे नमकीन काजू झलक रहे थे, बीच के खाने मे किताबें कापियाँ लापरवाही से पड़ी थी और सबसे नीचे के खाने मे कुछ पुराने अखबार और पत्रिकायें रखी थी। कालीन पर जो सोफा पीस पड़ा था उस पर मटमैले मखमली खोल चढ़े थे, रेडियो के ऊपर नृत्य की भावभगिमा मे एक जापानी गुडिया थिरक रही थी। कमरे की शालीन सजावट मे सुरुचि और पिछले वैभव की अवशिष्ट छाप थी। दीवाल मे टगे प्रकृति के मनमोहक हरीतिमा मंडित दृश्यो का चयन बड़ा ही सुघड था। त्रावणकोर की दो रूपवती बहनो का दुचश्मी आँखो वाला मादक कैलेंडर अवश्य वातावरण को अतिरिक्त ख़ुमारी से भरकर बहका रहा था।

'बेटा कब आये, सामान कहाँ है?'

'परसो आया था माँ जी, चौक मे एक दोस्त के यहाँ ठहरा हूँ। सोचा आपके दर्शन करता चलूँ। बरसो से सोच रहा था, आज अभिलाषा पूरी हुई।'

'बडा अच्छा किया बेटा चले आये। अब तो एक ही फिक्र है कि किसी तरह शकुन अपने घर द्वार चली जाय, मेरा क्या यही संगम तट पर या काशी मे.........। इस साल उसका बी० ए० हो जायगा। संगीत की भी साथ साथ कोई परीक्षा दे रही है। बहुत मेहनत करती

है मेरी बेटी। हाय बेचारी को कुछ भी तो न सुख दे सकी मैं, जब सात आठ की थी उसके पिता हमे अनाथ बनाकर चले गये। दस हजार का बीमा था, और कुछ पुस्तैनी जायदाद, उसीके सहारे अब तक किसी तरह से नैया खे रही हूँ अब तो बेटा पार ही लग गई है, थोडी बाकी है, वह भी ठिकाने लग जायगी। छलछलाती आँखो को कुजिका-गुच्छ के बोझिल छोर से पोछते हुए माँ जी बोली—अब तक तो देखरेख के लिए शकुन के मामा थे, वह भी पिछली गर्मियो मे हम अभागो का साथ छोडकर गोलोकवासी हो गये। पुरुष का आसरा ही बडा होता है बेटा, हमलोगो के लिए। उन्ही के आसरे तो मिदनापुर से यहाँ तक चली आई थी बेटा, बँगला कालेज मे संगीत सिखाते थे। सगीत के पीछे इतने पागल हो जाते कि खाने पीने की भी याद भुला बैठे। लाख समझाकर हार गई कि भइया, घर गिरस्ती बसा लो, मेरे फणि दा खीझ कर कहते—ना बाबा ! ई काम हाँमरा शे नाही होयगा, बच्चा लोगन के चिल्लपोशे हामरा सोरठ विहाग का रागिनी रूठ जायगा, ना, बाबा ना।

'देख तो बेटा, इत्ती दूर से तू आया और मैंने एक गिलास पानी को भी नही पूछा, कहेगा न रे कि माँ जी अपना ही ताना-बाना गूँथने बैठ गईं। तू बैठ, मैं तेरे लिए चाय बना लूँ। पता नहीं क्यो शकुन अब तक नही आई ?'

'बाजिलो काहार वीणा मधुर स्वरे, आमार निभृत नव-जीवन परे' की थरथराती तरंग के साथ मन्द पदचाप सुनाई दी। भृंगौल का एक सरल मादक झोका झूमता हुआ आगे-आगे आया। शकुन्तला अरुण पगतलियो मे रेणु रजित स्लीपरो को कमरे के बाहर झाड़ती हुई खेल-कूदकर आई लाड़ली कन्या सी अंदर प्रविष्ट हुई और अपनी ही धुन में खोई तीर की तरह मम्मी मम्मी पुकारती बिना पूनम की ओर ध्यान दिये हुये आँगन मे चली गई।

'मम्मी, मेरी प्यारी मम्मी, लो मैं आ गई, हाय मम्मी तू क्यों परेशान हो रही है, बना लूँगी न मैं चाय।'

'अभी-अभी तो तू थककर आई है और फिर चाय बनाये, दिन भर बैठी ही तो रहती हूँ, हाँ अपने सम्पादक जी से मिली तू, वही बम्बई वाले।'

'क्या ऽऽ माँ ऽऽ!'

'हाँ, हाँ वही जिनकी चिट्ठियो की तू चर्चा किया करती थी, देखा नही बैठक मे?'

'कहाँ माँ ?'

'अरे पगली तनिक रुक, ले चाय ले जा, हाँ नमकीन काजू भी निकाल लेना, चल चिप्स लेकर मैं आ रही हूँ।'

'न म स्ते, जी क्षमा कीजियेगा मैंने आपको देखा नही, बाहर से सीधे अदर चली गई। कहेगे न आप बडी अन–कल्चर्ड है।'

'अरे रे···शकुन्त जी इसमें क्षमा माँगने की क्या जरूरत है ! आप रवीन्द्र-संगीत मे डूबी-डूबी सी झटके से निकल गई मैं सच कहूँ, थोड़ी देर को खुद सकपका गया था।'

शब्दों की बिखरी लड़ियों को समेटते हुए कलाकार ने जैसे समकोण से अपनी दृष्टि ऊपर उठाई, शकुन्त की श्यामल कोयो वाली बड़री लजवन्ती अँखियो से आँखें टकरा गई। मुलेठी रंग के तग सलवार के साथ बैंगनी रग का चुस्त कुर्ता और उसपर लापरवाही से पड़ा हुआ धानी रंग का दुपट्टा लहरा गया। माथे पर धुँधलाये टीके पर छाया किये हुए एक बारीक बेचैन अलक, दुपट्टे से छन-छनकर आ रहा कसे हुए उरोजों का उभार और दिन भर की थकान से कुछ कुछ स्वेदिल पिघला हुआ मेक-अप। वह सिमट कर सोफे पर एक ओर बैठ गई। औपचारिकता के कारण वातावरण में थोडा सा तनाव आ गया था लेकिन कलाकार

के उन्मुक्त घरेलू अपनापे ने बहुत जल्दी ही उसमे सन्तुलन ला दिया। माँ चिप्स लेकर आ गई।

'देखिये माँ जी? मुझे चाय पीनी है और ये पिला रही हैं अपनी कविता की बासी पंखुरियाँ! माँ! चिप्स देना इधर!'

'अरे रे, कैसी मेहमान बनी बैठी है। ढाल न चाय, अभी काजू भी नही निकाले?'

कलाकार फूँक-फूँककर चाय पीने लगे। माँ जी की विशुद्ध व्यावहारिक सूझ बूझ ने अज्ञातकुलशील कलाकार के नाम-ग्राम की कामचलाऊ जानकारी परोक्ष रूप से धीरे-धीरे प्राप्त कर ली। पता चला कि पूनम भी शकुन्त की सी किस्मत लेकर पैदा हुआ है। माता-पिता दोनों के वात्सल्य से वंचित, हतभाग्य। संरक्षक के नाम पर एक मात्र चाचा-चाची ही शेष है जो विपत्ति मे संरक्षण देने वाली पवित्र तपोभूमि चित्रकूट में निवास करते है लेकिन पूनम का वहाँ जाना अब बहुत कम होता है। पिछले पाँच छः साल से वह चित्रकूट की चदनवर्णी रेणु को अपने माथे पर तिलकित करने के लिए तरस-तरस कर रह गया है। एक तो दूर होने के कारण और दूसरे कार्याधिक्य के कारण अब उसका वहाँ चाह कर भी जाना नही होता। बातो मे रस न मिलने के कारण शकुन्त अनमनी सी अपनी अधर पंखुरियो पर जीभ फिराते हुये उठकर चल दी और दूसरे कमरे मे जाकर एँगिल्स से पूनम की ओर देखती हुई ओझल हो गई।

'कितनी नासमझ है, बीसवें में पहुंच गई है और इसे इतनी भी समझ नही कि घर आये मेहमान के साथ कैसे व्यवहार किया जाता है?'

अपने को मेहमान न मनवाते हुये और भी अधिक आत्मीय बनने की सफाई देने के लिए पूनम के होठो मे आये स्फुरण को अवकाश न देते हुये माँ जी बोलती चली गई। 'बेटा! एक यही बोझ छाती पर रखा हुआ है। सोचती हूँ किसी तरह अगले जाड़े तक इसकी शादी कर

दूँ। तुम्हारी नज़र मे है कोई इसके लिए उपयुक्त लडका, तुम तो इधर उधर आते जाते रहते हो, अच्छा खाता पीता घर होना चाहिये। कम से कम एम० ए० तो हो ही, अपनी ही जाति गोत्र का हो तो बडा अच्छा हो। वैसे मेरी शकुन्त तो जाँतपात मानती नही लेकिन बेटा हम इतने आगे जाकर नही सोच पाती फिर भी मैं इस बखेड़े मे नही पड़ूँगी, इसमें शकुन की ही इच्छा सब कुछ है। अपना भला बुरा वह अच्छी तरह समझती है। मैं कभी भी ऐसा कोई काम नही करूँगी कि जिससे मेरी शकुन्त का दिल दुखे। कोई हो तो बताना बेटा!

पूनम भाव-विभोर होकर माँ जी की आधुनिकता की कसौटी पर कसी दुनियाँदारी सुनता रहा और मन ही मन उनके संतुलित विवेक की सराहना करता रहा। कुछ देर बैठने के बाद वह सहसा उठ खड़ा हुआ और माँ जी से जाने की आज्ञा माँगने लगा।

'कब जा रहे हो बेटा बम्बई? जाने के पूर्व एक बार अवश्य आ जाना, और हाँ कल रविवार है न, शकुन्त की भी छुट्टी रहेगी, दोपहर का खाना यहीं खाओ न।'

'माँ जी! यह तो घर की बात है फिर कभी आने पर यहीं रुकूँगा, इस बार तो जल्दी लौट जाना है'—पूनम सीधी सादी निश्छल माँ पर बम्बइयाँ टेकनिक का प्रयोग कर ही रहा था कि शकुन्त सहसा अल्हड़ गति से आ गई।

'हाँ मम्मी! ये तो बहुत बड़े आदमी है। 'रूपशिखा' के सम्पादक जी, इनका तो 'ताज' या 'ग्रीन' मे लंच-डिनर होता होगा। ये भला विदुर का साग-पात क्यो खाने लगे और इतना कहकर एक व्यंग्ययुक्त शरारत भरी हँसी हँसकर सोफे पर धँस गई।

शकुन्त के वाणो से आहत पूनम को दूसरे दिन खाने के लिए आना ही पडा। इसी बीच सुलोचना द्वारा तार से भेजे गये सौ रुपये और 'जल्दी आइये' का आदेश भी आ गया। पूनम शकुन्त के लिए मॉर्टन की टॉफी का एक डिब्बा और माँ जी के लिए कल्याण का 'तीर्थांक'

लेता गया। सहज प्रसन्नता से पुलकित माँ जी पूनम के विवेक-कौशल को सराहना करती हुई 'तीर्थांक' को पूजा स्थल पर रखकर रसोईं-घर मे चली गईं। चाकलेट सी घुलने वाली शकुन्त को टॉफी का डिब्बा समर्पित करते समय कलाकार का सधा हाथ उसकी छिगुनी से छू गया। इस सहज स्पर्श मे पूनम को सोंधे-सोधे मिठास की कुछ वैसी ही अनास्वादित अनुभूति हुई जैसे नये बाजरे की गर्म-गर्म रोटी पर पिघलती मक्खन की टिकिया रखने से होता है और मात्र सुरभि-स्वाद से ही पूर्ण तृप्ति हो जाती है। भोगने और खाने की क्रिया तो जैसे सूक्ष्म स्तरों से उतरकर स्थूल कोशों की मासलता से रस खीचना है। वीणा को गोद में लेकर उसको झंकृत करना, पीड़ित करना, सताना ही तो मांसलता से मैत्री स्थापित करना है लेकिन उससे निकलनेवाली झंकार, सप्तम स्वर तरंगिमा और उस अनहद्नाद की तुरीयातीत उपलब्धि योगियों के लिए भी एक दुर्लभ वस्तु है।

'शकुन्त जी! कोई फडकती हुई चीज दे रही है इस अंक के लिए, सामग्री लगभग तैयार ही है, बस जाकर एक बार अरेंज करके छपने को दे देना है।'

'जी नही, मेरे पास कोई फडकती-वड़कती चीज नही है, आप अपनी सुलोचना जी, खंजना जी, रंजना जी से लीजिए न जाकर, मैं तो अब गीताप्रेस की भक्तचरितावली पढ़ूंगी और 'कल्याण' में लिखूंगी।'

''देखिये शकुन्तजी! आप मुझ पर ऐसी प्रीति-पगी वाणी का प्रयोग करके यो निष्ठुर अत्याचार न कीजिए। मैं विवश था और हूँ। आश्वासन मैंने अवश्य आपकी कहानी जल्दी ही छापने का दे दिया था लेकिन पिछली कहानियां इतनी अधिक थी कि उनको प्रकाशित करना आवश्यक था फिर सुलोचना जी ही तो उसकी सर्वेसर्वा............'

'तो मैं कब आप से कह रही हूँ। मैंने तो अपनी विवशता और सीमा-सामर्थ्य की बात श्रीमान् सम्पादकजी 'रूपशिखा' से निवेदित की।'

पूनम फ़ैज़ की 'चन्द रोज़ और मेरी जान ! फकत चन्द ही रोज़' के तरन्नुम को गद्यान्वित करने की सोच ही रहा था कि माँ जो का वात्सल्य सिक्त-स्वर तैरता हुआ आया : 'अरे क्या काँव काँव मचा रखीहै तुम दोनो ने,' चलो बेटा थाली सजाओ !'

'आई मम्मी आई' कहती मेमने की तरह फुदकती शकुन्त रसोई की ओर दौड़ी।

डाईनिंग टेबुल का काम देने वाले तख्त पर पूनम के लिए करीने से खाना लगा दिया गया—पूड़ियाँ, पापड, राइता, सब्जी और सलाद, साथ मे कुछ रसीले फल। अपनी आतिथेय शकुन्त की भाव-भीनी मनुहारो से पूनम आवश्यकता मे कुछ अधिक खा गया अतः वह सारे के सारे फल छोडकर उठ बैठाऔर हाथ-मुँह धोकर विना रुके सोफे पर जाकर पसर गया।

'अरे रे ! इतने अच्छे मीठे फल आपने अनास्वादित ही छोड दिये' —कविता मे शकुन्त कुहकी।

'अनासक्त भाव से भोग करनेवाले के लिए तो सारा ससार ही निस्सार है शकुन्त जी ! यदि आपके ही सन्दर्भ मे कहने की अनुमति मिले तो कहना चाहूँगा—'गंध, रूप, रस, शब्द, स्पर्श सब का आज एक साथ भोग करते हुये भी सबसे परे, एकदम निर्लिप्त, 'पानी बिच मीन पियासी' की सी स्थिति में। मित्र ! प्रेम को तो मैं एक पूजा के रूप में स्वीकार करता हूँ। बन्धु ! यदि अर्चना की अगुरु-गंध जीवन में रच बस जाय तो फिर अतिरिक्त कुछ न चाहिये। कैश ने उसी आत्मानद—बजाता है मजनूँ सितारे मुहब्बत, कि महफिल मे लैला गजल गा रही है—की दुर्लभ रसवन्ती का ही तो पान किया था। फरहाद ने पत्थर की छाती चीर कर दूध की धारा बहा दी थी किसके लिए : कि मुश्ते खाक मे कोई बताओ कोहकन क्यो हो ?' अरे शीरी तो मुई मुट्ठी भर मिट्टी थी, कोई भला मिट्टी पर अपनी प्यारी जान छिडकता है। ना, तुम्ही थी मेरी अनन्त यौवना

उर्वशी हृदयेश्वरी ! मुक्तकेशि अनन्त रागिनी ! मूर्तिमती उषा ! अनादि कौमार्यव्रता !! तुम्हारे यौवन-सभार के छंद-छंद से हृदय-सिन्धु में ज्वार उठने लगता है, माथे की सिकुडन मानस-मंथन की पीडा को सुरीले छन्दो मे व्यक्त कर देती है। माथे पर चुम्बन का तिलक दिये तुम्हारी वह दिव्य छवि जिस पर मुग्ध होकर 'सबार उपरि मानुष सत्य' का संदेश देने वाले चण्डीदास ने कहा था : हे प्रिये ! तुम्हारे दोनों शीतल चरणों को देखकर मैंने उनकी शरण ली है। तुम्हारा यह रूप किशोरी का रूप है, इसमें काम की गन्ध नही है। तुम्हारे उस रूप को देखे बिना चित्त में उच्चाटन होता रहता है और उसे देखने पर जी जुडा जाता है।

सच्चमुच प्रेम में जो एक अनिर्वचनीय आध्यात्मिक प्रेरणा है उसकी सिद्धि नारी प्रेम से ही सहज सभव है। यह सत्य है कि नारियों की रचनात्मक शक्ति नर को शरीर के धरातल से ऊपर नही उठा पाती फिर भी उस अमृतत्व की प्राप्ति के लिए नारी एक सेतु का काम करती है। सेतुबन्ध को पार करके ही सर्वत्र रमण करने वाले : राम का जनक-नंदिनी जानकी से सम्मिलन होता है। रत्ना के प्रति उद्दाम यौवन की उत्तप्त उसाँसों से उद्वेलित होकर ही तुलसी परम विश्राम देने वाले 'रामचरितमानस' की रचना कर सके है। प्रिया के साथ भोगी गयी कवि की क्षण क्षण की अनाविल भोगासक्ति पुष्पधन्वा के सर-संधान करते समय उन्मुक्त भाव से उफन पडी है : उमंगि सरित अम्बुधि कहँ धाई। संगम करहिं तलाव-तलाई।' और यही काम जब मन और आत्मा के धरातल पर पहुँचता है तो उससे कलाओं का जन्म होता है। नारी का निर्माण वस्तुतः नर की प्रार्थनामयी समाधि से हुआ है और इसी रूप में वह युग-युग से आध्यात्मिक प्रेरणाओ की स्रोतस्विनी रही है। कहा जाता है कि सूफ़ों के सम्राट विधाता ने सुप्त समाधिस्थ नर के हृदय के बाईं ओर की एक छोटी हड्डी निकाल ली और उसी अस्थि तंतु के आधार पर नारी-स्वरूप का निर्माण हुआ। क्या इसीलिए नारी को

देखते ही नर की बाईं ओर को छाती धडकने लगती है और वह विस्थापित व्यग्र हड्डी भी तो नर के वक्ष से चिपटकर फिर वही समा जाना चाहती है। नर-नारी का शारीरिक मिलन प्रेम का प्रथम सोपान है। उसकी सच्ची सार्थकता तन-मन और आत्मा के पूर्ण विलयन मे हैं किन्तु जो इस निचली सतह से ऊपर उठकर ऊर्ध्वरेता बनकर उस उदात्त आत्म-संगीत को सुनते हैं जो दाम्पत्य जीवन की प्रगाढ़ मैत्री से प्रस्फुटित होकर सगीत की स्वप्निल भावधारा के रूप मे छलक पडता है, बज पडता है—वही कामसूत्र, कुमार संभव और कामायनो की रचना करते हैं। सच्चा प्रेम अतीन्द्रिय सौन्दर्यलोक की ओर बढने की प्रेरणा देता हुआ उस आबेहयात को पिलाता है जिसको पीकर फिर कुछ पीने की दरकार नही रह जाती : यल्लब्ध्वा पुमान् सिद्धो भवति, अमृतो भवति, तृप्तो भवति। और यह भी समझती हैं न शकुन्त जी! तृप्ति तृषा की मुँहलगी बहन है, तृप्ति भले ही भुलावे मे डालकर तृषा को बहला दे लेकिन तृषा तृप्त होना कब जानती है। और वे जो तृप्त हो चुके है जिनके प्रणय स्फुलिंग की ज्वलनशीलता शीतलता मे परिणत हो चुकी है उनमें प्रेम की वर्चस्विता प्रकट नही होती। जो अपनी रिक्तता, व्यग्रता और समग्र ज्वलनशीलता मे जीवन भर गीली लकड़ी सा तिल तिल सुलगकर चुकता रहता है वही प्रेम की तीव्रानुभूति को सर्वांग भाव से भोगता है। प्रेम की सच्ची प्रतिमा पर उम्र की धूमिलता नही चढने पाती। वह तो चिरनूतन और अनूठी अनूढा बनकर सदैव हमारे चिरतारुण्य को अनुप्राणित करती रहती है। सच्चा प्रेम किसी प्रकार के प्रतिदान की भी आशा नही करता, वहाँ दो की भी गुञ्जाइश नही : प्रेम गली अति साँकरी। तो ओ मेरी स्वप्निल सगीत! वे जो प्रेम को महज लिपटन की चाय समझकर देह में थोड़ी झुरझुरी लाने के लिए लिपटन की चाय (इच्छा) पैदा करना चाहते हैं और वे भी, जो उसे सस्ती सिग्रेट समझकर एक ही कश में उसकी सारी मस्ती और मादकता खींचकर बेरहमी से

सड़क पर फेंक देना चाहते हैं ताकि वह धू धू कर जलती हुई उस पीड़ा को, उस खिंचाव को धुएँ की लकीरों में रूपातंरित करके दर्द को दुहराती रहे, उनके सतही सौंदर्यबोध की ग्राम्य-प्रक्रिया पर मुझे तरस आता है और और............'

'बस बस, वात्स्यायन जी ! अपना यह सव्याख्या कविता पाठ समाप्त कीजिए। मुझे भूख लगी है और आप अपनी भूख को तृप्त कर भूलभुलैयो की हरी घाटियों मे खोये हुये है, आध्यात्मिक भूख की तृप्ति के उपाय ढूंढने मे। कवि जी ! यह भी कितना लाडला मजाक है कि पेट भरा होने पर ही अध्यात्म की, कला की, रगो की और गन्धो की भूख जगती है। याद नही, कहाँ पढ़ा था कि एक बार जब मिस्र मे दुर्भिक्ष पडा था तो प्रेमी अपनी प्रेमिकाओ तक को भूल गये थे। भूखे भजन न...............'

'अरे पगली ! बहस फिर कर लेना, चल मुझे भूख लगी है, खाना ठडा हुआ जा रहा है। यह लडका भी कितना बाजूनी है, कहाँ कहाँ की क्या क्या बातें करता है ?'

'आई माँ ऽऽऽ !'

(आशा है कि मेरे रसान्वेषी पाठक बन्धु मुझे क्षमा कर देंगे, इस अस्वाभाविक असामयिक विषयान्तर के लिए। लेकिन चूँकि यह कलाकार पूनम का अपना 'प्राइवेट मुआमला' है और मैं दो कलाकारों के बीच मे पडकर 'डिस्कस' करने की जुर्रत नही कर सकता)

'लीजिए मुख-शुद्धि के लिए यह मीठी सुपाड़ी, पान तो कोई यहाँ खाता नही, कहिये मँगा दूँ।'

'नही नही रहने दीजिए'—कहकर कलाकार ने सिग्रेट सुलगाई।

'आप भोजन कर चुकी शकुन्त जी !'

'जी'

'माँ जी भी'

'जी'

'क्या कर रही है ?'

'लेटी हुई है, आप अख़बार देखिये, मैं जरा आई ।'

पैलेस : सैम्सन डिलैला । ओह ! मेरा प्रिय चित्र । 'शकुन्त जी ! जरा यहाँ आइये ।

एक निवेदन है ?'

'एक नही दो !'

'क्या आज आप अपनी कीमती शाम मुझे देना स्वीकार करेंगी ?'

'क्या मतलब ?'

'यही कि आज आपकी सहवासिनी संध्या को 'नकद' भुनाना चाहता हूँ । अपनी स्मृति-पट्टिका मे सदा के लिए स्थायी रूप से टाँक लेना चाहता हूँ ।'

'देखिये पहेली मत बुझाइये, साफ साफ कहिये क्या कहना चाहते है आप, ईषत् तीखे स्वरों मे शकुन्त बोली ।'

'यही कि पैलेस चलकर आज शाम एक पिक्चर देखी जाय । सुबह बाम्बे चला जाऊँगा । आप यदि स्वीकृति दे देंगी तो माँ जी को मैं राजी कर लूँगा ।'

'जी मै अंग्रेजी पिक्चर विक्चर नही देखती, एक तो उनका उलझा उच्चारण समझ मे नही आता, गैप्स भरने के लिए अपनी ओर से बहुत कुछ जोडना पडता है । दूसरे वे जीवन को बडे उच्छृंखल, निवर्सन और उसके प्रकृत रूप मे व्यक्त करती है । तीसरे यह जून की उमसती साँझ ।'

'तो फिर कैंसिल कीजिए ।'

'आप बुरा तो नही मानेंगे ।'

'ना, ना !!'

'इससे तो अच्छा है कि संगम पर चलकर नौका-विहार किया जाय ।'

'एक्सलेण्ट, अरे उधर तो मेरी दृष्टि ही नही गई थी ।'

शाम के छः बज चुके थे लेकिन लपटों के तमाचे लगाती धूप की प्रखरता और ऊष्मा मे अब भी कड़ुवाहट शेष थी । शकुन्त को सजते-सँवरते साढे छै हो गये । सलोनी साँझ पर सुकुमार शीतलता का पहला छिडकाव पड़ा । माँ जी शकुन्त की शैशवोचित ठिठोली को न रोक सकी । शीघ्र लौटने की आज्ञा देकर उसे संगम जाने की अनुमति दे दी । राज हंसिनी सी शुभ्र-वस्त्रावृता शकुन्तला इस समय बडी मोहक प्रतीत हो रही थी । उसकी सुचिक्कण उज्ज्वलता, शुभ्रता और सलोनी सादगी दिन भर की प्रखर धूप की उष्ण अग्निमा से ऊबी आँखों में अपूर्व शीतलता के श्वेत कमल उगा रही थी । माथे पर रोली का दहकता हुआ टीका उसकी सौन्दर्य-दीप्ति को द्विगुणित कर रहा था । खीचकर बाँधे गये केशो के कारण उसके माथे पर आकाश गंगा लहरा रही थी । अजन्ता स्टाइल के केश विन्यास की समग्र सुघडता भरपूर चौडे चेहरे को अंडाकार बनाने मे योग दे रही थी और गुच्छ गुच्छ अर्धमुकुलित जुही की कलियाँ कम्बु ग्रीवा के घुमावदार केश-कोपलो पर छाई हुई एक मधुर उभार पैदा कर रही थी ।

दोनो रिक्शे से सगम पहुँच गए । दूर पुल के ऊपर पूरनमासी चदरिमा का मोहक विम्ब उभर आया था और उस इद्रजाली विम्ब से झरती हुई चाँदनी की रजतिमा जल पर तैरती हुई बडी मोहक लग रही थी । चदरिमा के उस पारदर्शी प्रतिबिम्ब मे बिखरा उद्भ्रान्त मन बँध-बँध कर खुल-खुल जाता था । बहुत सी छोटी-बडी नौकायें गगा मइया की कोख मे किलक रही थी । एक सुन्दर सी नौका पर दोनों बैठ गये । नाव तैरने लगी । कलाकार बहुत देर तक चतुर्दिक बिखरे जल-विस्तार को आँखो की गहराई मे समेटने की चेष्टा करता रहा फिर आँख मूँदकर सौन्दर्य की सप्रज्ञात समाधि मे डूब गया । समाविस्थ कलाकार के सम्मुख प्रज्ञा पारमिता की साकार प्रतिमा भगवती शकुन्तला आसीन थी । अन्तर्मुखी कलाकार राज हसिनी सी शुभ्राम्बरा शकुन्तला की सलोनी प्रतिच्छवि पर कल्पना के नूतन क्षितिज खोजता रहा फिर

यकायक आँख खोलकर होठो मे बुदबुदाने लगा। बुदबुदाहट बहुत जल्दी गुनगुनाहट मे बदल गई। पानी को पंजे से छपछपाते हुये उसने बडी मोहक भाव-भंगिमा से शकुन्त को देखा। नाविक नौका सचालन मे व्यस्त था।

'इस तरह घूर घूर-कर क्या देख रहे हो जी ?'

'मैं देख यह देख रहा हूँ शकुन्त जी कि पिछली रात जो मैंने लाइनें जोडी थी वह आप पर कहाँ तक फिट उतरती है।'

'कौन सी लाइनें, जरा सुनाइये न !'

'फिर कभी सुन लीजियेगा, छोड़िये !'

'नही नही; सुनाइये ना ऽ ऽ—'

'तो सुनिये, चद रुबाइयाँ अर्ज किया है :

> मिर्च सी तीखी तुम्हे अपनी निगाहों की कसम
> इतनी दोशीजा जवानी कहाँ तुमने पाई
> बिछल-बिछल जाती है होठो पै तेरे चाँदनी
> और छलक पडती है पलको से नीद हरजाई
>
> \+ + +
>
> सोंधी साँसों मे ढला दर्द ले खोयी-खोयी
> देखा करो दूर बहुत दूर सिरफ चाँदनी को
> मुझको कसम मेंहदी से छिले तेरे तलुवो को
> चूनरी मे तेरी जडा दूंगा मैं सौदामिनी को।'

शकुन्त कवि-कल्पना की फेनोज्ज्वल दुग्धाकुलित लहरियो मे सोंधी साँसों का दर्द ढालती रही। संतरण करती हुई नौका संगम से अब दारागंज के पुल तक पहुँच चुकी थी—इसका पता तब चला जब 'निराला नगर' के निपुण रसिक मल्लाह ने अपनी नाव रोकी। नशीली रात बकुल पंखिया शाल ओढ़े अल्हडता से इठला रही थी। नाविक को पैसे देकर दोनों तट पर उतर पडे।

'हाय जल्दी कीजिये, मम्मी नाराज होंगी।'

घाट पर दैवयोग से उस दिन आठ अर्थियाँ अग्नि-पथ से प्रस्थान कर रही थी। पास मे खडा एक औघड सन्यासी हथेली पर तम्बाकू मलते हुए बड़ी मस्ती के साथ बडबडा रहा था : जीवन का कटु सत्य : बम भोले बम भोले, आज पूनो को आठ आठ धूनी लगी है, भभूती रमाय के।

माँ जी को शकुन्त के लिए कोई लायक लडका खोजने का वचन देकर कलाकार ने प्रणामपूर्वक विदा ली और अपने मित्र के मकान पर पहुँचकर प्रातःकाल बाम्बे मेल पकड़ने के लिए योजना बनाने लगा। उस रात शकुन्त के स्वप्न मे वे साकेतिक पंक्तियाँ, नौका-विहार के वे विरल क्षण रोमाच पुलक भरते रहे। कलाकार की गाडी द्रुतगति से बम्बई की ओर भागी जा रही थी लेकिन उसका मन शकुन्त की लमछारी लटो मे गुँथी गुच्छ गुच्छ अर्ध-मुकुलित जुही की कलियो की कच्ची गमक मे गुमराह होकर पीछे छूट-छूट जाता था। एक अपरिचित सी बेनाम वेदना कलाकार को बहुत गहरे से मथ रही थी। कुल-शील का पता लगाने के सन्दर्भ मे माँ जी ने वर्षो की सोई वेदना को कुरेदकर जगा दिया था। आह मेरी पयस्विनी सी पावन फूलमती!

●●●

●● आँगन की तुलसी

चुहचुहिया की महीन आवाज भोर के कान फोड रही थी और लो, पूस-माघ के सूरज की कच्ची किरणें पीपल की ठिठुरती फुनगियो पर सेंक का पीला मरहम लगाने लगी। गाढे की दुलाई मे दंदाया पूरन इच्छा न रहते हुये भी बप्पा द्वारा जबरन बिछौने से उठा दिया गया। नीद के झोकों से अब भी उसकी आँखें बोझिल थी। सोलह सत्रह वर्ष का लम्बा तडंगा भरी-भरी देहवाला युवक पूरन मारकीन की तैलाक्त कमीज-

पैजामा पहने सिसियाता हुआ कलशी और रस्सी लेकर कुएँ की ओर बढा। बप्पा दातून करने के लिए बैठे थे। पूरन पानी देकर कौड़े के पास बैठ गया। कौडे की सुगबुगाती आग की आँच भी उसके दुर्भाग्य की भाँति दरिद्र थी फिर भी उसके वर्तुलाकार बैठी हुई पास-पडोस की शिशु-मडली आग को अपने कलेजे से लगा लेने के लिये उस पर टूटी पड रही थी कि सहसा चपलता के साथ पीपल की फुनगियो से उतरती हुई कपिशवर्णी धूप की ढेरी चबूतरे पर राशि-राशि बिखर गई और शिशु-मंडली आग छोडकर बेतहाशा उस ओर लपकी। पीपल की शाखाओ के गह्वरों से झाँकती हुई आशकित गिलहरियों का टुकुर-टुकुर ताकना बच्चो की केसरी किलकारियो की भाँति ही बडा आकर्षक प्रतीत हो रहा था। टिन टिन बजती हुई घटियो वाले स्वस्थ और अस्थिपिंजर बैलो के साथ धरती माता के कर्मठ काठी वाले सपूत धूल के गुबार छोडते अपने खेतो की ओर जा रहे थे। दूर कही शिवजी के मदिर के घण्टे की गूंज वातावरण मे झनझनाती हुई ग्राम्य-प्रात की पवित्रता को और भी अधिक पावन बना रही थी।

धूप चढ़ने लगी थी। मेमनो की मिमियाहट और बछड़ो की रँभाहट से गाँव की पगडंडी कुलक उठी थी। पनघट की ओर तेज़ी से ग्राम्य वधुओं और सुवासिनियो के रिक्त कलश बढ़े जा रहे थे। उनके जीर्ण गदे चीवरों से स्वस्थ यौवन लहक रहा था। उलझे बिखरे बाल और बड़ी बड़ी आँखो पर फैला काजल घूँघट की ओर से अनायास ही झलक जाता था। कलशी खींचते हुए भरी भरी कलाइयों के काँसे, चाँदी वाले कँगने खन-खनक उठते थे। बड़ी-बडी 'महुआ उखार' मूँछोवाला मुखिया किरपाल-सिंह अपने चबूतरे पर मोढ़े मे बैठा कुल्ला-दातून कर रहा था। मोटिया खद्दर की धोती और रुई की बोझीली बंडी मे वह और भी अधिक मोटा दिखाई पड़ रहा था। सिर पर उसने ठिठुरन के कारण गाढ़े नारंगी रंग की पगड़ी बाँध रखी थी जो उसकी कठोरता में एक अजीब रसिकता का सम्मिश्रण कर रही थी। एक हाथ में गड़ारी और

चुनियाई रस्सी और दूसरे मे कलशी लिये फुलिया बड़ी मथर चाल से इतानी सी पनघट की ओर चली जा रही थी । चबूतरे मे बैठे मुखिया काका को देखा तो टोक दिया : बइठ हौ काका !

'हाँ बेटा ! अरी इत्ते गजरदम अइसन जाड़ा-पाला माँ का जान देबे का रे ? पुरनवाँ ससुर का करत है ?'

'काका, बैलन के दाना-सानी कर रहा है, वहि लाने पानी चाही ।'

ठाकुर की छिद्रान्वेषिणी कलुषित दृष्टि आज फुलिया मे एक विचित्र नूतनता का रस संचार पा रही थी : 'अरे यहै छोकड़िया कल तक तौ चार हाथ की चिन्दी लगाये लौण्डन के साथ चौतरे माँ छुछ-लात रही बया के झोंझ अइसन रूख-सूख झोटा लीन्हे और कुछै महीना मा या कचकचाहट, जूडा के बाँधै का या शहरातू सलीका, बसन्ती रंग की छापी साडी माँ कइसन बनबाला सी जगमगाय रही है ?' ज्वार के कच्चे भुट्टे जैसी उसकी छितरायी 'देह' झुलौवे मे फटी पड रही थी । बिदुराहट मे एक जादुई खिचाव और आमन्त्रण अँगड़ाइयाँ ले रहा था । नितम्ब-युग्म मे कुछ अतिरिक्त कसाव और बोझिलता सी आई प्रतीत होती थी । भरे कलश को लेकर लौटते समय ठुमकती चलती नोखी पनिहारिन फुलिया की मोटी कुर्ती छलकन से तर हो गई थी ! काँख मे कलश को दबाने के कारण मासल बाँहो की कसावट में मछलियाँ उछल रही थी । मुखिया ने इस दृश्य को खूब गौर से देखा किन्तु गांव-गोइठ के नाते को ध्यान में लाते हुए अपने बहकते मन को झटक दिया ।

धूप बढने के साथ-साथ कोलाहल भी बढ चला । बाल-गोपाल धूप से शक्ति पाकर गिल्ली-डंडे के खेल मे जमने लगे और कुछ दुग्घाड़ा-तिग्घाड़ा की आवाज़ बुलन्द करते हुये गोली खेलने लगे । पूरन गोली या गिल्ली-डडा खेलने मे माहिर था । उसकी वजनी गिल्ली की नोक अगर किसी को धोखे से निशाना बना देती तो गज़ब हो जाता, खून की घल्लियाँ निकल पड़ती और ज़िदगी भर के लिए माथे पर घाव

का टीका लगा रह जाता। याद आया एक बार दुर्भाग्य से उसकी सन-सनाती गिल्ली आकर चबूतरे पर बैठे मुखिया के लाडले को छूती हुई निकल गई थी। लडका इस आकस्मिक प्रहार से सिहर कर चीख उठा था। मुखिया दौड़ा-दौडा आया था और सबको समवेत माँ-बहन की भयकर मैथुनपरक गालियाँ देने लगा था।

उसे लगा कि अभी-अभी मुखिया की कडकैती तेज-तर्रार, लोक-मरजाद को घोल कर पी जाने वाली आवाज़ उसकी माँ-बहन को बेआबरू करके उसके कानो मे खौलते राँगे सी जम गई है। वह सोचने लगा था, आज इस नरपिशाच ने मुझे मेरी माँ की गाली दी जिसके स्तनो का दूध मेरी उभरी नीली नसो मे खून बनकर उफन रहा है, मुझे मेरी बहन की गाली दी, वह बहन, वह आँगन की गभुवारी तुलसी जिसके अभी दूध के दाँत तक नही उखडे। उफ, उफ। अपने रोगी लाड़ले के अतिरंजित लाड मे पडकर उसने विवेक को खो दिया। गाँव-गोइठ की मर्यादा को—जहाँ बूढे या जवान भगी को भी छोटे बच्चे बाबा या काका कहकर पुकारते हैं—टुकडे-टुकड़े कर डाला। यो पूरन के परिवार से मुखिया के सबध इतने बुरे थे। वह पूरन के बप्पा को बैठने के लिए मचिया देता था और उसके साथ बडे भाई का सा सलूक करता था। भोतर की भगवान जाने। लहू का घूँट पीकर पूरन घर लौट आया। उसने अपने बप्पा से इस घटना का जिक्र तक न किया क्योकि कसूर उसी का था और वही इस घटना का जिम्मेदार था। फिर भी बप्पा को उसका राई रत्ती हाल शाम को एक ग्वाले से मिल गया। गम-खोर बप्पा ने आगे रार बढानी ठीक नही समझी फिर भी मुखिया के प्रति उसके मन मे एक फाँक जरूर पड गई। उसने मदरसे से लौटकर आये पूरन की खासी कुटम्मस की और उसका गिल्ली-डंडा कौडे में झोंक दिया। बात आई गई खत्म हो गई।

पूरन की आँखो के आगे आज अतीत के वे सारे सुखद दृश्य नाच रहे थे जब कि उसकी माँ, भाई-बहन दोनों को साथ-साथ भोर उये कुल्ला-

दातून करने के बाद उपलों पर गरम-गरम टिक्की सेंक कर दे देती। उस पर नैनू की एक मोटी परत चुपड देती और नमक या गुड की डली दे देती। दोनो भाई-बहन हाथ मे लिए हुये पूरे आँगन मे चक्कर लगाने लगते। कुट्टुर-कुट्टुर खाते जाते और चक्कर लगाते जाते। यहाँ तक कि चक्कर लगाते-लगाते दोनो गिर पडते। कभी पूरन रोटी के कम मक्खन चुपड़े हिस्से को पहले खा लेता और गुड़ तथा अधिक मक्खन चुपडी रोटी के टुकडे को बचा लेता, छिपा लेता और फुलिया की रोटी खतम हो जाने पर उसे दिखा-दिखाकर थोडा-थोडा कुतर कुतरकर खाता। एकाध कौर दयावश दे भी देता।

आह! आज वे ही सारी क्रीडाएँ, सारे मान-मनौवल कल रात देखे गये सपने की भाँति स्मृतियो मे मँडरा रहे है। हिन्दू-मुसलमानो की आबादी से भरे सामासिक संस्कृति वाले गाँव के उसको वे ताजियो के जश्न याद आते। किस प्रकार वह अपने बप्पा की परवाह न करके घर से गायब हो जाता और दिन दिन भर भूखा-प्यासा ताजियो पर पन्नी अबरक आदि चिपकाता रहता। अलाव के लिए लकड़ी के कुन्दो का इन्तजाम करता। अलाव कूदने के लिए अगारो को दहकाता। और 'या अली', 'या हुसेन' के नारे लगाता हुआ अलाव कूदने वालो को पकड़ता। लोभान सुलगाता। भारी भरकम ढोल पीटता। ताशे बजाता और कभी-कभी मर्सिया पढने वाले अपने मुसलमान साथियो के घेरे में जाकर 'हाय हाय सय्यद गरीबुल वतन है' के दर्दनाक तरन्नुम मे छाती पीटता हुआ 'या हसन' 'या हुसैन' 'अली का लश्कर या हुसैन' की पुरजोश तकलीद करता।

उसको काछियों और अपने रैदास भाइयों द्वारा बोये जाने वाले उन हरियरे जवारो की भी बहुत बहुत याद आ रही थी। ज्योति-स्पर्श के प्रभाव से किस प्रकार दस-दस, बीस-बीस सेर, यहाँ तक कि ढाई-ढाई मन वाले बोझिल 'बानो' को देवी के भक्त, शक्ति के उपासक अपनी जीभ या कण्ठ मे छिदवाते, आवेश से हुँकरते, मूँज के कोड़े से

देह को पीटते और रक्त की एक बूँद भी न छलकती। एक बार एक अंग्रेज अफसर ने इसका मज़ाक उडाया था और परीक्षण के तौर पर जब 'बाने' की तीखी नोक हल्के ढग से उसकी बाँह मे चुभो दी गई थी तब खून की घल्लियाँ चलने लगी थी और किसी प्रकार से भी खून बहना न बन्द हुआ था, तभी बन्द हुआ था जब ज्योति-स्पर्श से पुलकित 'पान' को उस पर चिपकाया गया था।

आह! आज पूरन को अपनी पैसुनी का चौडा चकला पाट और उसकी छलछलाती दुग्ध धवल धारा बेतहाशा याद आ रही थी। बाबा की अमराई मे कूकने वाली कोयल की कूक याद आ रही थी। कितना-कितना कूकती थी जैसे अपने दुर्बल प्राण ही ढीले दे रही हो और वह भी कितना जिद्दी था, कोयल के साथ कू-कू की अनगिनत आवृत्ति-प्रतियोगिता करता हुआ मुई को चुप कराकर ही दम लेता था।

मेघनियाँ चाँदनी की वह अँखमुदौव्वल, पीठ पर दो कसे-कसे गेंदों की कसमसाहट, किसी के हाथ की मेहदीली ऊष्मा आज सब के सब उसे बेहद याद आ रहे थे। अगहनी भिनसार की कौड़े सरीखी जुगजुगाती पौ, सँझवाती बेला ढिबरियों की टिमटिमाती लजीली काँपती सिहरती लौं, दूर नद्दी पार खेतों मे अलसी और जौ के रचाये ब्याह और आधी रात को गजर की ठनकती रौ मे वह खोया जा रहा था। कुएँ की जगत पर के छुआ-छुअउवल की याद करके उसकी आँखें छलछला आई थीं। उसे सावनी, भँदई,कुँवारी और कतकी रात याद आ रही थी। चित्रकूट के वे मेले-ठेले याद आ रहे थे। भरी बरसात में कजलियों के गदराते गीत याद आ रहे थे। दीवाली की रात में आँचल तले कौंधते दीपो की सौगात याद आ रही थी। जमुनियाँ,जेबुन और जसोदा बहन की बारात के वे उछाह-बधाव याद आ रहे थे। नागपुर को हसीना बेगम की कव्वाली, गुलनार के टप्पे, तोडी और दादरे याद आ रहे थे। उस रात गाई जाने वाली 'अँधेरिया है रात सजन रइहौ कि जइहौ' की वह रसीली शहद घुली कड़ी याद आ रही है जिसने उस बारात में गजब

ढा दिया था, नोटो के अम्बार लग गये थे । आज उसे नगडियो की वह थाप याद आ रही थी जिसको सुनकर वह परोसी हुई थाली तक छोड़-कर माँ के अनखाने पर भी उठ आया करता था । आह ! आह !! आज उसे अपने द्वार पर के नीम की वह घनी शीतल छाँह याद आ रही थी जिस पर सावन मे झूला पडता था, गाँव भर की सुवासिनें जिसमे पेगें भरती हुई आधी-आधी रात चुये तक 'सावन के गीत' गदराया करती थी । परिवार के बडे-बूढे की तरह छोटे-बडे सबके दुखदर्द की खोज खबर रखने वाले बरम्बाबा की जोरावर बाँह बुखार से तपते माथे पर छाँह किये हुये, आज उसे बरबस बुला रही थी ।

आह ! आज उसे अपने गाँव के उन कुर्मी-काछियों के वज़नी हल याद आ रहे थे । जो असाढ़ का पहला दौगरा गिरते मेघदूत की प्रथम पंक्ति की भाँति निकल पडते थे और जिनकी भूख पाथरो तक को पचा जाती थी । रामायण की चौपाइयाँ, आल्हा के बोल, कुरआन की न समझ मे आने वाली फिर भी बडी प्यारी, बडी परिचित आयतें आज सब की सब उसे याद आ रही थी, उसे तड़पा रही थी, उसे अपने पास बुला रही थी ।

फिर देखते-देखते अचानक एक ऐसी गाज गिरी कि लौकियों और बेलो से आच्छादित खपरैलो से धुएँ की घुमडती घटायें बिदा हो गईं । बच्चो के रोदन स्वर सो गए । हल्दी-प्याज और मसाले की छुआवर्षिनी सुगन्धियाँ उड़ गईं । दाल छौंकने की छुनछुनाहट सुनने के लिए कान तरस गये । पाच कोस तक के गाँवों के इर्दगिर्द महामारी फैल गई । सारा गाँव वीरान हो गया । लोग घर खाली करके जंगल में झोपड़ियाँ बनाकर बस गये और पूरा गाँव जैसे 'जीवित मशान बन गया' । साँझ होते ही स्यारो और उल्लुओं की भयावनी मनहूस बोलियाँ स्यापा करने लगती । मुर्दों से पटकर पैसुनी का स्वच्छ सुघड घाट दुर्गन्ध से भरकर वैतरणी बन गया । चिता से अधजले मुर्दों को कुत्ते कौवे और सियार खींच लाते, खाते और फिर छोड देते । सत्यानाश का ऐसा

प्रचड तांडव पूरन ने अपने जीवन मे पहली बार देखा था। उसके काका गाव के अन्यलोगों की भाँति अपने प्राणो का मोह लेकर काकी के साथ ससुराल चले गये थे। पूरन के बप्पा ने अपनी अक्खड आस्तिकता और ईश्वर-भक्ति के कारण घर छोडकर कही जाने की अपेक्षा अपने पूर्वजों की देहरी पर ही मरना अच्छा समझा सो वे अपने छोटे परिवार के सहित वीरान गाँव को आबाद किये रहे। लोगो ने लाख समझाया, बुझाया पर वे अपनी जिद पर अटल रहे और होनी होकर ही रही।

पहले तो पूरन की माँ महामारी से आक्रान्त हुई। खुली हवा से वंचित तंग कोठरियो मे रहने वाली उसकी माँ पर प्लेग के कीटाणुओं ने आक्रमण कर दिया। बीमार हुई और बगल मे गिल्टी निकल आने पर ही बीमारी का ठीक ठीक पता चल सका। कामतानाथ की कृपा के बल पर तीन चार दिन तक जब अच्छे होने के लक्षण दिखाई देने के बजाय हालत बिगड़ती चली गई तो दोनो बाप-बेटे माँ को चारपाई पर लादकर दो मील दूर खुले अस्थायी प्लेग अस्पताल मे ले गये और उसी अभागिनी रात को दोनों भाई बहन मातृ वंचित हो गये। माँ की अत्येष्टि-क्रिया करके दोनो बाप-बेटे लौटे ही थे कि बप्पा ने अपने पेड़ू पर असह्य पीडा का अनुभव किया और तीसरे पहर जलन से उसका माथा तपने लगा। दोनों अबोध भाई-बहन एक दूसरे का मुँह ताकते हुए कराहते बप्पा के सिरहाने रात भर उनीदे नयन बैठे रहे। दूसरे दिन पेड़ू पर गिल्टी उभर आई जिसे देखकर पूरन काँप उठा। बप्पा को अस्पताल ले जाने के लिए अकेला क्या करता? गाँव बाहर झोपड़ियों में गया पर किसी भी कीमत पर कोई अपने प्राणो से सौदा करने के लिए ऐसी महानाश की घडियो में तैयार न हुआ। विवश होकर मुखिया के खेतों की ओर गया। मुखिया मचान पर बैठा खेत की निगरानी कर रहा था। झोपडियो के पास नट अपने करतब दिखाकर ग्रामीणो से अनाज के ढेर ऐंठ रहे थे। माँ की असामयिक मृत्यु से सतप्त पूरन अपने दुर्भाग्य से सताया हुआ था। वह मुखिया के आगे बप्पा का हाल बताकर

सुबुक-सुबुक कर रो पडा। मुखिया ने दिलासा दी और पूरन के साथ अपने टुकड़ो पर पले एक टहलुवे को डाटडपट कर साथ कर दिया कि वह जाकर उन्हे अस्पताल पहुचाकर लौट आवे। जाते-जाते पूरन फुलिया को सौप गया कि काका, बिट्टी की खोज खबर लेना, मैं तो अस्पताल मे रहूँगा। मुखिया ने समझाया कि तुम चिंता न करो। अभी अभी आदमी भेज कर मैं उसे यहा बुलवाये लेता हूँ। अपनी काकी के पास पुरवे मे रहेगी, उसका अस्पताल जाना भी ठीक न होगा, बच्चा है, वहाँ की हालत देख-देख हुड़केगी, यहाँ बच्चो मे जी बहला रहेगा। तुम जाओ, भगवान भला करें। हाँ देखो, कोई काम-जरूरत पड़े तो मुझे खबर देना। अच्छा काका। राम राम ; कहकर पूरन टहलुवे को लिए हुये घर की ओर लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ लपका। फुलिया बप्पा की चारपाई का पाया पकड़कर रोने लगी। अचेत बप्पा के सजल नेत्रो से टप टप आँसू चूकर लिहाफ को भिगोने लगे। पूरन ने बहन को दिलासा दो कि बहुत जल्द बप्पा अच्छे होकर घर लौट आयेंगे। तुम रोकर असगुन न करो। शाम को मुखिया काका का आदमी आयेगा तुम घर पर ताला लगाकर उसके साथ चली जाना और सेवा-टहल करती हुई काकी के पास पुरवे में रहना। हम लोग भी बप्पा के अच्छा हो जाने पर वही झोपड़ी डाल लेंगे। फुलिया को समझा-बुझाकर दोनों कराहते बप्पा को एक हल्की चारपाई पर लिटाकर अस्पताल ले चले।

उस दिन पूरा आकाश अभागे बादलों से भरा हुआ था। रिसते वातावरण मे एक भयानक किस्म की निस्तब्धता छाई हुई थी। गाँव के वे सँकरे रास्ते जहाँ कभी बच्चे घिरौंधे बनाते थे, गिल्ली-डंडा खेलते थे, बहू-बेटियाँ मगल कलश सटाये इठलाती चला करती थीं ; आज सूने पड़े थे। भाई के जाने के बाद फुलिया बहुत देर तक खोई-खोई सी बैठी रही। बाहर चबूतरे पर ही बैठी हिचकियाँ भरती रही। अंदर आँगन की ओर जाते ही उसे बरबस माँ की स्नेह भरी मूर्ति याद आ जाती, वह मूर्ति जो दही मथते-मथते नैनू की छोटी टिकिया दोनों

भाई बहनो की हथेली मे रख दिया करती थी। वह आँगन जहाँ दोनों नाचते हुये माँ की सोधी टिक्कियो को कुतर-कुतर कर खाया करते थे, आज मा के बिना काट खाने को दौड़ता था।

कुलक्षणी रात सहमे-सहमे डग रखती हुई गाँव मे घुस आई। सहमती हुई फुलिया अंदर गई और ढिबरी जलाकर द्वार पर रख दिया। सस्ती इकलाई और कुर्ती मे उसे कँप-कँपी लग रही थी इसलिये चौगान से लकडियाँ और कुछ सूखे उपले बीन लाई और कौड़े को सुलगा दिया। यह वही कौडा था जिसके चारो ओर पिछले साल इन्ही दिनो लडकों का मेला लगा रहा करता था। गाव के ग्वाले, बरेदी, कहार और लुहार इसी की शरण मे अपने फटे-चिथडे जाडे के दिन बिताते थे। इसी कौडे के धुएँ की कड्वाहट में ढोला-मारू, सारगा-सदावृज की पुये सी मीठी गीतो भरी कहानिया कही जाया करती थी। बापू गाव भर के सताये और बेसहारा लोगों को शरण और सुझाव दिया करते थे। क्या हुआ जो यह घर मुखिया की चौपाल की तरह आन-बान और शान-शौकत वाला न था यहाँ बड़े-बड़े मोढे न थे, ऊँचे पाये की हाथी मचान चारपाइया न थी फिर भी उनके मालिक का यह द्वार गरीबो का गोकुल था, हरिजनो का साबरमती था, दीन-दुखियो का द्वारिकापुरी था और आज वही गोकुल, वही साबरमती आश्रम, वही प्यारी द्वारकापुरी सूनी पडी थी।

आज की उदास सुलगती साँझ में।नीम का गाछ चुप था, पीपल की परोपकारी उसाँस चुप थी। शिव मंदिर के कलश किसी अज्ञात आशंका और अनागत अनिष्ट की अशुभ सूचना में खोये-खोये से ऊँघ रहे थे। आज की साँझ पनघट पर बजते कलशों की जल तरङ्गों की साँझ न थी। मंदिर की सँझबाती में गाये जानेवाले आरती के भक्ति-विह्वल पदों की साँझ न थी। नद्दी पार से चराये स्तनोंवाली हुँकरती कलोरियों की वात्सल्य-सिक्त छलकती साँझ न थी। आज की साँझ सन्नाटे की, टूटती हिचकियों की, रिसते

नासूरों की, विघटित आस्थाओं की और धुँधुँवातें मरघट की उमस भरी, ऊब भरी, करुणा भरी दुर्गन्धित, चिरांयध मजबूरियों की साँझ थी।

सारा गाव झींगुरो और झिल्लियो की दर्दीली झकारो मे टँगा हुआ था। नद्दी पार वाले के अमरूद के बगीचो से कनस्तर पीटने की आवाजें और 'गला ऽ गला ऽ ऽ' के स्वर किसी दैत्यपुरी से तैरते हुये से गाँव मे आ रहे थे। पाले से मारी जुन्हैया सी पियराई फुलिया कौड़े के पास सिकुडी-सिमटी मुखिया काका के आदमी का बेसब्री से इतजार कर रही थी। गाँव के एक छोर से दूसरे छोर तक कही मानुष-तन की गध तक न थी, कि सहसा घोडो की टापो की आतंकित आवाजो से गाँव की समाधिस्थ निस्तब्धता भंग हुई। फुलिया किसी चोर डाकू के आशकित भय से सिहर उठी। घोड़े की टापें जब उसके चौपाल पर चढ आईं तो उसकी घिग्घी बँध गई, लेकिन घोड़े से उतरते कौड़े की जुगजुगाती लौ मे जब उसने मुखिया काका को देखा तो वह ससुराल से पहली बार लौटी कन्या सी उसकी कमर को बाहो मे भरकर अपनी माँ का नाम लेकर विलाप करने लगी। मुखिया ने उसकी पीठ थपथपाते हुये ढाँढस बँधाया। वह दौडकर अपने सकट के साथी काका के लिए मचिया उठा लाई। दोनो कौडे के पास बैठ गए। कौड़े की धुँधली उजियाली मे मुखिया ने कनखियो से फुलिया के सूरजमुखी फूल से दहकते गठे-गठे कसे अगो वाले रूप को देखा। आज सुबह ही उसने किसी तरह कल की रखी दो बासी रोटियो पर अपनी माँ द्वारा सँजोई मक्खन की टिकिया चुपडकर नमक की डली के साथ कलेवा किया था। कल का सारा दिन उसका बापू के सिरहाने बैठे माँ की याद मे बिसूरते बीता था। इस समय भूख से वह कुलबुला रही थी। मुखिया ने उससे एक लोटा पानी और प्याला माँगा। प्याले मे उसने पानी उड़ेला और उससे दूनी मात्रा में एक लाल रंग की दवा डाल दी। फुलिया ने जब उसके बारे मे पूछा तो बताया कि गाँव भर मे चारो ओर बीमारी

फैली हुई है, पता नही कब किस पर उसका हमला हो जाय इसीलिए मैं सरकारी अस्पताल से जाकर दवा ले आया हूँ, वैसे गाँव मे घुसना भी खतरे से खाली नही है। लो तुम भी दवा पी लो और उसने प्याले मे थोडा पानी डालकर पूरे प्याले को लाल दवा से भर दिया। दवा पीने मे बड़ी कड़वी और बदबूदार थी। फुलिया को मतली आते आते रुक गई। थोडी देर मे फुलिया एक अजीब वहशीपने से बहकती हुई हँसने लगी। उसकी नील कमल की पंखुरियो सी नुकीली आँखें नशे के बोझ से झुकी-झुकी बडी दयावन लग रही थी। नीद के झोको से वे छलक रही थी। पीपल की पतुलियो जैसे पतले-पतले सलेटी रग के होठ खुल-खुल पडते थे। उन पर फिरती हुई जीभ की हरकत से उजली-उजली कुन्द कलियाँ चू चू पड़ती थी। मुखिया ने अँगड़ाइयो और जम्हाइयो मे बिखरती फुलिया की भरी-भरी जाँघो मे एक भरपूर चिकोटी काटी। फुलिया सिसियाती हुई तडप उठी—हाय मइया री, बड़े खराब हौ काका तुम, चलौ जल्दी से काकी के पास लइ चलौ मोही।

'चलित है फूला अबै चलित है, घोडा थोड़ सुस्ताय लेय, ला रे अपने काका का कुछ नशा-पत्ती करौबे या अइसिन बैठे बैठे जुगनुन की बत्तीसी चमकौबे कलमुही!'

फुलिया लडखडा कर दो कदम चली थी कि फिर चक्कर खाकर गिर पडी। मुखिया ने उसे अपनी बाँहो मे भरकर गेदें के फूल जैसा उठा लिया और कौडे के पास बैठा दिया। बाँहो मे भरकर उठाते समय मुखिया की हथेलियाँ बेल जैसी किसी सख्त चीज़ से टकराकर झुन्ना उठी।

'काका, जल्दी लइ चलौ न मोही काकी के पास, बहुतै भूख लागी है मोरे काका'—फुलिया ने बिखरती वाणी मे गिडगिडाकर कहा।

'चलत हौ रे, जान काहे खाय रही है मरभुखी, पहिले काहे नही बताये कंगालिन, देख घोडवा की जीन मा एक पोटली बाँधी है, तोहार

काकी तोही नई मूँग की मुगौडी और बाजरा के मीठ पुवा भेजिस है, जा खा ले रे मरघइटी !'

खूँटे पर बंधी दिन भर की भूखी-पियासी बछिया सी फुलिया छलाँगती हुई घोडे के पास से पोटली निकाल लाई। स्वादिष्ट मुगौडियो और पुवो को वह हाथ मे लिए ही लिए गटक गई। काका के सामने ऐसी अशिष्टता भरी निर्लज्जता पर उसे तनिक भी मलाल न हुआ। उसे बाद मे महसूस हुआ कि 'कौने टोना-टोटका के वश होके' वह इत्ते बडे मुखिया काका के सामने अइसन ढिठाई कइ सकी।

मुखिया ने फुलिया को दरवाजे पर ताला लगाकर अपने ओढ़ने-बिछाने के कपडे लेकर चलने को कहा। वह रोज के पहनने वाली धोती, कुरती और रजाई लेकर झट आ गई। कपडो का एक गट्ठर बनाकर काका ने काठी से लटका दिया लगाम के सहारे उचककर घोडे पर बैठ गया और फुलिया को अपने आगे बैठने के लिए कहा। अपनी भरी उमर से विवश फुलिया एक अनचिन्हारी लाज से आनाकानी करती, डगमगाती शरमाती घोडे के पीछे-पीछे मदोन्मत्त पैदल चलने लगी।

'अइसन अइसन तौ भोर हुई जाइ नद्दी पार पहुँचै माँ हुल्किहाई ! फिर प्लेग के कीडन का भी तौ खतरा है।'

प्लेग के कीडो का नाम सुनते ही फूला की आँखो के आगे अधखुली आँखो वाला माँ का निर्जीव झूलता चेहरा उभर आया, वह चीख मार कर घोडे की ओर दौडी और लगाम पर पैर रख, काका की बाँहों का सहारा लेकर गद्दी पर बैठ गई। चाबुक की हल्की फटकार पर घोड़ा पवन-चाल से उड चला। दूर-दूर तक ठिठुरती माघी चाँदनी मे नहाई गाँव की वीरान खपरैलें काँप रही थी। आकाश मे दो-चार पाडुवर्णी तरइयाँ जुगजुगाती-सुलगती बुझने-बुझने को हो रही थीं। पछुआ का तेज झोंका हड्डियो को झकझोरता हुआ तीर की तरह सन्न से निकल जाता था। चारों ओर दूर-दूर तक एक अवसादग्रस्त बोझि-

लता गेहूँ और चने के खेतों की खड़खड़ाहट में, बेवा की उजली माँग सी पसरी पगडंडियों के सन्नाटे में और उदास नदी की अविराग मद्धिम छलछलाहट में छाई हुई थी। ऐसी प्रेतपुरी की बीहड गहरी घाटियो को पार करते हुये निर्भीक घोडा सेई के काँटों जैसी मुखिया की चुभीली रोयें भरी बलिष्ठ बाँहों के तंग घेरे मे कसी अदान बछिया सी फुलिया को लिए भागा जा रहा था। एक परिचित थान पर मचान के पास पहुचकर वह अपने आप रुक गया। फुलिया पर लाल दवा का नशा पूरी तरह हावी था, उसने अपने आपको अर्धचेतन स्थिति में काका की गोद मे निर्भय, निश्चिन्त शिथिल छोड़ दिया था ऐसे जैसे एक दुधमुहा बालक माँ का दूध पीते-पीते मचलकर ऊँघ-कर आँचल की छाँह मे सो जाता है। मुखिया ने फुलिया की गदकारी बाँहो को जोर से झकझोरा, झिझोडा। उसने अपनी अँधमुदी उन्मद भ्रमित नीद डूबी आँखें मिचमिचाईं, और दूर-दूर तक फैली चने गेहूँ की कृष्णवर्णी हरीतिमा की ओर हेरकर काका से लड़खड़ाती जबान मे पूछा—काकी कहाँ है काक्का और मोर भइयाऽऽ?

'वो जो जोत टिमटिमा रही है देखा, होइन पास की झोपडी माँ। तू मचान माँ रुक, मैं घोडवा बाँध कर आनन फानन आता हूँ फिर काकी के पास चलेंगे। ठड लगती हो तो ले रजाई ओढ ले, फुलिया रजाई मे लिपटकर मचान पर लेट गई। मुखिया घोड़े को लेकर दूर मोड पर ओझल हो गया। स्वादिष्ट पुवो और मुगौडियो से तृप्त फुलिया रजाई की सुखद दंदाहट में काँपती-काँपती झपकिया सी गई। स्वप्न मे उसने देखा कि दूर अस्पताल मे पडे हुए उसके बप्पा अचेत से हिचकियो मे कराहते हुये 'फूला फूला' की गुहार लगा रहे हैं, और उसका भइया पैताने बैठा हुआ लहाछेह आँसू बहा रहा है। असगुन बतलाने वाली 'मरइली चिरइया' की रोगटे खडी कर देने वाली डरावनी आवाज़ पास के घने बरगद के गाछ से लगातार आ रही थी जिसे सुनकर अकेली फुलिया का नवनीत कलेवर काँप-काँप

जाता था। भय और कम्पन की ऐसी घड़ियो से खीचकर निद्रा माँ ने कब उसे अपनी गोद मे ले लिया, छुपा लिया। नशे के तीव्र झोके में उसको इसका जरा भी अहसास न हुआ। नीद मे चूर फुलिया ने घंटे डेढ घंटे बाद एकदम अचानक अपनी कमर के इर्द-गिर्द एक फौलादी कसाव का अनुभव किया। सरसों के फूलो जैसे अपने चिकने मुलायम गालो को सेई के काँटो जैसी मूछो की चुभन से छिलते हुए महसूस कर वह आँख मलती हुई उठने-उठने को हुई कि किसी ने अपनी जाँघो के बीच दबाकर बाज जैसी फुर्ती से उसके 'रस नीबुलो' को मसल डाला। मर्मान्तिक टीस से वह चीख पड़ी। नरपिशाच शिकारी बाज ने आँगन में फुदकने वाली गौरइया के पंख-पंख छितरा दिये। लहूलुहान गौरइया, बाज की बाँहो मे दबी दुबकी गौरइया, रुँधे-रुँधे गले से उखडे नशे की हालत मे बस इतना ही कह सकी, इतना ही बोल सकी—हाय दइया, मोरे काका तुम और केले के गाछ सी गिरकर मूर्छित हो गई।

बेहोश अधमरी फुलिया को लिये-दिये सात गाँव का प्रख्यात अहिंसावादी चरित्रवान् 'सत, पहले से ही सधे-बधे सौदे के मुताबिक शहराती गुण्डा सैकू नट के पास गया और लहू मे लिथडे चार सौ के नोट गिनकर उस आँगन की तुलसी को जड से उखाड़ कर घूरे पर फेंक दिया। उस अभागिन घड़ी में आँगन का तुलसी चौरा सूना हो गया। बाबुल के गीतों की पिजड़े की मैना मर गई। भाई की याद की कलाइयों में बँधी बिट्टी की राखी चुटकी भर राख बन गई और नट की कलाबाजी मुश्को में कसो-कसी फुलसुँघनी चिड़िया सी फुलिया मूक-करुण क्रन्दन करती हुई अपनी माँ जैसे सगे गाँव से, जाने-पहचाने खेत-खलिहानो से दूर बहुत दूर रेलगाडी द्वारा रातों रात अनदेखी अनजानी नगरी की बडी इमारत की एक तग कोठरी मे पहुँचा दी गई। सजल आकाश की किसी भटकी वायु तरग में 'बाबुल के बोल' सिसकते रहे—

हो लखि बाबुल मोरे, भइया को दीनो महल दुमहलाँ !
हमको दियो परदेश हो लखि बाबुल मोरे ।।

● ● भटकी तरङ्ग

पूरन के सिर का आकाश सदा के लिए खो गया । उसके माथे पर बरसते वाले आशीष विदा हो गये । कैशोरिक उच्छल जीवन को नियन्त्रित करने वाली झिडकियाँ शून्य मे लीन हो गई । सब ओर से हारा, टूटा, चिटखा पूनम राखी के धागो के सहारे स्वय को बाँध देने के लिए, रिक्तता को बहनापे से भरने के लिए जब घर आया तो राखी के धागे पहले ही बिखर चुके थे । अन्ना चरने वाले चोटहिल बैल सा धनीधोरी पूरन मुखिया के पास गया । मुखिया घडियाली आँसुओं से पूरन को भिगोता हुआ बोला—'बेटा कलेजा पत्थर का करो । भगवान को यही मजूर था, उसका लिखा कौन मेट सकता है, धीरज धरो, अगर तुम्ही धीरज खो दोगे तो बेचारी फुलिया का क्या होगा ? हाय राम इस अदान बछिया ने दुनियाँ का कुछ भी सुख न जाना । बेटा ! कहाँ है मोरी बिटिया । हे भगवान ! सात दुश्मन को भी ये दिन न दिखाना मोरे परमेसुर ।'

'काका; जब फुलिया बप्पा के न होने का हाल सुनेगी तो·········तो····· ···मुझसे न देखा जायगा काका ।'

'तो का फुलिया को अबहिन पता नही चला ? कल रात जइसे घर से ओही मैं लायी, मचान पर एक आदमी अस्पताल से आवा और मोहिसे

बोला कि बडे भइया 'फूला-फूला' के गोहार लगा रहे है। तुमने उसे जल्दी बुला भेजा है।

'म म मैंने तो नही बुलाया था काका, मैंने किसी को नही भेजा, कौन था वह आदमी काका ? फुलिया तो अस्पताल नही पहुँची। कैसा था वह आदमी काका ?'

'अस्पताल का चौकीदार अइसन लग रहा था बेटा, हाथ माँ बाटरी और लाठी लीन्हे हाँफत आवा रहै और फुलिया का जल्दी चलै का कह रहा था, पहले तो मैं एक अजनबी के साथ अपन सयान बिटिया का अकेले इत्ती रात भेजै माँ हिचकिचायौ और साफ इंकार कर दियौ पर फुलियै जब भइया का नाम ले लेकर डिडकारैं लाग तब मोरिउ बुद्धी माँ पाथर पडगा बेटवा !'

'हे राम !' कहकर पूरन हत-विमूढ़ सा सर थामकर बैठ गया।

मुखिया बडे प्यार से उसका सर अपनी गोद में रखकर सहलाने लगा। पूरन छलछलाये आँसुओं से टूटती हिचकियो मे बोला—'अगर मोरी बिट्टी को कुछ हो गया तो मैं नही जिऊँगा मोरे काका ! हे परमेश्वर तू किस जनम का बदला मुझ अभागे से इतना निर्दयी बनकर चुका रहा है।

'बेटा ! घबडा न, अपनी बिटिया के लिए मैं सरग-पताल एक कर दूँगा। मेरी चिडिया पर अगर किसी ने आँख उठाई तो आँखें निकलवा लूँगा, घर फुंकवा दूँगा, ईंट से ईंट बजा दूँगा। चल, अपनी काकी के पास चल, का सूरत बना लीन्है रे ? चल, चल !'

'काका, बिट्टी..........!'

'हाँ बिटिया का पता मैं अभी लगवाता हूँ, पुरवे-पालों और आस-पास सात गाँव तक मैं अपने आदमी भेजता हूं। तू चलकर नहा और एक कौर खा ले, पापी पेट का तो भरैं पड़ी बेटा !'

'काका ! नहाना-खाना तो सब बप्पा के साथ चला गया। एक बहिनी बची रहै, वह भी भगवान से न देखी गई।'

ससार का क्रम अपने ढंग से चलता रहा। दिन, हफ्ते, महीने आये और गये। प्लेग विदा हो गयी। गाँव की रौनक फिर नये सिरे से लौट आई। जीवन फिर नई लालसायें और आकाक्षायें लेकर हर चौपालों और आँगनों मे सँवरने लगा। पनघट कलशो की टकराहट, कगनो और चूडियो की छनक से भर गये। नदियो के चकले तटो पर म्हावर और काजल घुलने लगा। उबटन की पर्तें उखड़ने लगी। कोरी धोतियों की माडी छुटने लगी। सोहर, उछाह-बधाव के गीत गमकने लगे लेकिन पूरन के गीत फिर न लौटे। उसकी वह कैशोरिक मस्ती, वह निश्छल दूधिया हँसी, हमजोलियो को बात बेबात छकाने की आनबान फिर न लौटी। अतीत की किस गहन गुफा में वह गूँज गुम हो गई। रह गई मात्र एक अनुगूँज, एक गुमनाम पीड़ा, सासो को घोटने वाले विषैले धुएँ की तीखी कडुवाहट।

सात गाव और पुरवे-पालो का चक्कर लगा कर मुखिया के आज्ञाकारी नौकर-चाकर थककर खाली हाथ लौट आये। न तो किसी की आखें निकलवाई गईं, न किसी का घर फुंका और न ईंट से ईंटें बजी। एक मात्र बची बहन की लाड़ली रार से वंचित अभागे भाई की आखों की नीद निर्वासित हो गई। उसके अरमानो का घर फुंक गया और मुँहबोली बहना के ब्याह में 'लावा परसने' की बचपन की पली-पुसी हौंस सदा के लिए हिरा गई। भूखा-प्यासा पूरन कहाँ कहाँ नही गया? क्या-क्या नही किया। लेकिन सावन सूनी कलाई लिये बिन राखी के बीत गया। भइयादूज की मिठाई मुस्कानो सी महँगी हो गई। और अब शाम की तरल कालिमा शून्य में गहराने लगी पर सुबह की उड़ी बाबुल की चिड़िया बसेरे पर न लौटी, न लौटी। दिन भर का हारा-थका, शून्य की अनन्त सीमाओं का संस्पर्श करता हुआ पूरन जब अपने नीड़ की ओर लौटता तो उसकी श्लथ चेतना को नीड़ का सूनापन तार-तार बिखेर देता और वह धुनी हुई रुई सा ऊब और घुटन की फेनिल-तरंगिमा में समर्पित सा, बुझी

चिता की अधजली लकडी सा दग्धकलुष शेष बचता। जीर्णवसन, क्षत-विक्षत उसने अपनी प्यारी बहना के लिए, अपनी लुटी सुख-शांति के लिए अगणित ज्योतिषियो की चरण-रज फाकी, मान-मनौतिया मानी और पूजन-अर्चन किया किन्तु ग्रह-नक्षत्रो की गति कुठित हो गई, देवता पत्थर दिल निकले, पूजन अर्चन निष्फल सिद्ध हुआ। बाल्यावस्था से ही रामायण की शुद्ध-अशुद्ध अगणित आवृत्तियों से संस्कारित स्वभाव वाला पूरन घोर नास्तिक हो गया। उसकी आस्था वन्ध्या हो गई। परम कृपालु करुणायतन के प्रति निवेदित सारी श्रद्धा-भक्ति अविश्वास, जड़ तर्क और प्रत्यक्ष प्रमाण में केन्द्रित हो गई। उसके निश्छल निर्मल अन्तःकरण में यह वाणी अपने पूरे वर्चस्व के साथ गुञ्जित हुई, उठी और टकराई कि(यावज्जीवन अर्जित पुण्यो की परिणति इतनी दयनीय, इतनी क्रूर और इतनी कुत्सित हो। यदि 'वह' है और इस 'होने मे' उसकी रंच मात्र भी अभीप्सा है तो मैं अपनी सम्पूर्ण चेतना से, सम्पूर्ण शक्ति से उसको नकारता हूँ, 'वह' जो है 'वह' मैं स्वयं हूँ, स्वयं से स्वयं का प्रतिषेध, कितनी उल्टी और बेबुनियादी बात है। पर क्या करूँ, विवश हूँ 'उसे' यही स्वीकार है।)

मेरे बप्पा ने जिंदगी भर पूजा पाठ किया। किसी गरीब दुखिया को नही सताया। किसी का सपने में भी बुरा नही चेता तो ऐसे पुन्य का यह फल, महतारी बिछुरी, दूसरे दिन बाप बिदा हुआ और ले दे के बची बूची बिट्टी भी बहकर किसी घाट-कुघाट लगी। अगर 'परमेसुर' ससुर है तो उसने क्यो ऐसा होने दिया, हमार गरीब का घर उजाडकर गाज गिराकर उसे क्या मिल गया। चूनी चोकर खाते थे। किसी की घी चुपड़ी पर बुरी नियत नही थी फिर भी हमारा इत्ता सा सुख उस 'बज्जुर हिरदय' से न देखा गया और कहलाता है दीन दयाल गरीब निवाज, हुँ) जा मैं नहीं चढ़ाऊँगा फूल ऐसे शुष्क स्वार्थियों पर, नहीं ढारूँगा जल धोबिया पछाड़ पाथरों पर, चंदन घिसते-

घिसते हाथ में घट्ठे पड़ गये और उसके बदले में हमें यह मिला। वाह रे कामता नाथ ! पूरन कै इच्छा खूब पूरन किह्यौ)

चलते समय पैरो के नीचे पडकर कुचल जाने वाली चीटियो की प्राण-रक्षा मे सतत सतर्क, फूली डाली से एक पत्ती के तोडने मे भी पारिवारिक बिलगाव की सी यन्त्रणा और सवेदना का अनुभव करने वाला पूरन उस दिन सब प्रकार से शून्य, संस्कार शून्य, आस्था शून्य, सवेदना शून्य होकर रात भर रोया, यह सोचते-सोचते फफक-फफक कर रोया कि 'अस्पताल जाकर तो मैं पता लगा आया हूँ कि कोई चौकीदार उस रात को ड्यूटी छोडकर कही नही गया तो क्या मुखिया की यह सारी मनगढ़न्त बात है ! मुखिया हरामी पक्का मादर······है जो न करे सो थोड़ा, लेकिन मैं उसका कर ही क्या सकता हूँ—जबरा मारै रोवैं न देय। हाय यही साल क फगुनहटे माँ तो हमरी बिट्टी डोली म बैठके बड़े गाँव चली जाती, बाजे वालो तक को बयाना-बट्टा बप्पा ने दे दिया था पर धन्न रे हुल्की महरानी ! हमरेन घरे माँ तोहिका पहटा चलावैं का रहै। मैं तो एत्ती उमिर कौनों गाँव की बहिनी-बिटिया का सूधी नजर उठाये के ना देख्यौ और मोरी बहिनी ······लौट आउ मोरी सोने अइसी बहिनी दुआरे माँ नौबत बाज रही। लेकिन नौबत, नगडियाँ, शहनाई सब के सब कही किसी मरघट मे सुलग रहे थे धू-धू कर चिटख-चिटख कर, बस एक याद शेष थी, पुकार छटपटा रही थी ! लौट आउ मोरी सोने अइसी बहिनी दुआरे माँ नौबत बाज रही। और फिर अरुण किरण के स्फुटन के साथ जब पूरन दूसरे दिन जगा तो वह बिल्कुल बदला हुआ था। उसने उस दिन गिन-गिनकर चीटियो को कुचला, निष्प्रयोजन वृक्ष की हरी अंकुरित डालियाँ काटी, कच्चे-पक्के फल तोड़े, नदी के निर्मल नीर को एक लाठी से तब तक पीटता रहा जब तक कि थककर चूर-चूर न हो गया। और उसी रात बाल व्यभिचारी बनकर उसने एक अन्धी भिखारिन के साथ (·········। उसकी पैसे-पैसे जोडी जिन्दगी भर की कमाई छीनकर और

भगवान की दी हुई तीन बीघा चार बिस्वा जमीन का मोह छोडकर अपनी जन्मभूमि को अंतिम प्रणाम करके अनिश्चित दिशा की ओर चल पडा।

नव विहान हुआ। सारा ससार एक नये आलोक से भर उठा किन्तु पूरन की चेतना पर विगत रात्रि की निविड कलुष-कालिमा छाई रही। वह अपने तन के अणु-अणु को धिक्कारने लगा, किस अभागिन पाप पूर्ण घडी मे वासना का इतना जघन्य ज्वार उमड़ा था और अपने साथ उसे औघट घाट पर बहा ले गया था। उसे अपने आप से, अपने सर्वाङ्ग से घोर ग्लानि होने लगी उसे इस पर भी कम आश्चर्य नही हुआ कि जिसकी कल्पना मात्र से वह इस समय सिहर उठता है, उस घृणित व्यापार को कैसे उसने अपने चरम आवेश के क्षणों मे पूर्ण मासलता के साथ, प्रज्वलित तृप्ति के साथ भोगा। मध्ययुगीन गलदश्रु भावुकता और विवेक शून्य जड धर्मान्धता के संस्कारों से निर्मित पूरन की नश्वर काया उस अन्धी तरुणी की निष्क्रिय ऊष्मा के कसाव से जैसे दहकने लगी। प्रायश्चित और पश्चातापो के अमूर्त प्रेतों की छायायें मँडराने लगी। उसने अपनी सम्पूर्ण अस्था और भक्ति से पेट के बल घिसटते हुये कामदगिरि की तीन मील की 'दंडौती' परिक्रमा पूरी की। शाम को ऐसा लगा जैसे उसकी एक-एक हड्डी चिटखकर अलग हो जायगी फिर भी उसे एक 'परम विश्राम' की सी अनुभूति हुई। पाप की जो पाषाण शिला बोझ बनकर उसे दबाये हुये थी वह इस पुनीत श्रमश्लथ थकान के साथ न जाने स्वतः कहां विलीन हो गई, उस पर उसे एक सुखद आश्चर्य हुआ। अब उस पर, उसके देह मन पर, आत्मा पर जैसे गेंदे के फूलों की एक सीधी-सादी गार्हस्थिक खुशबू बरस रही थी।

चित्रकूट की तपस्नात वनस्थली मे वह यायावर की भाति विचरण करने लगा। उसने अन्धी की चिरसचित पूंजी पहले ही रामघाट मे मा पयस्विनी को समर्पित कर दी थी। अब पेट भरने की समस्या उसके समक्ष एक प्रश्न-चिह्न बनकर अधर में लटकी

हुई थी। उसने महीनो कुलीगीरी और पडो की मुखबिरी की, हलवाइयों की कडाही माजने से लेकर जूठो प्लेटें और प्याले साफ किये। अपने को, अपने स्वभाव को जमाने के साथ मोड़कर उसने एक प्रकार स समझौता सा कर लिया था। सस्ते फिल्मी गाने को गुनगुनाने मे उस अब वही रस मिलने लगा था जो कभी दिये की धुँधली ज्योति में अटक-अटक कर रामायण पढने मे मिला करता था, नदी से गीली धोती मे लौटते समय हनुमान चालीसा की पक्तियो की अधकचरी आवृत्ति में मिला करता था।

पूरन ज़िंदगी की इन अजनबी तल्ख़ियो को पूरे स्वाद के साथ अभी पूरी तरह न घूँट पाया था कि 'चन्दामृत' का भरा प्याला अनायास हाथ आ गया। शरद पूर्णिमा के शुभ्र पर्व पर कामदगिरि की परिक्रमा करने अमरपुरी मठ का मठाधीश अपने चाटुकार भक्तों के साथ 'तुपक तीर तरवार' सहित रेलगाडी से आया हुआ था। उसने परिक्रमा प्रारम्भ करने के पूर्व अपने कारिन्दे से शुद्ध देशी घी की बनी पाच सेर पूडी-मिठाई दोपहर तक 'चरण पादुका' पर पहुचाने की आज्ञा दूकानदार को भिजवा दी थी। दूकानदार ने यह कार्य, कार्यनिपुण पूरन को सौपा। पूरन निश्चित समय पर पूडी-मिठाई की टोकरी लिए पहुँच गया। पुराने घाव अब कुछ-कुछ भर चुके थे, समय देवता ने उन पर विस्मृति का मलहम लगाकर सुखाना प्रारंभ कर दिया था। उसके सेब से गदराये चेहरे और गठे गठे गौर शरीर ने एक अनूठा आकर्षण फूटा पड़ रहा था। टूटी बटनो वाली कमीज के भीतर से झाकता हुआ उसका स्फीत लोमश वक्ष और कसी बाँहो मे तडपती मछलिया, घुँघराले उपेक्षित बाल सब मिला-जुलाकर उसे एक प्रभावपूर्ण कायक्षम व्यक्तित्व प्रदान कर रहे थे। विपरीत परिस्थितियो और अनभ्र वज्रपात की चिनगारियो से चिटखी उसकी मुख काति एक दयार्द्र शबनमी-सौन्दर्य से आपूरित थी। साठ-बासठ की पकी उम्र वाले महन्त गुरुमुखदास ने अपनी धर्म काँटे वाली दृष्टि से तोले-माशे-रत्ती के भाव से

उसको तौला और पहली ही दृष्टि में उससे विशेष प्रभावित हुए। उन्हे कुछ ऐसा लगा कि जैसे बहुत दिनो से वे जिस रिक्तता का अनुभव करते रहे हैं, वह पूरन को पाकर 'पूरन' हो चुकी हो। पूरन ने पक्तियों मे पत्तलें बिछाकर बडी सफाई और सलीके से 'प्रसाद' परोस दिया। भोजन के पूर्व लम्बी-चौडी स्तुति-माला प्रारम्भ हुई और 'बोलो भाई सब संतन की जै' जैकार के साथ जब वह समाप्त हुई तब तक नर्म-गर्म पूडियाँ ठडा कर अकड गई थी। प्रसाद पाने के उपरान्त महन्त जी शयन करने लगे और एक सेवक हल्को-हल्की मुक्कियो से चरण-चापन करने लगा। बिज्जुक ऐसी अधमुँदी आँखो को मिचमिचाते हुये अधलेटे महन्त जी पूरन को पास बुलाकर बोले—'का हो राम जी! तुमने प्रसाद पा लिया।'

'हाँ महाराज।'

'सब मूर्तियों को पवा दिया।'

'हाँ महाराज। अच्छा डण्डौत महाराज!'

'अरे सुनौ भक्तराज, तुम इतै कितै के आव, पिछली बार जब हम ह्याँ पधारे हते तब तो तुम नईं रये।'

'हाँ महाराज, इसी साल आया हूँ, विपत का मारा भगवान कामता नाथ की शरण में।'

'अच्छा किया रामजी, भगुवान तलक तो ह्याँ आके आश्रम बनाकर रये है, बारा बरिस बनवास के बिताये। धन्नभाग या धरती की। कहो आचारजजी ऊ खानसामा ने का कई है':

'चित्रकूट मे रमि रहे, रहिमन अवध नरेस।
जा पर विपदा पड़त है, सो आवत यहि देस॥'

घिसे रिकार्ड की तरह रुक-रुककर दोहे को दुहराते हुये आचारज जी गंभीर हो गये।

'तो रामजी! का तुम ऊ हलुवाई के ह्याँ काम करत्तो।'

'हाँ महाराज!'

'अरे राम राम ! ऐसो कचन काया और सुघड शरीर पाके ऐसो ओछो काम। चले चलौ अखाडे माँ रइयौ और ठाकुरजी की सेवा करियो !'

'पर महाराज मैं भला कैसे जा सकता हूँ, बिना मालिक से पूछे ?'

'अरे उस भैनचो?' की भली चलाई । हमाई हुकम उदूली करै तो साले खाँ अबहिन कान पकरि कै कालिञ्जर दिखाय देईं ।'

'तो उससे छुट्टी दिला दीजिये महाराज, मैं आपकी चरण-सेवा करके अपने को धन्नभाग मानूँगा ।'

'सब हो जइहैं रामजी, सब हो जइहै, तुम फिकर करौ मती ।'

परिक्रमा कर फौज-फाटे के साथ पूरन को लिए महन्त गुरुमुखदास अपने मठ लौट आये। पश्चिम में साँझ लला रही थी। ठाकुरजी की आरती होने मे अभी काफी 'टैम' था सो महाराजजी 'दिशा-फराकत' के लिए चले गये। पूरन भौचक्का सा आँखें फाड़े बैरागियो की भोग परक गृहस्थी को देख रहा था। देखते-देखते वह ठाकुर द्वारे तक पहुँच गया। ठाकुर द्वारे की मनमोहक सजावट को देखने का उसका यह रोमांचकारी पहला अवसर था। ऊपर कीमती झाड-फानूस लटक रहे थे, देवी-देवताओ की लम्बी चौड़ी तस्वीरों से पूरा 'जगमोहन' जगरमगर कर रहा था, एक बड़े चित्र में रसिक नटनागर श्रीकृष्ण वृक्ष की डालियो में गोपियों के चीर टाँगे कनखियो से मुस्कराते हुये बाँसुरी बजा रहे थे और सकुची-सिमटी बेपरद गोपियाँ एक हाथ से अपने अधमुँदे विशाल वक्ष ढके और दूसरे से जुगुल जंघाओं को छिपाये गिडगिडा रही थी— 'हमरो बसन देहु ब्रज मे बसन देहु।' तस्वीर को देखकर पूरन लाज से गड़ गया तभी किसी ने आँखें तरेरते हुये उसे दपटा—'यहा साले क्या तेरा नारा गड़ा है जो मुफत के मालपुए उडाने चला आया है, वही चितरकूट में जाके जूठी पत्तलें उठा, खबरदार जो इधर का रुख किया, नही तो तेरी बोटी-बोटी अमनियाँ (काट) करके गंगा जी में परवाहित कर दूँगा। रात को खा-पीकर गजरदम शंख बोले अपना रस्ता नापना

नही तो साले, मुसरदास की चिमटे और खडाऊँ की मार जग जाहिर है, समझे चेला के-चो-··।'

पूरन इस प्रकार के अप्रत्याशित वाक् प्रहार के लिए बिल्कुल प्रस्तुत न था। ललकारने वाला कौशेय वस्त्रधारी निपट दुष्ट सा दिखाई पड़ने वाला ऐंचातानी व्यक्ति मुसरदास अमरपुरी मठ का अधिकारी था जो इस समय पुजारी जी के बाहर चले जाने के कारण ठाकुरजी की आरती के उपादान जुटा रहा था। मुसरदास सचमुच मूसर की तरह सुदृढ, सशक्त, गोल-मटोल निहायत भोड़ी सूरत का आदमी था। उसके पोर-पोर से घनघोर विलासिता की सड़ाँध चुई पड रही थी। भेंगी आँखो के कारण उसकी अय्याशी खुलकर अपना विज्ञापन कर रही थी। अधिक कत्था-छालिया खाने से उसके डामर पुते दाँतो मे जड़ी सोने की कीलें बड़ी घिनौनी और जनानी मालूम पड़ रही थी। उसके पैरो मे एक्जिमा के बड़े बड़े चकत्तो के दाग थे जिनमे कभी संक्रामक कीड़ो की नस्ल पल चुकी थी। कड़े से कडे काम मे मुसरदास प्रेत की तरह जुटा रहता, चाहे असामियो से कड़ाई के साथ वसूल-तसील करनी हो, चाहे पुरी या अयोध्याजी से आई सौ मूर्तियो के लिए बाल-भोग या प्रसाद की व्यवस्था करनी हो, वह अकेले मन दो मन के रोट सिद्ध कर लेता। व्यावहारिक सूझ-बूझ मे भी वह अशिक्षित, पूर्ण पटु था। उसके इन्ही करतबो पर मुग्ध होकर बड़े महन्त ने उसे अपना चेला बनाकर वैधानिक अधिकारी घोषित करने की मशा अपने जी हजूरियो से प्रगट की ही थी कि न जाने अभी से ही उसे कहाँ का मद चढ आया था। अय्याशी मे तो वह नम्बरी चंडूल था। किल्ली और किच्ची को 'जुठालने' के पूर्व 'जगमोहन' में खड़ी आदमकद आकर्षक काठ की सुसज्जित परियों के साथ कई बार पुजारी जी ने उसे पकड़ा था और महन्त जी से शिकायत भी की थी किन्तु उसकी कर्मठता और कार्य कुशलता का ख्याल करते हुए उन्होंने डाँट-डपटकर उसे छोड़ दिया था किन्तु अष्टमी के रामदल वाले दिन को तो·········

उस दिन बडे महन्त जी अपने नौकर-चाकरो के साथ रामदल देखने गये हुए थे, साथ मे बड़की गुरुमाईजी बनारसी साड़ी और मथुरा जी की ठापी सलमे सितारे वाली चदरी ओढकर लकदक करती अपने आधे दर्जन लल्ला-लल्लियो के साथ गई हुई थी। मुसरदास की लहुरी गुरुमाई जी का कपार पीडा से फटा जा रहा था इसीलिए वो नही जा सकी और वह भी ठाकुर जी की मूर्ति-मार्जन का बहाना करके छोटी माई जी की हजूरी में रुक गया। बीस-बाइस साल की बछेड़ी जैसी चमकुल छोटी गुरुमाई जी को आये अभी मुश्किल से तीन चार साल हुआ था, किसी चेलाने से उनकी 'परापति' हुई थी। पर अब भी वह कलोरी गाय की तरह हुरकती थी और बडे महराज जी को अपने पुट्ठो पर हाथ न रखने देती थी। क्योकि महराज जी के श्री मुखारविन्द से उनको सड़े रामकरैले की सी बास आती थी। वे कभी भी ऐसे 'छछूँदरे' के साथ न आती अगर उन्हे यह पहले से मालूम होता कि वहाँ एक 'मछेरन' भी है। मछेरन की परछाईं से भी छोटी गुरमाई जी को उबकाई आती थी, चतुर सुजान महराज जी ने यद्यपि दोनो के रहने के लिए अलग-अलग रंग महलो मे इन्तजाम कर दिया था। छोटी गुरमाई जी के उफनते दूध के समान यौवन से हरित दूर्वादल, धारोष्ण दूध और आग पर गरमाए जाते हुए ताजे मक्खन से निकलने वाली मिली-जुली खुशबू बिखरती रहती फिर भी उनकी हमेशा यही शिकायत रहती कि भरी हुई मछलियों की बू के मारे मुझे मिचलाई आ रही है, और वे महराज जी को भी एक मगरमच्छ कहकर परे हटा देती। पर उस मिली-जुली दुधिया खुशबू में कुछ ऐसी मंत्र-मुग्धिल जादूगरी थी कि महाराज जी झनझना कर भी स्वर-लहरित हो जाते। उन्हे यह भी समझते देर न लगती कि छोटी ठकुरानी जी बड़ी से सवतिया डाह रखती हैं और इसीलिए उन्हे इतनी दूर रहने पर भी मछलियो की बास आती है पर वे लाचार थे क्योकि गुजारा उनका मछलियो से भरे-पूरे 'राम-सरोवर' मे ही होता था फिर स्वयं भगवान् ने भी तो मत्स्य का रूप धारण किया है अतः उनसे

'घिना' कैसी ? बडे रगमहल के 'राम-सरोवर' मे गोता लगाते समय महाराज जी को तमाम छोटी-बड़ी मछलियाँ घेर लेती, नन्ही-नन्ही मछलियाँ तो उनके पेट और पीठ पर चढ जाती, नोच खसोट करती, अपने चारो ओर मत्स्यावतार परम प्रभु की भरी-पुरी झाँकी देखकर वे कुलकित-पुलकित हो जाते और कुछ दिनो के लिए उन्हे दूब, दूध और मक्खन की मिली-जुली खुशबू भूल जाती पर मछलियो की उछल-फ़ाँद, नोच-खसोट और जानी-पहचानी बास से ऊबकर जब वे वहाँ से बगटुट भाग निकलते तब 'राम-सरोवर' से निकली फटे बाँस सी 'आकाश-वाणी दुग्धशाला से टकराती हुई सारे अखाडे को कँपाकर शून्य मे लीन हो जाती : अरे हूहैं वई बरेदिन पतुरिया के पैताने। बडे महाराज जी अब ऐसी वानप्रस्थी आयु मे कलोरी कामधेनु के दुग्ध-दोहन मे पूर्ण अयोग्य थे इसीलिए वृषभानुजा भी हलधर के बीर से अन्तरंग दिलचस्पी नही लेती थी। फिर भी हलधर के बीर बरसाने की कसी कलोरी को फुसला-बहला कर जमुन-कछारो मे ले जाते और हरी घास की मखमली शय्या पर ले जाकर तुरन्त 'मुँह बन्द' लगा देते, वे ललच-ललच कर रह जाती। ऐसा गँवार ग्वाला किस काम का ? जो कसे चुनचुनाते थनों का बूँद-बूँद रस निचोड कर उन्हे शान्त-शिथिल न कर दे। लेकिन हस रूपधारी गुरुमुखदास जी तो अब : जब जाना तब परिहरी, नारी बड़ा विकार ॥ फिर याद आता : कामिहि नारि पियारि जिमि, लोभिहि प्रिय जिमि दाम। तिमि रघुनाथ निरन्तर, प्रिय लागहु मोहि राम ॥ पर मूसलाकार सुदृढ़ सशक्त मुसरदास कुछ दूसरे ही रंग ढंग वाला था तभी न उसे नेवता मिला था : 'नित साँझ सकारे हमारी ललाइन गय्यन को दुहि जैबो करौ।'

और सौभाग्य से वह सलोनी साँझ आज आई थी। सारा अखाडा रामदल देखने गया हुआ था। मेले ठेलों से अनासक्त बूढ़े पुजारी जी दो दिन पूर्व ही 'चेलाने' गये हुये थे। रामलला जू की चादी की बनी मूर्ति को इमली और सिरके के जल से 'शुद्ध' करते समय मुसरदास को

छोटी गुरमाई जी की आवाज़ सुनाई पडी सो रामललाजू को इमली और सिरके के चहबच्चे मे छोड़कर आज्ञाकारी गुरुभक्त मुसरदास छोटे रगमहल की ओर दौड़ा। आईना जड़े एक बड़े पलग की दुग्ध-धवल शय्या में छोटी गुरमाई जी गुडिया की तरह बायें करवट के बल पौढ़ी हुई थी। रेशमी चादर से खुला हथेली पर टिका उनका प्यारा भोला मुखड़ा सफेद गुलाब की तरह अपनी सारी शुभ्रता और मद सुरभि लिए काप रहा था। मुसरदास विनम्र सेवक की भाति माई जी की सेवा मे उपस्थित हुआ।

'चेला जी! थोई चदन तौ घिस लाओ, कपार पीडा से फटो जा रओ ऐ।'

और आचमनी मे चेला जी जब गाढ़े चदन का केसरिया लेपन लिए हुए फुर्ती से लौटे उस समय गुरमाई जी गाव तकिया मे टिकी बैठी थी। मुसरदास को पूरे माथे पर लेप लगाने की आज्ञा हुई। लेप लगाने की आज्ञा पाते हुये चेलाजी को ऐसा जान पड़ा जैसे इसी समय उस पर महन्ती का टीका लगाया जा रहा हो, कंठियाँ पड़ रही हों क्योंकि जिस छोटी गुरमाई जी की छिगुनी पर बड़े महाराज जी लगूर की तरह नाचते थे वही आज उस पर इतनी कृपालु थी। कुन्दे के समान कठोर हथेली की चिथी सख्त अंगुलियाँ लेपन लगाते हुये माई जी के फेन जैसे उजले माथे पर फिर रही थी, रूखी अगुलियो के रंचक दबाव से उनकी सहमी-सहमी सिसकी अलसाये-अकुलाये होठो तक आते-आते घुल जाती। हरसिंगार के गुच्छे जैसी मुलायम अपनी अगुलियो में चेला जी का फौलादी पजा फँसाकर वे उसे अपने गले तक खीच ले गई और बिना कुछ कहे उसे वहीं पर छोड़कर लम्बी-लम्बी सासें भरने लगी। चेलाजी बड़ी कोमलता और सतर्कता से उनकी जामुनी गर्दन पर चंदनियाँ लेपन लगाते रहे, उसकी अंगुलियाँ अनूठे रोमाच की रस-गागरी पर अनासक्त भाव से फिसलती रही फिर अनजाने अंगड़ाई लेने पर कुच-कलशों की छलकन से टकरा गई। गुरुमाई जी की काजल-

प्यासी आखो से नशीली नीद के लच्छे छलक रहे थे। जैसे साप की बाँबी पर अनचित्ते हाथ जा पडा हो, ऐसी ही दशहत से उसने घबराकर अपना हाथ खीच लिया और 'जगमोहन' की निर्जीव परियों का शुष्क-सुख-भोगी मुसरदास 'द्वार किमेक नरकस्य नारी' का मूक पारायण करता हुआ आज हाड-चाम की खदबदाती औरत को छोडकर मदिर की ओर भाग खड़ा हुआ। अपने इस विचित्र सयम पर उसे स्वयं आश्चर्य था। रामललाजू की मूर्ति चहबच्चे से निकालते समय उसे आचारज जी का वह कथन याद आ रहा था कि 'वीरो मे सबसे बड़ा वीर कौन है?'

'जो काम-बाणो से पीड़ित नही होता।'

'बुद्धिमान्, समदर्शी और धीर पुरुष कौन है?'

'जो स्त्रियो के कटाक्षो से मोह को प्राप्त नही होता है।' धन्य परमेसुर तुम्हारी लीला, तभी तो नम्बरी अय्याश और चंडूल मुसरदास को तुमने आज सबसे बड़ा वीर, बुद्धिमान, समदर्शी और धीर पुरुष बना दिया। इधर शाम झुके रामललाजू की मूर्ति को पूरे पंचायतन समेत शुद्ध कर मुसरदास उन्हे सिंहासन पर पधरा कर आरती उतार रहा था और उधर महन्त गुरुमुखदास जी रंगमहल मे छोटी ठकुराइन के सिरहाने पड़ी मंदिर की चदन सनी आचमनी को देखकर उसे शुद्ध-सधुक्कडी गालियो की महकुई पंजीरी परस रहे थे।

पूरे मठ मे सबसे 'तेजवन्त-'मूर्ती' थी लँगोटाबन्द लक्कड़-बाबा' की। अर्धनग्न लक्कड बाबा जाडा गर्मी बरसात बस सिर्फ एक टाट की फट्टी लपेटे रहते थे। टाट का ही बिछावन, तकिया और चादर थी। उनकी बरगद के दूध से चिपकी जटाओं की उलझी लटों में जुएँ के कितने परिवार छत्ता ताने पल रहे थे। उनके हाथ में बबूल का एक गठीला-कटीला 'डंडा' जिसे वे 'काल-भैरव' के नाम से पुकारा करते थे, सदा सुशोभित रहता था। नागा बाबा जितने 'शान्ती-मूर्ती' थे उतने ही लक्कड़ बाबा 'करोधी'।

'काल-भैरव' की सिद्धियों के विषय मे अनेक आश्चर्यजनक गाथायें पूरे जनपद मे प्रचलित थी। 'काल-भैरव' को सुँघा देने पर काल भी पराजित हो जाता था। कितने मरे हुये जीवो को काल-भैरव के द्वारा लक्कड बाबा ने जीवन-दान दिया था। एक बार तो वह बड़े महाराज जी की पीठ पर भी बरस पडा था और वे मुकदमे में हारते-हारते भी अन्त में 'हाइकोरट' से जीत गए थे। लक्कड़ बाबा रहते तो रामानंदी वैष्णव अखाड़े मे थे लेकिन उठते-बैठते 'राधेश्श्याम राधेश्श्याम' की रट लगाते रहते थे और वैष्णव भक्तो को चिढ़ाने के लिए बीच-बीच में जपने लगते थे : 'राधेश्श्याम राधेश्श्याम, चल बे रमदसवा साले दाब पाँव, चिलिम थाम। राधेश्श्याम राधेश्श्याम।' मुसरदास लक्कड बाबा की बडी सेवा करता था और काल-भैरव की कृपा-प्राप्ति की बाट जोहा करता था। लेकिन वह सुअवसर अभी तक उसे न मिल पाया था।

बारादरी मे बैठी दो 'मूर्ती' जो 'मौनी महराज' के नाम से प्रख्यात थी, आज अपना मौन तोड़कर एक दूसरे से झगड़ रही थी, इस कमण्डलु और चिमटा युद्ध का कारण था प्रातःकाल मिलने वाला 'बालभोग'। जब कभी एक 'मूर्ती' को संध्या स्नान में 'बेशी टैम' लग जाता तो दूसरी 'मूर्ती' उसका 'बालभोग' भंडारी जी से ले लेती लेकिन आज इसमें व्यतिक्रम उत्पन्न हो गया था। दोनो संड-मुसड 'मूर्ती' अपने-अपने तकिया कलाम का प्रयोग करती हुईं एक दूसरे से गुँथी हुई थी।

'धत् तेरी ऐशी की तैशी नरशिंघा राम इच्छा शे'—नकुलदास गुर्राये।

'ते ते तेरी माँ का मिष्टान मारूँ नाना प्रकार से'—नरसिंघदास चिग्घाड़े।

'हट जा शाले राम इच्छा शे।'
'न न नही हटूँगा साल्ले नान्ना प्रकार से'
'नहीं मानेगा तू राम इच्छा शे।'
'न न नहीं मान्नूँगा नान्ना प्रकार से।'

'ले बचा बेटा नरशिंगदाश राम इच्छा शे।'

'स स सम्हल जा साल्ले नकुलदास नान्ना प्रकार से।'

इस प्रकार इस ब्रह्म-बेला मे 'राम इच्छा शे' दोनों मूर्ती 'नान्ना-प्रकार' के सुमिरन स्तोत्रों से सध्या-वंदन कर रही थी। बारादरी के एक कोने में उदासीन बैठे शान्ती मूर्ती 'नागा बाबा' अपनी कोरे लट्ठे की कलकित कौपीन पर, जो पहली-पहली धुलाई के कारण अकड़ गयी थी, लोटे मे आग भरे हुए 'इस्त्री' कर रहे थे। नागा बाबा की बढी हुई ढाई हाथ की सघन दाढ़ी और उनकी पिंडुलियो को छूने वाली जटायें ही एक प्रकार से उनके अगले-पिछले भाग की परिधान थी। मौज में आने पर वे कभी-कभी किसी दानी भगत का दिया हुआ 'पट्ट' भी स्वीकार कर लिया करते थे। इस्त्री किया जाने वाला कौपीन इसी प्रकार का था।

'त्यागी जी' अन्तः प्रकोष्ठ वाले भंडारे मे घुसे किल्ली केउटिन को 'भोग-राग' की सामग्री बडे प्रेम-भाव से अर्पित कर रहे थे। सीता-रसोई मे रसेदार साग 'सिद्ध' होरहा था। सूखे साग के लिए एक 'मूर्ती' जम्हाई ले लेकर राम करैला (कुम्हडा) अमनियाँ कर रहा था। महा-परसाद (चावल) तय्यार हो चुका था। रसोइयाँ रणछोडदास का ध्यान भोग-राग की अर्पण-लीला देखने की ओर होने के कारण बेंकुठी (दाल) जल रही थी और उसकी जलांध चारों ओर फैलने लगी थी। किल्ली रँगबदना (हल्दी) रामरस (नमक) नरसिंघी (हींग) और लका (मिर्च) को आँचल में समेटे-समेटे भंडारे से निकली और उसे रखकर 'फुल्का' बनाने के लिए आटा गूँधने लगी। रणछोड-दास सूखे साग को छौंककर साग अमनियाँ करने वाले मूर्ती को जल पीने के लिए 'गंगा-सागर' लाने को भेज दिया। किल्ली आटा गूँधकर लोई काटने लगी। रणछोड़दास 'विष्णु-सहस्रनाम' का अशुद्ध पाठ करते-करते उसके नजदीक सँटते रसियाते से बोले—

'किल्ली हो किल्ली, हो तुम बड़ी चिलबिल्ली, साधू महत्मा लोगन

को कहूँ एत्ती-एत्ती बडी लोई काटो चइये, तुम तौ अपन दूधू (स्तन) बरोबर काटत हौ। सोरा बरिस वारी काटौ ना गोल-गोल' खी खी खी खी।

'हौ महराज, ई आपन रमाइन-भागवत अपनेइ पास राखे रहौ, कहौ तौ फुल्का बेली, कहौ चली जाई, छूँछ पँजीरी का तौ कबौ पूछो नईं, हाँ नही तौ'—सत्तर घाट नहाई किल्ली निर्लज्ज कमान खीचे कुहकी।

'अरे तू वा दिना काहे नाही बोल दियो री, अच्छा आज बियारी बाद 'जगमोहन' पे अइयो, हम तेरे कूँ धनियाँ वाली महकुई मेवा-पडी पंजीरी खिलावी। हाँ रे, बडे महाराज चितरकूट से आज कौन 'मूर्ती' का लाये है, बडो सुघड 'मूर्ती' है।'

'आचारज जी त्यागी बाबा से कय रहे थे कि चेला बनाबे खाँ लाये हैं'—किल्ली ने धीरे से कहा।

'मूर्ती' तो भले मानुस दिखे है, आगे हर इच्छा, ई मुसरदास तौ अबही से ऐसो जुलम जोत रओ है कि का बताई?' सीता रसोई तैयार हो जाने पर रसोइयाँ थाल भरकर मुसरदास के पास ले गया, उसने बड़े नेम से पट बन्द कर और टुनटुनियाँ हिला-हिला कर ठाकुर जी का भोग लगाया और ठाकुर जी के सूक्ष्म भोग के बाद स्वय स्थूल भाव से डटकर प्रसाद पाया। तत्पश्चात् नागा, मौनी, त्यागी, फलाहारी लक्कड बाबा और आचारज जी तथा अन्य पंद्रह-बीस मूर्तियाँ एक पंक्ति मे बैठकर आध घण्टे तक सातों नदियो, तीर्थों, समुद्रो और देवी-देवताओं की जयजयकार करने के उपरान्त प्रसाद पाने लगी। नागा बाबा बैंकुन्ठी के जल जाने की शिकायत करते हुये भुनभुनाने लगे। रसोइयाँ जी बोले—'सुन रे नागा जो सागपात प्रभु-इच्छा से मिलता जाये, पाते जाव, ज़माना जै हिन्द का है, कल मुसरदास के टैम पर बैकुंठी तो बैकुंठी, चौलाई का साग तक नही मिलेगा। मोटा 'महापरसाद' (चावल) भी आज कुछ-कुछ कच्चा रह गया था और फुल्के तो जैसे बताशे के माफिक थे। नागा बाबा की 'इंद्री' परपूरन नही हुई, वे

होठों मे रह रहकर भुनभुना उठते थे कि उधर से डकारते हुये मुसरदास निकले—'का है रे नगवा! जब देखें नंगाय पर उतारू रहत है।'

त्यागी बाबा ने मुसरदास के सकेत से भोजन समाप्त कर भंडारे से नागा बाबा को उनका प्रिय मिष्टान्न गुड को एक छोटी डली लाकर दी। अब नागा बाबा पेट पर हाथ फेरते और पैर फैलाते हुये 'भ्रित' की याचना करने लगे। मुसरदास अँगूठा हिलाते हुये बोला—'भ्रित साधु-सन्यासी नही पाते, उछलेगा तो कहाँ जायेगा रे नगवा, कौन कह रहा था कि आज नागा अपनी लँगोटी पर लुटिया घिस रहा था, सुना त्यागी जी!'

इस आक्षेप से 'शान्ती मूर्ती' नागा बाबा जल्दी से थोडा बहुत भोजन समाप्त कर खिसक गये। पूरन का भोजन बडे महाराज जी के ही भडारे में हुआ। नागा बाबा की आज पूर्ण तृप्ति नही हुई थी, दोनो मौनी अब मौन हो गये थे। नागा बाबा अधपेट खाये बेचैनी से करवट बदल रहे थे कि 'जगमोहन' के कोने मे उन्हे सहसा गुँथी हुई दो छायाकृतियाँ दिखाई दी। नागाबाबा दम साधे हुये रात के सन्नाटे मे उनकी खुसर-पुसर और अस्पष्ट कार्य-कलाप देखते रहे। थोडी देर मे एक छायाकृति तो भडारे की ओर चली गई और दूसरी उनकी ओर बढने लगी। नागा बाबा खड़ाऊँ पहने खटपट करते उठे और ललकारा। छायामूर्ति ठिठक कर वही रुक गई। नागा बाबा ने अँधेरे मे उसे झकझोर कर पकड लिया। नागा बाबा की सघन रोमिल छाती मे किल्ली के गदराये अमरूदिया उरोज धँसे जा रहे थे और उसके मसृण नितम्बो के इर्द-गिर्द बाबा की चरसिया हथेली अनजाने फिर रही थी। नागाबाबा ने अपनी बाँहों मे बँधी एक अछूती गन्ध का अनुभव किया। एक ऐसी गन्ध जो उसे अब तक न तो गाँजे या चरस मे मिल पाई थी, न बाल-भोग या मोहन-भोग (हलुये) में। सर्वथा नूतन, मादक, एक निखालिस औरत की गंध, पुरुष के पौरुष के लिए रस में सराबोर प्रकृति की प्रकृत मिठास। 'शान्ती मूर्ती' नागा बाबा कुनमुनाये, फिर एक बारगी किल्ली को परे हटाकर चीखे—

'कहाँ गई थी इधर खसम खसोटी, बोल, बोल, नही तो अभी तुझे पौलकर परवाहित करता हू। ये क्या छिपाये है रे पतुरिया धोती के छोर मे ?'

'पाँव पडती हूँ महराज, छोड दीजै, ठाकुर जी का परसाद है, रसोइयाँ जी दीहिन है।'

'ला दिखा साली इधर, हमको साला बोलता था कि जो सागपात प्रभु-इच्छा से मिलता जाय पाते जाव, जमाना जै हिन्द का है और खुद तौ पतुरियो को 'परसाद' 'पवाता है। हाय राम रे, ई धनिया वाली महकुई मेवा पडी पजीरी और इत्ती ढेर सी, हमको तो दशहरे के दिन चुटकी भर भभूत ऐसी दिया था, थोड़ा बेशी माँगा तो बोला 'परसाद' 'परसाद' ऐसा मिलता है बाबा, लेना हो लेव नही राम भजो। साधू-सन्तो को तो एक मुट्ठी देने मे साले की·········· और पतुरियो, छिनालो को साला पसेरी-पसेरी भर बाँध देता है। घोर कलजुग आ गया है। शिव शिव शिव। ठहर जा चुडैल, अभी मैं तुझे बड़े महाराज जी के दरबार में परवेश कराता हूँ।'

'छिमा करो महराज, छिमा करो, आप साधू महत्मा हौ, हम गरीबन की भूल-चूक छिमा करो। ई परसाद और ई दो रुपिया 'पवन-पान' के लाने दासिन की दच्छिना कबूल करौ महराज स्वामी !' नागा बाबा ने विरक्त भाव से दो रुपया चरस के लिए और पंजीरी का भरा दोना स्वीकार कर लिया। लुटी-कुटी किल्ली कलपती चली जा रही थी और नागा बाबा पुलकित चित्त से पद्मासन मे बैठकर हरिओम तत्सत् के साथ महकुई मेवा पडी पंजीरी को मुँह-फेंक फकियाँ लगा रहे थे।

मुसरदास ने ब्रह्म-बेला मे 'परभाती' का शख लहरियोदार ध्वनि में फूँक दिया। सब मूर्तियाँ जग गईं। नये दिन का काम-काज प्रारंभ हो गया। गोशाले से सँटी दालान से दही मथने की 'छल्लर-मल्लर' की आवाज सुनाई पड़ने लगी। उस कर्ण-सुखद ध्वनि मे

आत्मलीन होकर आचारज जी मधुर स्वर से 'गोविन्द दामोदर-स्तोत्रम्' का मौखिक पाठ करने लगे :

गृहे गृहे गोपवधूसमूहः, प्रतिक्षणं पिञ्जरसारिकाणाम् ।
स्खलद्गिर वाचयितु प्रवृत्तो, गोविन्द दामोदर माधवेति ।।

नागा बाबा को रात की महकुई पजीरी की मोटी-मीठी डकारें अब भी आ रही थी, 'बेशी' खा जाने के कारण उदर भी अफर रहा था, वे इतना दिन निकल चुकने के बाद भी अपनी कमरी मे गुड़ी-मुडी लिपटे लेटे हुये थे । चरस की चिलम जो रोज ब्रह्म-बेला मे एक ज्योतिमान् लपट छोडा करती थी, आज बुझी-बुझी सी थी । दोनो अश्विनी-कुमार मौनी महत्मा मे पुनः मैत्री स्थापित हो चुकी थी और वे किसी समस्या को सुलझाने मे व्यग्र-व्यस्त दिखते हुये 'राम इच्छा शे' 'नाना प्रकार से' की आवृत्ति करते हुये 'राम-रसडे' मे डूबे हुए थे । नागा बाबा को अब भी समाधि में लीन देखकर एक ने आवाज लगाई—'जागिये नागा जी कुँवर पछी बन बोले । समाधि त्यागो महराज, डंडौत् ।' नागा जी अब भी शात-चित्त स्थितप्रज्ञता की स्थिति मे सुस्थिर थे । महन्त गुरुमुखदास 'दिशा-जगल' से फराकत होकर स्नान करने के लिए एक चौड़े-चकले पीढे पर आसीन हुये । उनके अगल-बगल खड़ी इड़ा-पिंगला नाडियो सी दो मदडूबी मस्त मत्स्य कन्यायें कलश से जल की शीतलधारा हंस स्वरूप साधक के ब्रह्मरध्र मे ढारती हुई सुषुम्ना का द्वार खोलकर उन्हे 'महासुख रस' की प्राप्ति करा रही थी । गुरुमुखदास ने किल्ली की नाभि मे स्थित छः दल वाले स्वाधिष्ठान चक्र को अपने अंगूठे की कुण्डलिनी से बेधते हुये किच्ची के वक्ष-स्थित सोलह बूटों वाले अनाहत चक्र को पार कर लिया । हठयोग की साधना में आरूढ़ गलितं-पलितम् महाराज जी दक्षिण की नदियो का गलत-सही नाम उच्चारण करते हुये मोक्ष की कुण्डी खटखटाने लगे । स्नान के बाद एक मुलायम तौलिए से जब किच्ची थोडी रगड़ के साथ उनकी दिव्य काया पोंछने लगी

तो वे एक रसभरी चितवन डालकर बिदुराये। कफन सी उगा बाबा और
और अचला डालकर महन्त ठाकुर जी के दर्शन करने ठाकुरैठ् गये।
ओर चले गये और किल्ली उनका उतारा अगौंछा फीचने लगास
मुसरदास ठाकुरद्वारे की झिझरियो से अपने गुरु महराज की अनुकरणीय
क्रीडाओ के दिव्य दर्शन का स्वाद लेते हुये चेला बनने से वचित अपनी
बदकिस्मती और पूरन की अचानक 'अगवानी' पर दाँत पीस
रहा था।

पूरन के खान-पान की व्यवस्था महाराज जी के निजी भडारे में
हो गई थी और रहने के लिए 'जगमोहन' के बाजू वाला कमरा उसे दे
दिया गया था। उसके जिम्मे महज काम यही था कि जो मठ को चल-
अचल सम्पत्ति के रूप मे धर्मादे खाते की सरकारी माफी मिली हुई थी
उसका बारीकी से हिसाब-किताब रखना, भडारे के रसद की देखभाल
और मठ की ऊपरी व्यवस्था तथा धार्मिक ग्रथो का पारायण करना। मठ
का एक अपना बाग भी था जिसमे हर मौसम के फल समय-समय पर
मिलते रहते थे। सचमुच किसी भी मठ की आन्तरिक-आर्थिक व्यवस्था
मे अनायास इतना बडा अधिकार पाकर 'अधिकारी जी' बन बैठना बड़े
भाग्य की बात थी। मुसरदास के सामने से परोसी थाली जैसे किसी ने
खीच ली हो इसीलिए वह पूरन उर्फ पूरनदास को मठ से खदेड़ने के
नाना कुचक्र रचने लगा। जब से पूरनदास जी का अचानक आविर्भाव
मठ मे हो गया था उसी समय से मुसरदास का पुराना दबदबा और
आतक धीरे-धीरे कम पड़ने लगा था। पहले उसकी बातें सुनकर भी
दूसरी 'मूर्ती' सुनी-अनसुनी कर दिया करती थी पर अब तो एक दिन
नागा बाबा ने ही कुछ कहने पर उलट कर उसके मुँह पर फटाक से
जवाब दे दिया—'साला मुसरा धमधुसरा, अग-अंग से कोढ फूटेगा, ठाकुर
द्वारे की पडियो के साथ। राम राम। नरक मे भी आसन नही मिलेगा।'
अखाड़े की सिगरी मूर्तियो के सामने इस प्रकार खुल्लमखुल्ला बिना घर-
घाट वाले एक नागा से अपमानित होने का जीवन मे यह मुसरदास

आत्मलीन

स्तोत्रम्

। वह तिलमिलाकर खून का घूँट पीकर

मे सामूहिक रूप से रात को दस ग्यारह बजे
ती थी जिसमे समस्त मूर्तियो को उपस्थिति
जी वेदशास्त्र, उपनिषद्-पुराण की कथायें सुनाते
इसमे दोनो गुरुभाई भी चिक की आड मे बैठकर
कथा सुनते ...ा-विसर्जन के पश्चात् 'मूर्ती' लोगो के मनोरंजन के लिए बड़े महाराजजी की आज्ञा से मुसरदास घिसे-पिटे 'रिकाडो' को 'पूनोगिलास' पर बजाता था। कथा समाप्त कर छल-कपट से दूर रहने वाले परमहंस आचारज जी पूनोगिलास के 'भजन' सुने बिना ही चले जाते थे। कभी-कभी चार छः मूर्ती लोग बडी रात तक ढोलक-मँजीरे पर नई-नई तर्ज वाली 'कीर्तन' करते रहते थे।

भजन-कीर्तन के अतिरिक्त महाराज जी गान-विद्या के भी परम शौकीन थे सो तीन-चार 'महिन्ने' मे इधर-उधर से आये कव्वाल, भाट और तवायफें हाजिर हो जाया करती थी। 'नागपुरी संतरे', 'मुजफ्फरपुरी-लीचियाँ' और 'इलाहाबादी सफेदो' के अलावा पटना, कलकत्ता, रायपुर, बिलासपुर और आगरा दिल्ली तक की रसभरी मुसम्मियाँ, रसोगुल्लो, नमकीन चाट और समोसे मौसम-मौसम पर महाराज जी को भेंटने के लिए अपने आप आ जाते थे। सौभाग्य से आज दोपहर झुके अपने दो उस्तादो को साथ लिए मय तबला सारंगी के दो अदद 'नागपुरी-संतरे' और 'इलाहाबादी सफेदे' हाजिर हुये। महन्त गुरुमुखदास दोपहर का विश्राम करने के लिए शयन-भवन मे विराजमान थे। पखाबरदार से इत्तिला भिजवा दी गई और गुरुमुखदास आँख मीचते हुये झट आसन पर अवतरित हो गये। तबलची, सारंगिया और दोनो तवायफें उनकी गद्दी से थोडी दूर हटकर फर्श पर बिछे कालीन पर बैठ गई। बात की बात में महफिल जम गई। बिना बेतार के तार का समाचार पाकर धीरे-धीरे इधर-उधर बिखरी 'मूर्तियाँ' झोली मे लम्बी-

माला सटकातीं, अजपा जाप करतीं हुई झुमकने लगी। नागा बाबा और लक्कड बाबा भी महफिल से दूर हटकर नंगी जमीन पर बैठ गये। मुसरदास 'ज्ञान-चर्चा' का सरंजाम जुटाने मे लगा था। चेला पूरनदास और आचारज जी का भी बुलौवा हुआ। चेला बडे महाराज के निकट एक आसन पर बैठ गये, आचारज जी 'पातंजल-सूत्र' पढ रहे थे, अतः वे न आ सके। मुसरदास की किसी ने खोज-खबर तक न ली। आज पूरननास के नेत्रो के समक्ष विरक्त संन्यासियो की आध्यात्मिक दिन-चर्या का एक गुलाबी पृष्ठ खुल रहा था। वह अवाक् अपलक नेत्रों से दोनो भरी-भरी जवान, मादक अनग बालाओ को निहार रहा था। अठारह उन्नीस की मुन्नीजान और पन्द्रह सोलह की शोख हसीना बेगम मेनका और उर्वशी सरीखी महन्त गुरुमुखदास की 'इन्दर सभा' मे बैठी चहक रही थी।

शर्मो-हया को चूसकर लगाई गई उभरे होठो की गाढी लाली और नुकीले नयनो में कजरे की बारीक लकीरें। हाय रे! पापं शान्तम् पापं शान्तम्। उफनती चोलियो मे जबरन दबा कर बाँधे गये जुल्मी-जोबन आदम की प्यास को, हर साँस को बींधने के लिए कसमसा रहे थे। काजली करवटो मे नशीले नाग का सम्मोहन था जो बाबा लोगो के 'स्थिर-गभीर क्षीर-सागर' को मथकर उसमे ज्वार उठा रहा था। फिर तीरथराज वाली अप्सरा की 'खपसूरती' तो व्यास जी महराज के वर्णन से भी बाहर की 'बस्त' थी।

किल्ली का मालिक महादेव मलमली झालर लगा ताड का बड़ा सा पंखा झल रहा था और रह रह कर दबी कनखियो से कभी महन्त की ओर और कभी दोनो बाइयो की ओर देख लेता था। थोडी देर मे गोरे-गोरे पानो की गिलौरियाँ, जायपत्री, इलायची, लौग, जर्दा, सुर्ती, किमाम और 'मुखविलास' की डिबिया सहित चाँदी की तश्तरी आ गई। नशा-पत्ती हुआ। बीडो से उभरे हसीना के मखमली कपोल और गुदनेदार कपोलकूप बडे प्यारे लग रहे थे। गुरुमुखदास की बिज्जुकी

आँखें रह रह कर कपोलकूप मे डुबकी लगाते हुए हसीना की आँखों से टकरा जाती थी और तब हसीना बेगम बडी प्यारी अदा से शरमाकर अपनी साडी का छोर छिगुनी मे छल्लो की माफिक लपेटने लगती थी जैसे वह छोर न होकर महन्त जी का दरियाव दिल हो। किस्सा कोताह। साजिन्दो ने साज़ उठा लिये और मुन्नीजान ने द्रुतविलम्बित लय मे तान खीच कर एक ठेका लगाया और चहक उठी :

हो मेरो बलमाँ, हो मेरो सय्याँ चले परदेश
मिज़ाजिन बोलत काय नइयाँ।
हम है राजा तेरो केशर की क्यारियाँ, तुम सावन के मेह
घुमड जल बरसत काय नइयाँ।
हम है राजा तेरी बन की हिरनियाँ, तुम ठाकुर के लाल
तुपक तीर मारत काय नइयाँ।
हाँ ऽ ऽ ऽ सोना लादन पिउ गये, सूनी कर गय सेऽऽज
सोना मिला न पिउ मिले, रूपा हो गये केश
मिज़ाजिन बोलत काय नइयाँ।
जोबन गयो तो भल गयो, तन की गई बलाय
जने-जने को रूठिबो, हम सो सहा न जाय।
मिज़ाजिन बोलत काय नइयाँ रे, काय नइयाँ रे।
काय नइयाँ ऽ ऽ ऽ रे, मि···ज़ा···जि···न···।

जैसे ही एक झटके के साथ सारगी के स्वर सहमे और तबले की थाम थमी, महन्त ने रसीले गाने की दाद को खुजलाते हुए कहा : 'भइ मुन्नीजू, और त पूरो भजन नोनो, मै अखीरी कड़िन माँ हमाई तुमाई पटरी नइँ बैठे।' मुन्नीजान 'सय्याँ की गोदी में जलेबी बन जाऊँगी' जैसे अदाज मे दुहरी हो गई और सब बाबा लोग खी खी खी कर हँस पड़े।

अब सामने गहरा मैदान था। हसीना के रग-रूप और बनाव-सिगार के मुताबिक 'चीज' भी कोई 'चीज' होनी चइये, सो सब बाबा

'अब तौ बाई तुम्हाई मन मुराद जरूर पूरन हूहै, बडी भागवन्त हौ बाई, या लकुडदासजू की चोट खाबे खौं बडे-बड़े राजान-महाराजान तरसतु एँ, धन्न है, धन्न है ।'

पाँच बज चुके थे। ज्ञान चर्चा के लिए भी जल्दी थी, इसलिए न चाहते हुए भी महफिल बरखास्त हो गई। महन्त जी ने सौ-सौ रुपया दोनो बाइयो को और पाँच-पाँच दोनो साजिन्दो को न्यौछावर दिया। जाते-जाते एक साजिन्दे से महन्त जी की कुछ कानाफूसी हुई और फिर सलाम करके चारों रुख्सत हो गये ।

ठाकुर जी की आरती के बाद 'ज्ञान-चर्चा' आरम्भ हुई। व्यास गद्दी पर बैठे आचारज जी संयत शान्त स्वरों मे धर्म की परिभाषा प्रस्तुत करते हुए बोले : मनु के अनुसार 'धारणात् धर्मः इत्याहुः' अर्थात् जो धारण किया जाय, जीवन को सहज रूप से धारण करने मे सहायक हो सके वही धर्म है। जो कर्म-काड जीवन के लिए भार स्वरूप हो जाय वह धर्म नही अधर्म है।

जैमिनी के अनुसार 'चोदनालक्षणोऽर्थः धर्मः' 'तद्वचनादाम्नायस्थ प्रामाण्यम्' अर्थात् जिसकी चोदना, घोषणा, वेद विधि मे की गई है, वह धर्म है। इसके अनुसार वेद विहित कार्य पद्धति की प्रामाणिकता बतलाई गई है। (मुसरदास रहस्यपूर्ण दृष्टि से अपने समानातर बैठी किल्ली की ओर देखता है।)

आचारज जी ने कणाद की परिभाषा को सब प्रकार से पूर्ण और उत्तम बताते हुए कहा : यतोऽभ्युदयनिःश्रेयससिद्धिः स धर्मः अर्थात् जिस कर्म से अभ्युदय-इह लोक और परलोक मे कल्याण और मोक्ष की सिद्धि हो, वह धर्म है।

धर्म की व्याख्या करने के पश्चात् आचारज जी ने ससार से तरने का उपाय और मोक्ष मार्ग का निरूपण करना प्रारम्भ किया। अनेक जन्मो के किए हुए अत्यन्त श्रेष्ठ पुण्यो के फलोदय से सम्पूर्ण वेद शास्त्र

के सिद्धान्तों का रहस्य-रूप सत्पुरुषों का संग प्राप्त होता है। उस सत्संग से विधि तथा निषेध का ज्ञान होता है। तब सदाचार में प्रवृत्ति होती है। सदाचार से सम्पूर्ण पापों का नाश हो जाता है। पाप नाश से 'अन्तःकरण अत्यन्त निर्मल हो जाता है। (महन्त गुरुमुखदास जम्हाइयों पर जम्हाइयाँ लेता हुआ चिक के अंदर से झाकती अपनी छोटी महंतिन की ओर दृष्टि फेंकता है।)

जीवन्मुक्त की स्थिति मे सभी शुभ और अशुभ कर्म वासनाओं के साथ नष्ट हो जाते हैं। साधक को समस्त संसार 'सियाराममय' प्रतीत होने है। ऐसे महापुरुष को कभी-कभी ईश-दर्शन तक हो जाता है। (नागा बाबा अपने बगल मे बैठे लक्कड़ बाबा को 'दृष्टिकोण' से देखते है)

तत्पश्चात् 'प्रश्नोत्तरी-पाठ-चक्र' प्रारम्भ हुआ। महन्त गुरुमुखदास को नीद का झोका बहकाकर शयन कक्ष मे ले गया। रात के ग्यारह बज चुके थे। आचारज जी ने 'भाखा बहता नीर' प्रश्न किया और सन्त-समाज ने समवेत स्वर मे उत्तर देना प्रारभ किया :

'कौन बँधा है' ? : 'विषयानुरागी'
'विमुक्ति क्या है' ? : 'विषयो से वैराग'
'घोर नरक क्या है ?' : 'अपना शरीर'
'नरक का प्रधान द्वार क्या है ?' : ना ऽ ऽ ऽ री ई ई ई'
'वीरो मे वीर कौन ?' : जो काम बाणों से पीड़ित नही होता'
'प्राणियो के लिए साँकल क्या है ?' वही ना ऽ ऽ ऽ री ई ई ई।'

'ना ऽ ऽ री ई ई' का तुमुल ध्वनि इधर वातावरण में धूम्राकार मँडरा रही थी और उधर सन्त-शिरोमणि, भगवद्भक्तों के भाग्य-विधाता महन्त गुरुमुख दास जी हसीना बेगम के 'हिरण्य-मय पात्र' का ढक्कन खोलकर 'सनातन सत्य' का साक्षात्कार कर

रहे थे। लक्कड़ बाबा के लकुड़दासजू का त्रिकाल व्यापी प्रभाव रंग ला रहा था।

पूरनदास का प्रभाव मठ में दिन प्रतिदिन बढता जा रहा था। पौष्टिक पदार्थों के सेवन एव वैभव-विलास से पोषित उनका स्वास्थ्य अब टमाटर की रक्तिम चिकनाहटमे फिसल रहा था। आसपास के जन-पद के लोग उनसे बेहद प्रभावित थे और वे महन्त जी से उनकी दिल खोलकर प्रशसा करते थे। महन्त अपनी परख पर पूर्ण तृप्त था। किन्तु मुसरदास अपने प्रतिद्वन्दो के प्रति एक न एक षड्यंत्र रचता रहता था फिर भी पूरनदास का कुछ भी न बिगाड पाता था। पूरनदास के पास अपरिमित अधिकार थे। मिष्टभाषी स्वभाव से उन्होने जनमत को अपने अनुकूल बना लिया था। मुसरदास अपनी दाल गलती न देखकर खून के घूंट पीकर रह जाता। अमरपुरी मठ मे आने से पूरन की सब से बडी उपलब्धि पठन-पाठन को सुविधा थी। उसने स्वतंत्र अध्ययन करके विद्वत्समिति की 'रत्न' परीक्षा वही से कृपाङ्क प्राप्त करके पास की रामायण, महाभारत, उपनिषद्, पुराण से लेकर चन्द्रकान्ता संतति और भूतनाथ के चौबीस भागों को बनारस से मगवाकर पढ़ डाला था। आधुनिक हिन्दी साहित्य का भी उसने विस्तृत अध्ययन किया। पढने के लिए उसके पास अवकाश ही अवकाश था, एक प्रकार से यही उसका व्यसन था। कल्याण, सुकवि, नवयुग, सरस्वती, माधुरी, विशाल भारत और सगम से लेकर माया, मनोहर, भाभी और रसीली कहानियो का वह नियमित पाठक था। ढाई तीन साल के विस्तृत अध्ययन मे उसने सचमुच काफी ज्ञान प्राप्त कर लिया था। प्लेग वाले साल में वह दसवी मे पढ़ता था किन्तु इम्तहान न दे सका था और भाग्य की बिडम्बना उसको यहाँ तक खीच लायी। अपने वर्तमान पर वह वैसे संतुष्ट ही था किन्तु कभी-कभी पसली में उठने वाले तीखे दर्द सी फुलिया की याद अनजाने आकर उसको मथ जाती। पूरनदास यों तो किस्से कहानी, उपन्यास, नाटक आदि सभी पढ़ता किन्तु कविता में उसकी वृत्ति विशेष

रमती। रामायण की चौपाइयो के अनेक अर्थ निकाल कर वह आचारज जी तक को विस्मय मे डाल देता : प्रभु निज रूप मोहनी डारी, कीन्हें स्वबस-सकल कर-नारी। मो हनी डारी : मुझे माड्डाला, मुझ पर मोहनी मंत्र डाल दिया, इस रूप को देखकर समुद्र मथन वाला 'मोहनी-अवतार' डाल देने या त्याग देने लायक है। नर-नारी = नर, न अरि। सुन्दरता कहँ सुन्दर करई : अद्वितीय सौदर्य स्रोत परब्रह्म (सुन्दर) ता कहँ यानी सीता जी को सुन्दरता से अनुप्राणित कर रहा है। इस प्रकार रामायण की विजयानन्दी टोका को भी वह बड़े चाव से पढता था। कालिदास, जयदेव, जायसी, बिहारी और बच्चन उसके प्रिय कवि थे। लोक-गीतों मे भी वह रस लेना सीख गया था। फिल्मी गीतो के सैकडो रिकार्ड मठ मे मौजूद थे। महन्त गुरुमुखदास गान-विद्या के परम शौकीन होने के कारण 'पूनोगिलास' पर 'रिकाड' लगाकर सुना करते थे। जब कभी कोई शहर जाता, उससे ताजे गानो के 'रिकाड' वे अवश्य मँगवा लेते। इस प्रकार नौटकी, रामलीला और राधेश्याम रामायण से लेकर सुरैया तक के गाये गानो के ढाई तीन सौ 'रिकाड' मठ मे मौजूद थे। ये सब एक प्रकार से भावी महन्त पूरनदास की ही सम्पत्ति थी। पूरनदास कभी कभी दो चार पन्ने लिखता, गीतो की कडियाँ जोडता, घण्टों गंगा जी के किनारे वाले पक्के चबूतरे पर खोया-खोया बैठा रहता, फिल्मी गीतो की तरह तुक मिला देना तो उसके बाँये हाथ का खेल था। जिस वातावरण मे वह जी रहा था, ज़िदगी को सर्वांग भाव से भोग रहा था, उसको अभिव्यक्त कर देने की अकुलाहट कभी-कभी उसे व्यग्र बना देती। उसने 'सन्त-वदना' शीर्षक से कुछ पक्तियाँ जोडी भी जो पता नही कैसे मुसरदास के माध्यम से महतजी के पास पहुँच गईं और उसके जी के लिए जवाल बन गई। पूरनदास की सेवा-भक्ति मे किल्ली का आदमी महादेव रहा करता था, वही कमरे मे झाड़ू-बुहारू करता, रात को पीने के लिए औटाया गया दूध और मलाई पहुँचाता तथा चेला जी के बाजार-हाट सबधी काम करता। किन्तु मुसरदास ने एक जाल रच-

कर उसे कही कुछ रोज को खदेड दिया, मर्द की ड्यूटी औरत को बजानी पडी। मुसरदास किल्ली का पुराना यार था और किल्ली भी बडी छँटी औरत थी। मुसरदास ने उसे यह सब्ज बाग दिखाकर कि यदि पुरनवाँ का 'टिक्कस' तुम यहाँ से कटवा दो तो जब मैं महन्त बनूँगा तुम्हे अपनी महन्तिन बनाऊँगा। तुम किसी तरह से उसे अपने 'जोबन के जाल' में फांस लो, मैं महन्त जी को बुला लाऊँगा, तहकीकात करते बखत जब महराजजी पूछैं तो कह देना कि 'चेला जी ने जबरदस्ती मुझे पलँग पर पटक दिया था और कल तीन जोडे 'इकलाई' के दिये थे साथ मे 'बेलौस' के लिए रेशमी कपड़ा, पौडर, स्नो और महकुआ तेल। ये चीजें मेरी कोठरी में रखी हुई हैं।' मुसरदास ने बाजार से लाकर तीन जोडे इकलाई के और रेशमी कपडा, पौडर-तेल किल्ली को दे दिया। किल्ली पूरनदास का कमरा साफ करने जाती, रात को गरम दूध और मलाई पहुँचाती। झुककर कमरा बुहारते समय जान-बूझ कर आँचल गिरा देती, 'फलालैन' के चितकबरे झुलौवे मे से कसे उसके दो दो मुट्ठी भर के उरोज बाहर निकल पडते। वह जब ठुमकती चलती तो कमर सौ सौ तो नही दो चार बल जरूर खा जाती। कभी कभी वह चेला जी की आँखों में अपनी कजलाई आँखें डालने की कोशिश करती लेकिन पूरनदास कतरा जाता। वह चूडी पहनने, काजल मिस्सी खरीदने के बहाने रुपये दो रुपये पूरनदास से ऐंठ लेती। वह चेला जी से बेसिर पैर की बातें करती ऐसी बातें जिन्हें एक औरत को पर-पुरुष से नहीं करनी चाहिये। पूरनदास भी किल्ली की ओर खिंचे, खिचना स्वाभाविक भी था, पुरुष का परुषत्व प्रकृति की कोमलता का वरण कर ही तो पूर्णता को प्राप्त करता है। पूर्व योजनानुसार मुसरदास ने किल्ली से पूरनदास की वह काली डायरी जिसमें वह 'दोहे-चौपाई' लिखता था, उडवा दी और उसे अपने हवाले किया। दूसरे दिन रात को दूध ले जाते समय चमकुल किल्ली खूब सजी थी। इकलाई धोती, रेशमी 'बेलौस', ओठों में लाली, आँखो मे काजल, माथे में बड़ी सी काली टिकुली और

महकुये तेल मे गमकती-छलकती किल्ली जब आठ नौ बजे रात को चेला जी के पास पहुँची उस समय वे पलँग पर लेटे कुप्रिन का 'गाडी वालों का कटरा' पढ रहे थे, बदनाम वातावरण की मादकता मे आकंठ डूबे। किल्ली ने दूध तिपाई पर रख दिया और पलँग के पैताने जाकर चेला जी के पैर दबाने लगी। ठडी सड़को में भटकने वाले चेला जी के बदन में एक औरत का संस्पर्श पाकर सनसनाहट दौडी। उन्होंने किल्ली को अपनी ओर खीचा, किल्ली ना ना करती हुई दो हाथ पीछे छिटक गई। गोरे माथे पर टिमकती शोख इशारे करती टिकुली रात मे बड़ी अच्छी लग रही थी। चेला जी उठे और अपनी वलिष्ठ बाहो मे भरकर किल्ली को पलँग की ओर खीच लाये और पटक दिया कि भिडे दरवाजे को ठेलकर महन्त गुरुमुखदास मुसरदास के साथ 'परविष्ट' हुए। गुरुमुखदास के हाथ मे काली डायरी थी, वे आवेश और क्रोध से काँप रहे थे। किल्ली सिटपिटाकर अपनी साडी समेटते कोने में सिमट गई। वह थर-थर काँपने का बहाना कर रही थी, क्योंकि महन्त गुरुमुखदास ने भी उसे भोगा था और मुसरदास तो आये दिन उसका सेवन करता ही रहता था। उसने तो महतिन बनने के लालच मे पडकर एक निरीह के ऊपर अपने 'जोबन का जाल' फेंका था। महन्त ने किल्ली को एक सौ एक गालियाँ दी : 'कातिक की कुतिया, छिनाल, रडी, पतुरिया, हरजाई।' और डायरी को पूरन की ओर फेंकते हुए चीखे : 'बरचोट्ट, कुत्ते, कमीने तुझे मैंने नाली से निकालकर इद्रासन पर पधराया और तुम्ही मेरे बारे मे 'दोहा-चौपाई' रचते हो, नमकहराम! पढ भैन:आद् क्या लिखा है!' पूरनदास चुप्प।

'मूसर! जा त्यगीवा को बुला ला।'

सहमे-सहमे से त्यागी जी आये, और डायरी लेकर पढने लगे।'

'इन सन्तन की छैः छैः बाई, कुछ सोवैं कुछ रोवै।
धोय लँगोटी संन्यासिन की, आपुन दीदा खोवैं॥

जब महन्त जी ध्यान लगावै, दुइ छिनरी बिदुराँय ।
दुइ त्रिकुटी माँ सेज सजावै, दुइ थक कै बिछ जायँ ।।
बड़े गजरदम शख बजावैं, परे परे जमुहाँय ।
ठाकुर तो तरसै नहाँय का, ठकुराइन रसियाय ।।
गैर नहाये भोग बनावै, चीख चीख ललचाँय ।
बैकुण्ठी जर क्वैला होइगै, फुलका मरगै जाय ।।
सावन चढा, कुलबुली दौडी, दुइ चोलिया न समाय ।
हुमक कै चढि बैठे झूलन माँ ठाकुर जी रिरियाँय ।।
संझा ढरकी झाझ मंजीरा, झनन झनन झन्नाँय ।
भजन कीर्तन चिलिम चूसिगै, हरमुनिया मन्नाय ।
रस लइ लइ 'नागिन' कै, भगवतगीता बाँची जाय ।।'

महन्त ने खड़ाऊँ उतार कर चेला की कनपटी पर खटाक से दे मारी, गोखरू लगी खडाऊँ का वार अचूक पडा, और कनपटी से रक्त का फव्वारा बह निकला। त्यागी को बाहर निकाल कर गुरुमुख-दास ने तिपाई पर रखे दूध को किल्ली पर उड़ेल दिया। मुसरदास आज्ञाकारी शिष्य की भाति हाथ बाधे खड़ा था। हुकुम हुआ कि किल्ली को बेपरद करो। महन्त की कंजी आँखो में आज हैवानियत का पनाला उफ़ना रहा था। मुसरदास ने झिझकते हुए इकलाई खीच ली।

'खसम खसोटी, इकलाई पहन कर······आई है। झुलौवा भी खीच लो और गिलास मे किल्ली का एक छटाक दूध दुहो।'

किल्ली काप गई। नाटक की परिणति इतने रोमाचकारी रूप मे हो सकती है, उसकी उसने कल्पना तक न की थी। पूरन को जैसे काठ मार गया था, वह बुत बना खड़ा था, और कनपटी से खून रिस रिसकर उसकी मलमली मिरजई को भिगो रहा रहा था। मुसरदास भी इस वज्र आज्ञा को सुनकर काप गया।

महन्त चिग्घाड़ा—'मूसर वरचोंद..आध पाव दूध दुह।'

और किल्ली के भरे भरे मासल उरोजो को रबड़ की तरह खीचकर

गुरुमुखदास ने तीन-चार धार पूरन के मुँह की ओर छोड़ी। किल्ली पीड़ा से चीख़ उठी। अपने उरोजों पर इन हाथो के दबाव और ऊष्मा को उसने पहले भी सहा था लेकिन वह माहौल और प्रक्रिया भिन्न थी। महन्त फिर गरजा और मुसरदास घबड़ाकर किल्ली के स्तनो को खोचखीच कर दुहने लगा। किल्ली का दो महीने का 'दूध का फोहा,' मछरेन के रंग महल में जमीने पर पड़े-पड़े कलप रहा था, उसका 'पतराखनहार' दूर चेलाने मे कहीं भटक रहा था और एक मानवी, एक माँ, एक औरत धर्म के ठेकेदारों, धर्मावतारों की छत्रछाया में भेड-बकरी की तरह दुही जा रही थी। बोलो भाई इन सन्तन की जै। मुसरदास ने गिलास को आधा भर लिया। गुरुमुखदास ने चीख़ कर कहा : 'मूसर, गिलास साले के मुँह में लगा दो, पी बरचो...अपनी माताराम का दूध' कहकर उसके गले से नीचे उतार दिया। महन्त ने मुसरदास से कहा कि साले को ऐसे ही 'गर्दनिया' देकर फाटक के बाहर निकाल दो। मुसरदास ने आज्ञा का सहर्ष शीघ्र पालन किया।

पूरन जिस नाटकीय ढग से यहा आया था, उसी नाटकीय किंतु बेहूदे ढंग से यहाँ से बिलकुल कंगाल बनाकर जाडे की ठिकुरती रात को अधरत्ता के बारह बजे निकाल दिया गया। लहू लुहान कनपटी लिये वह अपने उस दूकानदार के यहा पहुँचा, अब वह अमरपुरी का चेला जी न होकर एक लावारिस, अज्ञात कुल शील व्यक्ति था। आखो मे बिठाने वाले, चेला जी के पसीने की जगह अपना खून वहाने वाले दूकानदार ने महन्त जी के प्रकोप का भाजन न बनने के कारण रात को आश्रय देने मे अपनी विवशता जताई। सौभाग्य से एक तोले की अँगूठी अँगुली मे पड़ी थी, उसे औने पौने बेंचकर पूरन ने जरूरी कपड़े कम्बल आदि खरीदा और बम्बई वाली गाडी पर बैठ गया। आकुल भटको तरग जन-सागर की ओर बड़ी तेजी से उमड़ती हुई चली जा रही थी। ●●●

● ● यह है बाम्बे मेरी जाँ

बम्बई वाली गाडी के थर्ड क्लास डिब्बे मे बैठा पूरन अब पूरनदास से महज पूरन रह गया था, 'दास' छुटने के साथ अमरपुरी का सारा राग-भोग, वैभव-विलास और ऐशो आराम भी छिन चुका था। बचपन मे उसने बम्बई के बारे मे सुना था, उसके गाँव के बहुत से लोग जो पहले फटे चिथडे लगाये भिखमगे बने घूमते रहते थे, जब बम्बई से छठे छमासे लौटते, तो बढिया तंजेबी धोती, चुन्नटदार अद्धी का कुर्ता, जुल्फो से चूता हुआ चमेली का तेल और गले मे पडी सोने की जंजीर से यह साफ पता लग जाता कि वहा इनकी चाँदी कट रही है और फिर पूछने पर पता चलता कि बम्बई बहुत बड़ा शहर है, वहाँ लक्खो मोटरें और आलीशान कोठियाँ है, बम्बा देवी का दर्शन है, शाम को चौपाटी की सैर, छोले कुलचे भटूरे, चर्परी चाट, लहराता हुआ समुद्र। रात को भी बिजली की रोशनी मे सारा शहर जगर-मगर करता रहता है। वहाँ कोई भूखे पेट नही सोता, कोई भी काम कर लो रुपया तो भइया, पानी की तरह बहता हुआ जितना चाहे 'हलोर' लो। इसीलिए तो सिनेमा मे काम करने वाले बड़े-बडे लोग जो लाखो रुपया कमाते हैं, वही रहते है। बचपन मे सुने गए मायानगरी बम्बई के ऐश्वर्य से प्रभावित होकर घर-बार से वञ्चित, सब तरह से लुटे हुये पूरन ने उधर की ओर रुख किया। उसके गाँव के दर्जनों लोग अरसे से इधर अपने हिल्ले रोजगार में लगे थे लेकिन पूरन को उनका ठीक ठीक पता नही मालूम था फिर भी इस आसरे पर कि शायद घूमते टहलते भेंट मुलाकात हो जाय—वह चला जा रहा था। एक दो घंटे के दौरान

मे सारा बना बनाया खेल मटियामेट हो गया, कहाँ उसका चैत की राम नवमी को टीका होने वाला था, कंठी पडनी थी 'अमरपुरी' मठ में रहकर पूरन को दो लाभ हुये थे : सुगठित शरीर, चेहरे पर ताजे खून की छलछलाहट से प्रतिबिंबित अरुणाई और दूसरे धार्मिक पुस्तको से लेकर आधुनिक हिन्दी साहित्य का विस्तृत अध्ययन। कितनी सूझ-बूझ से, बाहर से मँगा-मँगाकर उसने पाँच छः सौ पुस्तकें जोड़ी थी, एक-एक पुस्तक को पढते समय भूख प्यास भुला देता था, एक-एक पुस्तक के आगमन पर वह कई रातो जाग-जागकर उसे पढ़ता रहा था, उसकी डायरी भी वही छूट गई थी जिसमें उसके दुखदर्द की, अनुभूति के चरम क्षणों की पानीदार तस्वीरें उरेही हुई थी उसका 'रत्न' का सार्टीफिकेट भी छूट गया था। महन्त ने कितनी निर्दयता से उसे सब प्रकार से नोच-खसोट कर मुसरदास से निकलवा दिया था। अब भी उसकी गर्दन मुसरदास के फौलादी पजे के कसाव की पीडा से टीस रही थी। कनपटी पर खून की पपडियाँ जम गईं थी, जाडे के कारण खून के जमाव से कोई बहुत तकलीफ नही हुई पूरन पुरानी स्मृतियो और नींद के हिचकोलों मे झूमता झकझोरता बम्बई पहुँच गया। वी० टी० पर उसकी गाडी एक धक्के के साथ रुक गई। प्लेटफार्म पर रंग-बिरगी भीड को देखकर वह विस्मित सा खोया-खोया खडा रहा। कम्बल को कन्धे मे डाले और जेब में पडे अस्सी नब्बे रुपयो की रकम को वह हथेली से दबाये हुये था क्योकि इतने बड़े शहर मे चोर-उचक्कों और जेबकतरो की भी कमी न थी। इनके हैरत अगेज किस्सो को भी वह 'भइया लोगो' से सुन चुका था। उसके गाँव का एक धीमर जो यहाँ दूध का कारोबार करने के कारण 'भइया' कहलाता था, गाँव मे जाकर पूरन के बप्पा से अपनी आप-बीती बताई थी कि 'अंटी और जेब मे तो रकम कभी हिफाजत से रहती नही दद्दा इसीलिए मैने सौ-सौ रुपयो के दो नम्बरी नोटो को तहाकर एक कपडे मे रखकर मुँह मे दबा लिया था, सोचा साले हलकट के बाप के बाप की भी नजर न पड़ेगी पर बड़े

भइया ! वह मेरे बाप के बाप का भी बाप निकला। थकान के कारण मैं थोड़ा 'झपरिया' गया और उसने पता नही कैसे नोट निकाल लिये। सोते में एक दो छीके मुझे जरूर आई थी और जब मै हडबड़ा कर उठा तो अपनी मूँछो मे एक तिनका फँसा पाया।'

पूरन भाड के धक्के खाता हुआ गेट पर पहुच गया, टिकट देकर बाहर निकला और एक लोहे की बेंच पर बैठ गया। चारो ओर आदमी ही आदमी, भीड ही भीड। इतनी बडी भीड़ उसने अपने जीवन मे पहली बार देखी थी। गेट के बाहर चमचमाती कारो की एक लम्बी कतार लगी हुई थी। उसने अपनी जेब फिर टटोली, नोट सुरक्षित थे। पास के नल पर हाथ मुँह धोया और फुटपाथ पर पैदल चल दिया। पूरन बम्बई में भौचक्का सा पैदल टहल रहा था। बम्बई मे जहाँ एक ओर मेरीन ड्राइव, जुहू और मलाबार हिल मे हजार-हजार रुपये के फ्लैट्स में बड़े-बड़े सेठिये, सट्टेबाज और फिल्मी-कलाकार रहते है वही दूसरी ओर दादर, चर्च गेट, कोलाबा के फुटपाथो पर जिंदगी पहली पलक खोलती है, परवान चढती है, जूझती है और जूझते-जूझते दम तोड़ देती है। बम्बई जुलूसो का शहर है, नकली उभरी छातियो, ऊँची ऐडी की सैंडिलो, नाइलॉनी झलकियो, खोखली मुस्कानो मस्केबाजो और पोपटो का शहर है। जहाँ एक 'कोप' सिमल चा और फकत ऊसल पाव मे एक अदद भरी-पूरी औरत पूरी की पूरी खरीदी जा सकती है, जहाँ गाठिया-पापड़ो, भजीया-भेल और बटाटा-बड़ा की फरमायशो मे पहले-पहल कुँवारे होठ जूठे होते है। बम्बई जो सारी-सारी रात फुटपाथो पर फुसफुसाती रहती है, चीखती-चिल्लाती रहती है, खाली पेट करवटे बदलती रहती है, बम्बई जो सारी-सारी रात होटलो, बार हाउसो, क्लबो और हैंगिग गार्डन मे महकती-चहकती रहती है, शब्बेरात मनाती रहती है।

ऐसी मायानगरी मे पूरन सारे दिन टहलता रहा, भूख लगी तो किसी दूकान पर पूडी-साग खा लिया, कुरमुरे चने से जी बहला लिया,

वह कही पैदल, कही ट्राम या बस से घूमता रहा, बस घूमता रहा। जादू नगरी का कही ओर छोर नही था। पूरन को यहाँ किसिम-किसिम की औरतें देखने को मिली। कूल्हो पर चुस्त पैंटो और कसी हाफ शर्टों मे बेहयाई की हँसी छलकाती हुई फाहशा औरतें, जालीदार कुर्ते और कलफदार रेशमी शलवार मे कुछ लम्बी सी दिखलाई पडने वाली वीरागनाये, वारागनायें, दूधिया साडी और फँसे-फँसे उफनते बिना बाँह वाले ब्लाउजो मे बहकी-बहकी, जूडो मे रजनी-गधा की मालायें गूथे शरमीली-कसीली कुछ बधुयें और मुक्त छन्द सी स्वछन्द झूमती-ठुमकती, उड़ती-फुदकती फाख्तायें : कालिजो की कुवारियाँ (?)। उसने महा लक्ष्मी मदिर देखा, गेट वे आफ इडिया, फ्लोरा फाउटेन, हैंगिग गार्डन, चौपाटी और न जाने क्या-क्या ? हैंगिग गार्डन की एकान्त सुरभिस्नात कुन्जो मे युगल प्रेमियों और दिवाभिसारिकाओ के वे क्रीडा व्यापार, हाव-भाव और प्रणय-प्रसग, तटस्थ भाव से उसने सब कुछ देखा। शाम चौपाटी मे गुजारी, सामने दूर-दूर तक बिखरे नील सलिल का अनन्त विस्तार और किनारे पर उमड़ता जन-सागर। रंग-बिरगी छतरियों के नीचे सजी चर्परी चाट की दूकानें, चटखारे ले लेकर खाती चुस्त चोलियाँ जो कभी तृप्ति तो देती नही, फकत उभार कर एक उत्तेजना छोड़ जाती है, शाम के धुँधलके मे बेंचो पर अँगडाइयाँ लेती हुई एलेक्जेन्ड्रा से लेकर एक्सेलसियर तक के छवि-गृहों मे विलायती बासे देने वाली, मटन-चाँफ, कोफ्ता और बिरयानी के बदले मे नकली सिसकियाँ भरने वाली और पोशीदा बीमारियो का समाजीकरण करने वाली फुटपाली हीरोइनें।'

दिन तो जैसे-तैसे घूमते-घामते बीत गया था अब रात आई और अपने साथ लाई सोने की समस्या। इतनी बडी भीड मे कही कोई भी अपना नही, कितने सटे-सटे से चलने वाले, धक्के देकर निकल जाने वाले फिर भी कितनी दूर, 'छिः छिः' की स्टाइल मे सकेत देने वाले कितने अजनबी, कितने पराये। दिन भर चलते-चलते वह थक

गया था, पिंडलियाँ थकान से फटी जा रही थी, उसकी न तो कोई मंजिल थी और न यात्रा का अन्त ही। उसने फुटपाथ पर किलबिल-किलबिल करते हुए धमा-चौकड़ी मचाते गटरो मे अपनी गृहस्थी सजाये जिंदगी को धक्के दे देकर जीते जिंदा लाशो का एक हुजूम देखा : गोबर मे से दाने चुनती हुई बूढ़ी बदसूरत दादी अम्मायें, नवजात शिशु को अपनी निचुडी छातियो का रक्त पिलाती, भूखी-फटी निराश आँखो वालो नौजवान मातायें, बुझी-बुझी चिनगारी जैसी निगाहो वाले घूरते चंद टुकड़ो पर गुत्थमगुत्था हो जाने वाले भावी भारत के रखवाले और फूले पेट सूखे सीक जैसे हाथ पैर वाले एक-एक निवाले को तरसते माँ के सपनो के होनहार सहारे। वह ठिठक गया, एक डस्टबीन के पास उससे कम उमर के सात आठ-छोकरे दिखाई पड़े, पूरन उनकी ओर बढ़ गया। लडके एक घेरा बनाये हुए 'डम डम डिका डिका' गा रहे थे, कुछ लडके ताली और सीटी बजा रहे थे, एक मोट्रा सा खुस्कैट्ट दिखाई पड़ने वाला लडका बडी मस्ती से एक दूसरे लड़के की पीठ को तबलिया रहा था, एक और कमसिन उम्र का नमकीन छोकरा इन सबसे अलग-थलग बैठा कुछ सोच रहा था, उसकी बडी-बडी नम आँखें ऐसी दिखाई पड़ रही थी कि बस अब छलकी, तब छलकी। उसके भरे-भरे कूल्हो पर चिकोट्टी काटते हुए सानीवाकर बोला : 'हाय री मेरी झेलम, कसम नीली छत्री वाले की, आज स्साले आक्खा[1] बम्बे रेस्टूरेण्ट्ट वाले को खल्लास[2] करिंगा, झुलमो[3] सितम न करो मेरी जान, गलबट्टी[4] हमेरे गले मे डालो और गाओ : डम डम डिका डिका, मौसम भिगा भिगा। डम डम डिका डिका, मौसम भिगा भिगा।'

'पांडुरग देवाची शपथ, टिंगल[5] न कर जानी, नही स्साले एक कस के लाफा[6] दूंगा, कल से मैंने खाना नही खाया। कुत्रा[7] के माफिक

१. पूरी २. खत्म ३. जुल्म ४. गलबहियाँ ५. छेड़-छाड, ६. थप्पड़ ७. कुत्ता,

तू साले इधर-उधर दुम हिलाता घूमता है और इधर हमेरा लैफ[1] खल्लास होइंगा।'

'तो अईसा माफिक बोलिंगा, अपनकूँ का मालूम कि तुमेरे कूँ खल्लास होइंगाच, जबी बताईंगा तभी न जानिंगा, अपन कूँ का स्साले भूलेश्वर का रामास्वामी जोतिसी समझिगा जो सेठानी लोगन की बादामी कलाई को पकड़के लाइन किलीयर करिगाच।'

'हाय जानी, खाली-पीली बोम[2] मारिगा, पण बम्बे रेस्टूरेन्ट का बम्बइया पुलाव ही ला दे जानी, अपन कूँ तो अब साली आक्खी बम्बई चलती-फिरती नजर आती है जानी, आँखो के आगे अँधेरा जानी।' 'तो चल न साले, 'बम्बइया पुलाव' ही खा, पण हमेरे कूँ फिर न कैना कि तूने खिलाया। अभी परसूँ मेवानन्द ने गरम-गरम पुलाव उडाया और दो घंटा बाद स्साले के वो दरद शुरू हुआ कि पेर पटक-पटक कर 'रम्बा-थम्बा' करने लगा, चौबीस कलाक (घन्टे) बेहोश रहा, हम तो सोचा : 'छोड चले साले दुनियाँ कूँ' पण[3] खल्लास होते-होते चाँगला[4] होइगाच।'

पूरन फुटपाथ के सानीवाकर और झेलम की बातें सुन ही रहा था कि सीनाकुमारी ने आकर उसे घेर लिया और उसके कम्बल का तकिया बनाकर उसे सिर के नीचे रख लेट गया और चवन्नी मार्का बीड़ी के छल्ले छोड़ता हुआ बोला : 'केम, ये है बाम्बे मेरी जाँ, कब आया भाय, अपन कूँ अपना भाई बिरादर मानना, मौके बेमौके काम आईगा, फिलम एक्टर बनने का वास्ते आक्खा बम्बई मे आइगाच पण जब साई बाबा की दुआ से फिलम एक्टर बन जाईंगा तब हमेरे कूँ भी लाइट मैन बना लेंगा न। ला निकाल आठ आणा, कोकाकोला पियेंगा, पिलायेंगाच, बगल मे सुलायेंगा, हवलदार से बोल देंगा। फ़क़त आठ आणा, कोकाकोला, कोकाकोला, आठ आणें आठ आणें।

१. जिन्दगी। २. बड़ी-बड़ी बातें करना। ३. लेकिन ४. अच्छा।

पूरन ने इस अनजान नगरी मे आठ आने में एक दोस्त खरीदना घाटे का सौदा न समझा। उसने अठन्नी निकाल कर सीनाकुमारी के हाथ मे रख दिया, सीनाकुमारी लपककर बम्बे रेस्टूरेण्ट से दो कोका-कोला की बोतल ले आया, एक पूरन को दिया और दूसरी ख़ुद लेकर सुडकने लगा कि इतने मे सानीबाकर हाफता हुआ आया और सीना कुमारी से लिपट गया और धक्का देकर बोतल छीनते हुए बोला : 'तू स्साला हलकट, कुत्रा के पेशाब का माफीक कोकाकोला पीकर ऐश करिगा और उधर हमेरा प्यारा झेलम 'बम्बइया पुलाव' के लिए तरसिगा, परतापगढी 'भइया' लोगन से गाल गुदाइंगा और फिर गरम-गरम 'बम्बइया पुलाव' खाकर मेवानन्द का माफिक पैर पटक-पटककर बाल-डानस करिगा और फिर चौबीस कलाक (घटे) बेहोश रहकर अपना आक्खा जिदगी खल्लास करिगाच।'

'बम्बइया पुलाव' खाने और पैर पटक-पटक कर आक्खा ज़िन्दगी खल्लास करने का रहस्य न समझ पाने के कारण पूरन ने सीनाकुमारी से पूछा। उसने बतलाया कि 'अपन लोग कूँ तो बस एक नीली छत्री वाले का सहारा है भाय! सानी, झेलम, सीना, ताला, चिम्मी, शहीदा हम सब सेठ लोगन की ब्लैकमार्केटिंग, की कमाई कूँ 'एक दो तीन, आ जा मौसम है रंगीन' गाकर पार करिगा, बोल परदेशी भाय, क्या बुरा करिगा, सेठठुस की जेब मे हमारा भी तो हक है, क्या स्साला अपनी माँ के पेट से बाँध लाया है, वो हलकट दिन दहाडे भारी-भारी जेब काटता तो सरकार से ख़िताब पाता और अगर अपन गरीब लोग पेटी का भूक-से दू-चार टुकडा नोच लेता तो टाँगी तुड़वाकर 'ससुराल' भेज दिया जाता। पण हम तो बारबार ससुराल जाइंगा, स्साला वहाँ खाने को तो मिलता, बारबार जेब काटिंगा और फिर बम्बे रेस्टूरेण्ट के फैमिली क्वाटर मे शान से बैठकर मटर पनीर, बिरयानी, मुग़लिया पराठा, मुर्ग मुसल्लम और शाही कोरमा चाभिगा[1], लाल परी पीकर

१. खायेगा।

एलेक्जेंडर और एक्सेलसियर की बाल्कोनी मे फुरइया और चिम्मो की कमर में हाथ डालकर 'सिनसिनाकी बूब्रलाबू' देखिगा और लौटेकर फुटपाली पर चन्दा की चाँदनी तले सारी-सारी रात जशन मनाई गा, ऐश करिगा।'

'और जिस दिन कोई सेठ का बच्चा नही फँसिगा उस दिन'—सीना कुमारी का कान उमेठते हुये शहीदा ने पूछा।

'उस दिन उस दिन, तू ही बता दे मेरी प्यारी शहीदा!'

'उस दिन······ उस दिन बम्बे रेस्टूरेण्ट के बेयरा परतापगढी भइया लोगन के पास झेलम को भेजिगा और गरम-गरम 'बम्बइया-पुलाव' खाकर 'डम डम डिका डिका' करके पेट का दरद दुरुस्त करिगा, रम्बा-थम्बा करके पुलाव पचाइंगा और बेचारा झेलम अपने गाल की टीस मिटाई गा।'

'ये 'बम्बइया पुलाव' क्या बला है भाई, मै समझा नही'—पूरन ने हकलाते हुये पूछा।

'बखत पडने पर अपने आप समझ जायगा स्साले, दिलीप कुमार का ख्वाब देख रहा है और यहाँ जब एकस्ट्रा सप्लायर रामू दादा की मस्काबाजी[1] करिगा तब कहो पाँच रुपे का छोटा मोटा रोल पाई गा, किसी भीड़ में खड़े होइगा, इस्से तरकैट[2] तो अपन नीली छत्री वाले की फिलम कम्पनी है प्यारे : सर जो तेरा चकराये······'

'अरे बता न शहीदा, खाली-पीली टाँगी अडाई गा, बोम मारिगा'—ताला बोली।

'सुन परदेशी भाय, जिस दिन नीली छत्री वाले की मेहरबानी नही होती, खीसे खलास[3] रहते है उस दिन हम सब लोगों की एक दुनियाँ रहती है, और दिन तो सब अपनी-अपनी दुनियाँ मे मस्त रहते लेकिन खल्लासी के दिन हम सब एक होकर झेलम को बम्बे रेस्टूरेण्ट

---

१. चापलूसी। २. अच्छी। ३. जेबें खाली।

भेज देते हैं, अगाडी की ओर से नही, पिछवाडी से, झेलम की होटल के भइया लोगन से 'आशक-माशूकी' चलती है न, भइया लोगन दिन भर जमा होने वाले जूठन की टीन से खाने को निकालकर जिसमें डबल रोटी के अधकुतरे टुकड़े, चिचोड़ी हड्डियाँ, शोरबे से रंगीन चावल, आलू, मिसे मटर वगैरह पचमेल शाही खाना होता है, गरम करके चुवन्नी प्लेट के हिसाब से बेंच लेते हैं, नौ नगद न, तेरह उधार, झेलम के गोरे-गोरे गालो के ताजे-ताजे नमकीन बोसे फोकट मे, क्यो न चिम्मी।'

'हाँ रे मेरी शहीदा, तेरा ज्वाब नही।'

'झेलम के ताजे-ताजे बोसो की पेशगी देकर दुअन्नी प्लेट के हिसाब से तेरह उधार के भाव पर खरीदा 'बम्बइया पुलाव' यूँ ही आसानी से नही पच जाता, उसको पचाने के लिए सारी रात रम्बा-थम्बा, डम डम डिका डिका करना पडता है। आज हम सब वही कर रहे थे।'

'बड़ा मँहगा पडता है सानी, मेवानन्द तो बिना आरकेस्ट्रा के ही थिरकने लगता है।'

'पण का करिंगा, ग़म खाईंगा, हवा खाईंगा, मर जाईंगा सुना था न उस फिलम का गीत : एक दिन तेरा भी जमाना आईंगा।' 'स्साला सुनता-सुनता दाढ़ी मूँछ उग आया, किसी सेठिये की रोकड़ो भूल-चूक से यहाँ फेंक दिया गया ऐसा माफीक रोजीना सुनता-सुनता फुटपाथी पर घिसट-घिसट के बड़ा हुआ, लंगूर बनके खल्लास हो जाईंगा और वो दिन न आईंगा, ई शाइर लोग स्साला खाली-पीली बडल मारता।'

सीनाकुमारी अधजली बीडी का टुकडा पूरन की ओर फेंकता हुआ बोला :

ले स्साले तू भी चवन्निया किलास हिरोइन से होठ गरमा, ऐश कर।

●●●

● ● रेत रेत···बस रेत

पूरन सारे दिन बम्बई की बेहया गलियो मे निष्प्रयोजन चक्कर लगाता और रात को अटक-भटक कर नीली छत्री वाले साथियो के साथ संगीत-शयन का सुख उठाता लेकिन उसकी अवशिष्ट पूँजी दिन-दिन कम होती जाती जा रही थी और वह दिन अब दूर नही था जबकि उसको भी 'डम डम डिका डिका' की ताल पर ताडव करना पड सकता था। कालबा देवी के एक गुजराती ढाबे मे वह खाना खा रहा था कि अचानक उसकी दृष्टि मेज पर बिखरे 'वेंकटेश्वर समाचार' मे प्रकाशित एक विज्ञापन की ओर गई :

'आवश्यकता है एक हिन्दी अध्यापक की जो पारिवारिक शिक्षक के रूप में कार्य कर सके। साक्षात्कार के लिए प्रमाण पत्रो सहित शीघ्र मिलिये। प्रार्थना पत्र इस पते पर भेजें। सेठ छावडी वाला, सुलोचना-सदन, मैरीन ड्राइव बम्बई।'

विज्ञापन पढकर पूरन को ऐसा प्रतीत हुआ कि जैसे वह उसी के लिए विज्ञापित हुआ हो। उसने पता नोट कर लिया और विचारो में खोया-खोया चल पडा। उसने सोचा कि हिन्दी तो मैं भली भाँति पढा सकता हूँ, भले ही मैंने कोई परीक्षा न पास की हो किन्तु 'अमरपुरी' में रहकर साहित्यरत्न परीक्षा की सारी पुस्तकें पढ़ गया हूँ, बहुत से पद, कवित्त, सवैये और गीत मुझे ज़बानी याद हैं। एक बार अवश्य आज-

माइश करनी चाहिए, शायद भाग्य साथ दे जाय। लेकिन इस वेष में मुझे कौन एक शिक्षक के रूप मे स्वीकार करेगा, मेरे पास इतने पैसे भी नही कि नये कपडे बनवा सकू"। रात को थके डगो से घसीटता जब वह अपने पूर्व परिचित शयन स्थान पर पहुचा तो वहाँ दूसरा ही सुहाना शमाँ देखने को मिला। चिम्मी और सीनाकुमारी आज एक निराली आन-बान मे चहक रहे थे, सानी चिम्मी की चम्पी-मालिश कर रहा था और शहीदा सीनाकुमारी के रेडीमेड खरीदे चमकदार कीमती सूट की ओर ललचाई-काइयाँ भरी नज़रो से घूर रहा था। पूरन को देखकर सीनाकुमारी बोला : 'ओ परदेशी भाय, ठडा पियगा गरम, आज सबको जी भर कर पिलायगा, आज तो पण स्साली आक्खो बम्बई अपन पाकीट मे कैद करिंगाच। बोल भाय, का पियगा माशा का होठ?'

शहीदा पूनम के कान मे फुसफुसाया : 'आज स्साला गुजराती सेठ का पूरा पाकीट खल्लास कियाच, पूरमपूर पाँच सौ रुपे, साला अपन कू" फकत ऊसल-पाव खिलाइगा[1] और खुद तो एक्सा नम्बर वन पियगा, गुडिया सी माशा सारिख के साथ टैक्सी मे बैठ के एक्सेलसियर जाइगा, 'अनारकली' देखिगा, बिरयानी[2] और शाही कोरमा[3] चाभिगा,[4] फस्ट-किलास आइसक्रीम उडाइगा और रात भर माशा को परीशान करिंगा, जशन मनाइगा, हाय मेरी माशा, हाय मेरी अनारकली···मु···मु··· मुहब्बत मे ऐसे कदम डगमगाये, ज़माने ने समझा कि हम पी के···उक् ···आऽये।'

कहते-कहते शहीदा एक टाग पर नाचने लगा।

'स्साला अपन कू" तो दो चार रुपे से बेशी रकम मिलेला ना, कहाँ-कहाँ का भूखा मोशाय यहाँ आके मरेला, देखने मे फस्ट किलास भला मानूस दिखेंगाच पर जेब मे रहिगा बिजली का बील, जली सिगरेट

---

१. एक आने वाली डबल रोटी और चने की पतली दाल। २. नमकीन पुलाव। ३. बहुत बढिया बिना शोरबे का भुना हुआ मांस। ४. खायेगा।

फिल्मी गाना का किताब और फकत सूखा-सूखा दू चार रुपे, बीबी का चोली-चोटी का वस्ते। भला बोल यार, दू चार रुपे मे हम जशन मनाइगा तो खाइंगा का अपन...... ।'

रात को एक दो के करीब एक टैक्सी आकर रुकी, उसकी आवाज से पूरन की नीद खुल गई। सीनाकुमारी ने टैक्सी मे बैठी माशा का पप्पी लिया और रूमाल हिलाता हुआ टैक्सी का बिल अदा किया और ड्राइवर को माशा के घर पर छोड आने का आर्डर चालू करके फुटपाथ पर पूरन की बगल मे कपडे उतार कर लेट गया। लेटकर माशा के साथ नकद भुनाये गये रात के आजमूदे नुस्खो की नकल उतारने लगा। पूरन ने उससे अपनी परेशानी बयान की। पूरन के कधे पर चपत मारता हुआ सीनाकुमारी बोला . 'स्साला बस फकत ऐसा माफीक गम में घुलिगा तो बम्बई से टिकट कटायेंगा, हमेरा नवा-नवा सूट जिसे पैन के अपन ने सिरफ एक सुहागरात खल्लास कियेचा, तुमेरे कूँ किराये पर दे देंगा, दू चार दिन के वस्ते, अपन काम चालू करके तुम हमेरे को वापीस करिगा और साथ मे रम का एक पौवा हमेरे को प्रीझेन्ट करिगा। बोल मंजूर ।'

'मजूर।'

सीनाकुमारी का उधार लिया हुआ सूट पहनकर पूरन मैरिन ड्राइव वाली कोठी पर पहुँच गया। पोर्च से सटे बरामदे पर पाँच छै रगीन एम्ब्रेला चेयर्स पडी हुई थी जिन पर तीन-चार व्यक्ति बैठे थे। लान विलायती फूलो से बडे कलात्मक ढग से सजा हुआ था, ड्रम-पाट मे लगे हौले-हौले झूमते पाम के सजीले-बाँके पौधे बडे भले लग रहे थे। उमडती-घुमडती बेगम-बेलिया की सिर चढी लतरें वातावरण को कुसुमित-कुज के रूप मे ढाल रही थी। रेडिमेड सूट पूरन के गठे बदन मे कुछ ऐसा फिट आ गया था कि उसने उसके व्यक्तित्व मे एक प्रभावशाली परिष्कार पैदा-

कर दिया था, सूट का रंग कुछ शोख जरूर था लेकिन बम्बइया फ़िज़ा में ऐसे चटकीले रंग भी बडी आसानी से घुल मिल जाते हैं। पहले से उपस्थित महाबीरी लगाये हुए शिखाधारी कथावाचक टाइप व्यक्ति से पता चला कि पूर्वागत सभी महानुभाव राष्ट्र-भाषा की सेवा-भावना से प्रेरित होकर यहां पधारे हैं। थोड़ी देर मे लम्बी-चौडी काठीवाला भरी-भरी रोबीली मूंछो से मढ़ा एक व्यक्ति आया और उपस्थित सज्जनों को अदर चलने का संकेत करके स्वयं दरवाजे के पास रखे स्टूल पर बैठ गया। पूरन भी स्वतः चालित यत्र की भाँति उनके पीछे-पीछे चल दिया। एक हालनुमा बडे कमरे मे स्टील के कई पीस सोफा सेट्स डनलपिलो से सजे रखे हुये थे। मोजइक की अल्पना-रजित फर्श पर बिड़ला जूट की रंगीन कार्पेट बिछी हुई थी। दीवालो पर तीन-चार पारिवारिक तैल-चित्र लगे थे और एक छरहरी किन्तु ठोस बदनवाली आकर्षक युवती दो प्रौढ व्यक्तियो के साथ बैठी हुई थी। इंटरव्यु काफी सफल रहा। जहाँ उसके साथ आये अन्य प्रतियोगी अपने बोध-स्तर मे भक्ति-काल और रीति-काल से आगे नही बढ पाये वही पूरन अपनी कवित्वपूर्ण रससिक्त वक्तृता द्वारा प्रयोगवादी भाषा बोलता हुआ पूरे माहौल पर छा गया। दो प्रौढ व्यक्तियो को गलदश्रु भक्ति-भाव से विमुग्ध करता हुआ पूरन सलोनी सुलोचना से कवियाते हुये मध्यम पुरुष के संबोधन मे आध्यात्मिक भावो का आदान-प्रदान करने लगा। पंक्ति-पखुडियो की मदिर-गन्ध से विभोर सुलोचना ने मदभरे आयत नयनों को घुमाकर अपने डैडी से पूरन की नियुक्ति के लिए कहा। प्रमाण पत्रों की किसी ने चर्चा तक न की। ढाई सौ रुपया मासिक वेतन तय हुआ और पूरन पारिवारिक शिक्षक के रूप मे सुलोचना को आकर नियमित रूप से पढाने लगा। कुछ दिन तक तो पूरन ने अपनी फुटपाथी नव्वाबो के साथ समय बिताया, उन्हे खिलाया-पिलाया, कृतज्ञित किया, फिर सुलोचना का कृपा-पात्र बनकर मैरिन ड्राइव की विशाल कोठी में ही उसे एक कमरे मे रहने की इजाजत मिल गई। इस सम्पन्न परिवार

में उसका आकस्मिक प्रवेश एक पारिवारिक अध्यापक के रूप में हुआ था। लेकिन सेठिये की लाड़ली-मातृविहीन कन्या का दिल बहलाने के लिए उसे उसके साथ पार्क, थियेटर, क्लब और न जाने कहाँ कहाँ जाना पड़ता था। सेठ को तो अपने धंधे, सट्टे और उतार-चढाव से ही फुरसत नही थी सो सुलोचना की सारी फरमायशे पूरी करने की जिम्मेदारी पूरन पर आ पड़ी थी। अपनी दिमागी-अय्याशी की तृप्ति के लिए सुलोचना ने बतौर फैशन के कलाकार पूनम के नाम से एक फिल्मी-पत्रिका निकालने की योजना बनाई। 'रूपशिखा' उसी का परिणाम थी। इस प्रकार पूरन की जिन्दगी एक मोड पर आकर फिर ढग से चलने लगी। अमरपुरी के फूहड, सडे, सामन्ती मठाधीशी परिवेश से निकलकर वह अब सुरुचि-सम्पन्न, कलात्मक-फैशनेबुल वातावरण में आ गया था। सितारो के हेर-फेर ने उसे जिस घाट पर ला पटका था वह घाट बडा रम्य, नयनाभिराम, तृप्तिपूर्ण एव लावण्यशील था। इस चौड़े-चकले घाट पर स्थिर रहकर भी रूढि-विख्यात सत्तर घाट के सुस्वादु जल की तृष्णा बुझाई जा सकती थी। एडीटर पूनम बड़े अदाज से फूंक फूंककर कदम रखता हुआ उस अंजाम को देखता हुआ भी न देख रहा था। वह बड़े इतमीनान से सुलोचना को बिहारी, मतिराम, देव और पद्माकर से लेकर छायावादी क्षयग्रस्त मादक प्रणयाकुल गीतो की विस्तृत व्याख्या करके समझाता, सुलोचना भी सब जानते हुये नासमझ बनकर बारीक से बारीक बातें पूछती, सैद्धान्तिक हावभाव व्यावहारिकता की चौखट पर आकर टकराने लगते लेकिन सेठ के नमक पर पला अस्तिक धर्मी पूरन स्वयं को सम्हाल लेता। एलीफेन्टा और हैंगिग गार्डन के सहेट स्थलो की मुग्धा वासकसज्जा, विप्रलब्धा बनकर तड़प कर रह जाती। 'रूपशिखा' के सम्पादन के साथ-साथ समग्र आयावर्तं भारत खंड मे बिखरी, कला-सस्कृति और सौदर्यानुभूति मे सदेह रुचि लेने वाली तथाकथित आभिजात्य वर्गीय सुसस्कृत कुमारियाँ और सौभाग्यवती पाठिकायें कलाकार के रसबोध को अब

दिन-दिन परिष्कृत, परिवर्द्धित और मॉडर्नाइज कर रही थी। फाइनल प्रूफ-देखने मे जिगर की ग़ज़ल गुनगुनाते-गुनगुनाते वह अनायास नकियाने लगता : 'तुल्ता है जिस पै हुस्न वो काँटा नज़र का है।'

मैरिन ड्राइव की हुस्नफरेबी फ़िज़ा मे कलाकार पूनम का धर्मकाँटा बड़े सही दृष्टिकोण (बाई आँख को थोडा दबाकर दाईं से निर्बाध रूप-रसपान-प्रक्रिया को कलाकार पूनम 'दृष्टिकोण' की सज्ञा देते थे।) से तौल-तौल कर सौदर्य-बोध के नूतन प्रतिमानों की स्थापना कर रहा था। दृष्टि-कोण का एकाक्षी परकाल बम्बई से इलाहाबाद की दूरियो को नापता हुआ दो दिलो की धडकनो मे चाँद सितारों की शहनाइयो की गूंजें सुना करता था। विष कन्या सी प्रतीत होने वाली सेठिये की लाडली, कला-कार के धर्मकाँटे पर चढकर भी न तुल सकी। इसे सुलोचना की शर्म-शोखी कहिये या कलाकार का वह मध्ययुगीन लवण-पालित रूढि-संस्कार जो उसे जबरन उस दिशा में जाने से बरजता रहा और अन्त मे दृष्टिकोण का दुष्यन्त पत्राचार के माध्यम से इलाहाबाद की शकुन्तला के साथ कमल-पुष्पों की सेज सजाने लगा। और एक दिन वह कण्व के तपोवन मे पहुँचकर निसर्ग-कन्या को वैभव-विलास की बामदेव-पुरी (बम्बई) में ले आया। कोठी के एक कोने मे बरसो से संचित उसके दाम्पत्य जीवन की कल्पना का रागात्मक तत्व चादनी की फुहारों, पूस-माघ की नशीली सीत्कारों और पावस की रसभीनी बौछारो में धुल-धुलकर निखरने लगा। लेकिन सुलोचना के लिए ये कुचखुले दिन और इठलाती रातें बडी मँहगी पड़ी। सुलोचना मांसलता की झनझनाहट को भोगे बिना भी सर्वांग भाव से कलाकार की हो चुकी थी।

प्रणय, नारी के लिए उसका समूचा अस्तित्व होता है जबकि पुरुष के लिए वह जीवन से पृथक एक मन बहलाव का साधन मात्र आज सुलोचना का वही दर्पणी अस्तित्व शकुन्त के कारण अपने उस समूचे अक्स को खोने-खौने को था जिसमें इंसान की हैवानियत सॅवरकर तमद्दुन की रङ्गीनियाँ बटोर

बार पूर्ण तृप्त और तुष्ट हो जाने पर उसकी प्रेमाकाक्षा और ज्वलनशीलता शीतल पड़ जाती है, चुक जाती है। तब भावना के पंख लगाकर उडने वाली प्रेमिका इस प्रकार के विचित्र परिवर्तन को देखकर झुलस जाती है। वे ठिठुरती रातें, उमसते दिन और टप-टप चूती संध्यायें उसके लिए बड़ी जानलेवा बन जाती है जब उसे यह अहसास हो जाता है कि अब उसका भरपूर उपयोग नहीं हो पा रहा, अपने समूचे अस्तित्व को इस प्रकार शून्य में अनुगूंज बनकर समाते हुए देखकर उसे बड़ी क्रोफ्त होने लगती है। वह अपने खयालो मे बहकी-बहकी बडी बेसब्री से डगमगाती हुई अपने प्रिय के पद चरणो का इतजार करती है। हड्डी-पसली तोड कर रख देने वाले प्रगाढ आलिगनो का कसाव उसके लिए जुही की कलियो की रोमाच-आविल अनुभूति से भी अधिक सुखकर प्रतीत होता है। पुरुष को अपनी सम्पूर्णता से प्यार करने वाली नारी हर क्षण इस अदेशे मे रहती है कि जिसमे उसने अपने अस्तित्व का पूर्ण विसर्जन कर दिया है वह किसी दूसरी औरत की ओर तो आकर्षित नही क्योकि उसका कोई एक हाव, पुरुष की कोई एक फिसलन उसे नदन वन से उठाकर तप्त मरु भूमि में पटक सकती है। वह आधी-आधी इच मुस्कानों के लिए तरस सकती है और तब वह अलगनी में झूलते हुए वक्षों की उष्मा और उतार-चढ़ाव के कसाव से शून्य मिसे ब्लाउज की भाँति आकर्षक और पूर्ण युवती होते हुए भी समय के पूर्व बूढ़ी, ढली, निर्जीव और निष्प्राण बन जाती है। एक परित्यक्ता नारी सब प्रकार से असंहाय होकर कुछ नहीं रहती, उसके पास कुछ भी नही बचता, उसके लिए तो सिर पर तपता आकाश और चारों ओर सूखे बगूले छोड़ता हुआ अनन्त रेत का अनन्त विस्तार शेष रह जाता है। ऐसी स्थिति मे या तो वह पागलपन का शिकार हो जाती है या स्वेच्छा से मृत्यु का वरण कर लेती है। या यह भी हो सकता है कि वह तिल-तिल सुलगती हुई जीवित शव बनी रहे।

और इस प्रकार सब ओर से क्षत-विक्षत नारी रौंदी हुई घास की तरह बड़ी दयनीय बन जाती है।

सुलोचना के साथ यही हुआ। कलाकार पूनम के प्रति तन-मन से पूर्ण-समर्पिता सुलोचना यद्यपि ऐन्द्रिक स्तर पर भोगी नहीं गई थी फिर भी उसके सपने, उसके सारे साज-सिंगार, आँसू और मुस्कानें पूनम के घुँघराले बालों की मरोरों के नाम गिरवी रखी हुई थीं। यद्यपि उस बूर्जुवा वर्ग के लिए इस कोरी बकवास पर कुछ कम यकीन आता है लेकिन इसे अपवाद के रूप में ही स्वीकार किया जाय। इसीलिये सुलोचना की पालक्षन-पोसी रेशमी-नीली नसों में बहता हुआ खून वह कमीन हरारत नहीं पैदा कर सका था जो आम तौर पर उस तरी की हालत में गर्मी आ जाने से मुमकिन है। वह चाहती तो जूता छोटा हो जाने का बहाना करके एक नहीं सैकड़ों जोड़े 'पट्ठे छाप' जूते बाजार से मँगवा सकती थी, क्या नहीं मिलता बाज़ार में, एक एक से सुरजीत मार्का, गठी देह वालों विल्डिगों की कमाई खाने वाले पेशेवर। लेकिन बदकिस्मती से सुलोचना उन सब से अलग दूसरे ही धातु की बनी हुई थी इसीलिए उसको जिंदगी का यह जाम बड़ा मँहगा पड़ा। बड़ा तीखा तेज, तर्रार, जान लेवा। प्रिय के काकुले-पेचाँ शकुन्त की लमछारी लटों से बँध चुके थे, उसकी साधों और सपनों का राजकुमार किसी दूसरी राजकुमारी का हो चुका था और तीस लाख पचास हजार का बैंक-बैलेंस होते हुए भी उसके पास बचा था आगे पीछे चारों ओर दूर दूर तक निराश, फन पटकती हुई उर्मिल समुद्र की लहरें, रेत, रेत बस रेत……।

कल रात पूनम ने लजाते हुए शकुन्त का परिचय सुलोचना से कराया था और शकुन्त को इसका भी बोध करा दिया था कि इसके लिए उसे सुलोचना जी के प्रति हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करनी चाहिए। वह तो जल्दी ही शकुन्त को सुलोचना के पास छोड़कर कहीं चला गया था, सुलोचना घण्टों अवाक् शकुन्त को निहारती हुई हृदय को गुदगुदा

देने वाली खनकती-बजती मुस्कानों मे मुद मंगलित होती रही थी, ऊपर से देखने पर कही हल्की सी वेदना की खरोच भी नही मालूम पड़ रही थी लेकिन एक रात मे ही कलेजे का वह घाव पककर इतना विषाक्त और भयावह बन चुका था कि भोर के धुँधलके मे वायु-सेवन करने वालो के द्वारा देखा गया कि तेज रफ्तार से ड्राइव करने के कारण गाडी उलटने से एक्सीडेण्ट की शिकार बनी लम्बी खूबसूरत 'डाज' में एक सम्पन्न घराने की महिला सदा-सदा के लिए आँखें मूँद चुकी है।

●●●

●● प्राइवेट ज्ञानदान

कलाकार पूनम फिर एक बार पूनम से महज पूरन रह गया। पुनः उसके तपते माथे पर छाया देने वाला शीतल सप्तपर्णी आकाश वात्याचक्रो से झकझोर दिया गया। एक बार पुनः उसे ऐसा लगा कि सुलोचना को खोकर मानो उसने नेह-छोह की प्रतिमा मुँहबोली बड़ी बहन खो दी। उसकी दुर्बलताओ को बडे जतन से सहेजने वाली गृहिणी जैसे अनन्त पथ पर सदा के लिए बिदा हो गई। वैसे सुलोचना और पूनम के सम्बन्ध मे कुछ-कुछ ढीठ बने सेवक और स्वामिनी जैसे ही थे लेकिन इतने कम समय मे वह जिस प्रकार सुलोचना के निकट उन्मुक्त भाव से आ गया था कि दोनों एक दूसरे की कमजोरियो को जानते हुए भी तरह दे जाया करते थे, दोनो में इतने पास रहते हुए भी उतनी ही दूरी थी जितनी दूरी आलिंगन-पाश में बँधे हुए दो दिलो की धड़कनो की होती है क्योकि उत्तप्त साँसो का आदान-प्रदान करते हुए भी देह की दीवारो का व्यवधान नही तोड़ा जा सकता।

अपनी एक मात्र लाड़ली के शोक मे छावड़ी वाला पागल हो गया। जैसे उसने अपना एकलौता बेटा खो दिया। जिन्दगी भर की दौड़-धूप, ब्यौत-कतर, दाँव-पेंच और असंख्य-अदृश्य नालियो से अपने आप खिंच-

कर पूँजी के बड़े तालाब मे भर जाने वाली यह दौलत किसके लिए ? वह सब अपने आप मे तो साध्य है नही। एक महीने तक कोठी मे सेठ से मौखिक सम्वेदना प्रकट करने वालो का आना-जाना जारी रहा। 'रूप-शिखा' के अगले अङ्क में सुलोचना का पूरे पृष्ठ का चित्र प्रकाशित हुआ; 'सुलोचना स्मृति अङ्क' के रूप मे प्रस्तुत किया गया 'रूप-शिखा' का यह अङ्क पत्रिका का अतिम अङ्क सिद्ध हुआ। रूप की शिखा के साथ 'रूप-शिखा' भी बुझ गई। करेन्सी नोटो की आर्द्र हरीतिमा में चरने-विचरने वाले लक्ष्मी-पुत्रो को भला इस दिमागी दिवालियेपन और निठल्ली बकवासो से क्या लाभ ?

'रूप शिखा' का प्रकाशन अस्त हो गया, पूनम को डसने के लिए अब फिर नये सिरे से असख्य प्रश्न-चिह्नो के अजगर मुँह फैलाने लगे। मेंहदीली हथेलियो वाली नई-नई ब्याही शकुन्त, रोमिल डैने फैलाकर उडने को आतुर उसके दुधमुहें सपने और इधर न छिपने को किसी छत को ममतालु आँचल और न चूल्हे पर खदबदाती दाल का संगीत। क्या होगा ? ओ मेरे परमेश्वर ! या मेरे परवरदिगार !!

छावड़ी वाला का क्या विश्वास ? किसी वक्त यहाँ से टिकट कटाने का फरमान जारी हो सकता है। इन बरायनाम के बडे बने लोगों की आँखो मे निपट स्वार्थ की चर्बी चढ़ी होने के कारण दिखावटी दुनियादारी और बनावटी विनम्रता के बावजूद भी शील और सहानुभूति नाम की वस्तु सर्वथा मर जाती है। पूँजी के काफिले मे जुते ये धन्नासेठ अपने से आगे वालों के तलुवे चाटते हुए पीछे वालो को दुलत्तियाँ झाडते चलते हैं जिनकी चोट खाते-खाते बेचारा गरीब, इनके आसरे रहने वाला, इनके लिए अपना खून-पसीना बोकर पूँजी की गभिन फस्लें खनकाने वाला चूर-चूर हो जाता है। उसका सन्तुलन, उसका धैर्य, उसकी स्वामिभक्ति और उसकी मूक सहनशीलता और अधिक सहने के लिए जवाब दे देती है, वह फन्दा तुडाकर भाग निकलता

है पर कम्बख्त भागकर जायगा कहाँ ? चारों ओर दुलत्तियाँ ही दुलत्तियाँ तो हैं।

और फिर एक दिन सेठिये से पूरन को जल्दी से जल्दी टिकट कटाने का फरमान जारी हो गया। दो चार सौ रुपये जो बचे-खुचे थे वह भी इधर-उधर की दौड-धूप मे फुँक गये। खाली पेट, खाली जेब वह एक अदद बीवी का इज्जतदार खाविन्द इज्जत से जिन्दगी बसर करने के लिए एक तंग सस्ती खोली की तलाश मे निकल पडा लेकिन नतीजा वही हुआ जो होना था, कही भी एक सीलनदार घुटती खोली भी नसीब न हुई, एकाध जगह कुछ दडबे मिले भी तो मोटी पगडी का सवाल सामने आया। कहाँ से आयें हजार रुपये ? फिर चक्कर काटे और चक्कर काटते-काटते पूरा घनचक्कर बन गया। अभी तक तो किताबो मे पढा ही करता था कि दुनिया गोल है लेकिन सुबह का निकला शाम को ज्यो का त्यो जब वह जले पर नमक छिडकने वाली कोठी पर पहुँचता तो कुडबुडाती आँते गुड-गुड करती हुई कहती :

बंधू ! सचमुच यह दुनिया गोल है, धूल से अटे छल्लेदार काकुले पेचाँ और चिटखती चप्पलें दुहरातीं : प्यारे गोल ही नहीं पूरी ठठोल भी है। एक मज़ाक, एक व्यग्य, एक विद्रूप। कहाँ जाय, क्या करे ? कहाँ जियें, कहाँ मरे ? ? नौकरी के लिए आफिस खाली नहीं, रहने के लिए मकान खाली नही, बच्चों को पढ़ाने के लिए स्कूल खाली नहीं, अस्पताल में 'बेड' खाली नहीं. खाली है किस्मत, खाली है जेब, खाली है चूल्हा, खाली है पेट और इधर हल होने की कोई गुंजाइश भी नहीं। घनत्व ऐसे ही बढ़ता गया तो एक दिन खड़े होने भर के लिए भी जमीन नहीं बचेगी बाबू !

किसके लिए ? किसके लिए ?? हम जैसे मजदूरो के लिए चाहे वे कलम के हो या कुदाल के, कलाकार पूनम और शकुन्त के लिए, मॉडल बनकर नगी तस्वारो सी जिन्दगी जीने वालो

रूबी और नसीम के लिए। सेठ छावडीवाला की तब तक तो पाच कोठियाँ और तैयार हो जायँगी जिनका टोटल किराया होगा पूरे पाँच हज्जार माहवार। क्या समझे?

पूनम के वे सारे दोस्त और शुभचिन्तक जो उसके वजनी जेब वाले दिनो के हरवक्त के साथी थे, अब उसे पहचानने मे सिर खुजलाने लगे। कभी-कदा रास्ता चलते मिलते तो दूर से ही कन्नी काट जाते या कोई चारा न रहने पर सीरियस नमस्कार हो जाती। हाँ वे लोग अब भी उससे रहस्यपूर्ण मैत्री और भेद-भरे लहजे से मिलते जिन्हे बेतार के तार से पता चल गया था कि बरखुरदार कही से एक चक्कू मार्का चिडिया उडा लाया है और कभी न कभी चुगाने के लिए तो इस बाजू आयेगा ही। ऐसे दानिश्त दानेबाज कोरी लफ्फाजो से अवश्य उसकी दिलजोई करते। गम के इन गाजमारे दिनो मे पूरन की उन लोगो ने विशेष सहायता की, उसके साथ सच्ची सहानुभूति दिखलाई जिनसे अपने ऐंठन के दिनो मे वह बात करने या बोलने मे भी अपनी तौहीन समझता था।

एक दिन पिंडलियो का जोड़-जोड़ तोड़ देने वाली थकान से टूटा शाम को वह निष्प्रयोजन फाउन्टेन स्क्वायर के पास घूम रहा था कि उसे रूबी दिखलाई पडी। पूरन की कमीज गदी और पसीने से लिज-लिजी हो रही थी, पैन्ट क्रीज खोकर पायजामा बन रही थी और जूते की एडियाँ घिसकर कभी की उसका साथ छोड चुकी थी।

'हल्लो एडीटर साब! पहचाना आपने? हाऊ डू यू डू?'

'ठीक है जी, आप अपनी कहिये।'

'ओक्के! आपकी मैगजीन का अभी नया ईशू नही निकला क्या?'

'अब कभी नही निकलेगा रूबी, कभी नही निकलेगा।'

पूरन ने एक साँस मे बड़े दर्द के साथ अपना सारा कच्चा चिट्ठा सुना दिया। रूबी ने तहेदिल से अपनी हमदर्दी जाहिर की। यह हमदर्दी एक सी जिंदगी जूझते हुये जीने वाले दो हमराहियो के दिल की गह-

राइयों से बड़े सादा तरीके से उभरी थी। एक ही मशीनी शिकजे मे घुटते दो दोस्तो की दर्दनाक दास्तान। रूबी पूरन को ज़बरदस्ती घसीट कर पास के एक सस्ते होटल मे ले गई। दोनो एक एक कप सिंगल चाय पीकर अपना गम गलत करते हुए फिर सड़क पर आ गये। रूबी ने बड़ी लापरवाही से कहा 'मैरिन ड्राइव और कालबा के हजार पाच सौ रुपये महीने के फ्लैटो वाली इस सट्टेबाज साजन की नगरी में आपको जनाब मकान मिलने से रहा, डोन्ट बादर! बराय मेहरबानी सिस्तर के साथ अपनी आलीशान कोठी से विदाई लेकर हम गरीबो के दौलतखाने पर चल आइये, फिफ्टी फिफ्टी रह लेंगे, प्लीज।' और पुरलुत्फ़ शायराना अन्दाज मे गुनगुनाने लगी:

'वो आये घर मे हमारे ख़ुदा की कुदरत है।
कभी हम उनको, कभी अपने घर को देखते हैं॥'

'मज़ाक न कर मेरी हमदम, मेरी आपा! आऊँगा ज़रूर जरूर आऊँगा और जाऊँगा भी कहाँ?'

और दूसरे दिन तड़के उठकर पूरन शकुन्त को लेकर हल्के-फुल्के सामान के साथ रूबी के पास पहुँच गया। रूबी शकुन्त को गुड़िया जैसी उठाकर कमरे मे नाचने लगी और फिर उसे काँच के गिलास की तरह धीरे से मोढे पर छोड़ दिया। कमरे के बीच मे पार्टीशन बनाकर पूरन की गृहस्थी जम गई। दिन किसी तरह घिसटते हुये खिसकने लगे।

हर नई फुटती सूबह पूरन के लिए एक नई आशा और उम्मीदो का पैगाम लाती और हर मुरझाती शाम उम्मीदो के घावो पर मायूसी और नाकामो का तेज़ाब छिड़ककर छिप जाती। रूबी को मॉडल बनने और ऊपरी आमदनी से जो कुछ मिल जाता, उसी से किसी तरह गाड़ी चर मर करती चली जा रही थी। चेहरे पर जबरन उगाई गई खोखली बाँझ मुस्कान और घर मे धुले कपडो का आयरन करवाकर पूरन मज-बूर सफ़ेदपोशी का खोल ओढ़ गीतकर पूनम के साँचे मे ढलकर चारे की

खोज मे निकल पड़ा। अमरपुरी मे रहकर उसने तुकें जोड़ने का अच्छा अभ्यास कर लिया था लेकिन यह कविताई उसे बड़ी मँहगी पड़ी थी। आकस्मिक उत्तेजना की स्थिति मे किल्ली के मातृत्व-पूरित स्तनो से उसके मुँह पर जो जबरन छीटे मारे गये थे, उस कसैले-मीठे स्वाद की मिचलाने वाली डकारें आज भी उसे आ रही थी। फिर भी उसे गीतों के बेंचने की फेरी लगानी पडी। गाहको के मन-पसन्द सब मेल के नई-नई डिजायन वाले रग-बिरगे गीतो की गठरी लादे-फाँदे वह प्रोड्यूसरो, डाइरेक्टरो के दरवाजे-दरवाजे चक्कर काटने लगा। जल्दी-जल्दी 'एट ओ क्लॉक' भाग जाता और पसीने से लथपथ ठीक एट 'सिक्स पी० एम०' दादर लौटता। मैरिन ड्राइव मे हुजूर को यू० डी० कोलन की शीशियाँ टब-बाथ मे उड़ेल कर हम्माम मे फ़व्वारे के नीचे बैठकर छरछराते झरने से छेड़खानी किये बिना गुस्ल का असली लुत्फ ही नही आता था सो यहाँ भी बिगडे दिलो-दिमाग वाले पूनम जी टेप की तेज़ धार मे हथेली लगाकर एक बनावटी फ़व्वारा ईजाद कर अपना गम गलत कर लेते। अच्छा ही हुआ कि अल्ला ताला के फज़ल से आसमान को मकड़ी का जाला समझकर तोड़ने वाले शायरे आज़म को जल्दी ही नेक अ़क्ल आ गई. तारो भरी रात मे गीत गा गाकर रोमाम लडाने वाले साजन को अब दिन मे भी तारे नज़र आने लग। फिर भी वे किसी तरह डोलते-डगमगाते एक दिन 'रगवाणी' स्टूडियो पहुँच ही गये। खुदा के लाख-लाख शुक्र से सुर्मेबाज खूनी आँखो वाले दरबान पठान ने उस दिन अपना 'तगादा' वसूल करने के लिए छुट्टी ले ली थी। पूनम जी खजुराहो स्टाइल मे मेहदी लगाने वाली युवती जड़े प्लाईउड के केबिन से अन्दर दाखिल हुये। हाल अजीबो-ग़राब चीजो से बुरी तरह भरा हुआ था। एक ओर भूसा भरे ऊँटो के कारवाँ बसरा बगदाद जाने को तैयार खडे थे, दूसरी ओर रूई के फाहो से बना हिमालय का 'सेट' पहरा दे रहा था। चूल्हा-चक्की, कड़ाही-मूसल से लेकर सुनहरी पालिश वाली चौकियाँ, राजसिंहासन सब, लावारिस पड़े थे। गोया अच्छे खासे

कबाड़खाने का मंजर था। यहाँ हर चीज अपनी असलियत खोकर रंग-रोगन और कील-काँटे से दुरुस्त-चुस्त तैयार खडी थी । यहाँ का सारा माहौल ही एक हसीन धोखा था । उभारे हुये सीने, रगे-चुंगे चेहरे, बेंजो सी बजती खिलखिलाहटें और छत-फाड़ ठहाके सभी नकली थे। बड़े-बड़े हवाई वादे और आश्वासन, दुख-दर्द को सहलाने वाली सवेदनाएँ और बाजारू शिष्टाचार के सारे के सारे 'रोटीन' नकली थे।

सगीत-निर्देशक रवि जी से एडीटर पूनम की महज आते-जाते टकरा जाने वाली तफरीहन जान-पहचान थी। 'रूपशिखा' के दो चार विशेषाङ्क पूनम ने उन्हे दिये थे इससे रवि जी को पता लगा था कि हुजूर कवि, गीतकार, शायर और लेखक भी है, एडीटर तो खुले आम थे ही। रवि जी रवीन्द्र-सगीत के प्रेमी थे और लोक-गीतो के प्रयोगी भी। हिट करने वाले 'विलैती' फूहडपन की अपेक्षा उन्हे नद गाँव की लोरियाँ, पुष्कर की प्रभातियाँ और महाराष्ट्रीय सँझवातियो का शात-गंभीर संगीत विशेष प्रिय था। लेकिन उन पर 'अकल के बादशाह' सेठ लोगो का जरा कम विश्वास था।

मुगलिया खान्दान की खसूसियत को नई रोशनी मे उजागर करने वाली किसी फिल्म की शूटिंग चल रही थी। बादशाह सलामत सुनहली पालिस वाले काठ के तख्त-ताऊस पर नमाज पढने की स्टाइल मे बैठे अपने मनसबदारो के साथ झूम रहे थे क्योकि उनके सामने यानी सत्रहवी सदी के सामने इक्कीसवी सदी मे जज्ब किया जाने वाला एक गरमागरम 'निर्मोक नृत्य' फिल्माया जा रहा था। बायें बाजू प्रोड्यूसर सेठ छगन मगन लाल, डायरेक्टर विजय सितारिया, जगत्-प्रसिद्ध सिने-सवाद लेखक मुंशी मनसुख लाल विश्वकर्मा और फिल्मी-गीतकार साजन बालूशाही एक कतार मे बाकायदा अपनी अपनी सीटों में बिल्कुट फिट बैठे थे। सेठ से थोडी दूर हटकर एक मखमली गद्दियों वाले लम्बे सोफे पर फ़िल्म की धान-पान सी सुकँवार फिर भी बडे तीखे नैन-नक्श लिए रौनके-रुखसार का जल्वा दिखाने वाली गुलबदन

शमीमे नाज अपनी मोटी थुल-थुल अम्मीजान के साथ बैठी हुई थी। अम्मीजान ढाई सेर वज़न वाले अपने पाकिस्तानी पनडिब्बे को खोले, गिलौरियाँ तैयार कर रही थी। हालाकि चन्द देर पहले खाई गई गिलौरियो का 'मुश्के हिना' बडे बेहूदे तरीके से उनके तबस्सुमी लबो से चू चू कर ठुड्डी को सेहत का गुस्ल कर रहा था। डास-डायरेक्टर चम्पालाल एगिलस से चुस्त-दुरुस्त भडकीली पोशाको मे कसी दो ढाई दर्जन रक्काशाओ को , रुनझुनझुन ठुमकने और कमर मे खम डालकर कूल्हे मटकाने की 'टरेनिग' दे रहा था। अगर बिला वजह पाबन्दी न होती तो क्या वस्ताद चम्पा लाल अपने आका सेठ छगन मगन लाल के लिए अपनी इन उर-बसी शिष्याओ को सतरगी रोशनी से बुनी माहताबी चुनरियो मे पेश कर मैरलिन मुनरो को भी मात नही दे सकता था ? खुदा जाने ! उसे रह रहकर इस इडियन मेटलिटी पर बडा प्यारा-प्यारा घरेलू गुस्सा आ रहा था। वह छल्लेदार जुल्फो, दो इची क़लमो, तलवार मार्का तराशी गई बारीक मूछो और शरमीले-सुरमीले नयन बान फेंककर 'ता धिन धिन ता तिरकिट तिरकिट' के बोल उठाने वाला तीस-बत्तीस का एक गिरगिटिया जवान था। बीस-पच्चीस फाख्ताओ के गोल मे कैद विनाका माला सेंटर मे थी और साइड में शहाब का एक रिकार्ड बज रहा था :

देख के तेरा रूप रंग, दिल मे धनुक लचक गई,
बन्दे कबा कसा कसा, शोख़ कमर ढली ढली।
झूल रही है यो फुहार, मस्त हवा की पेंग पर,
चूम रही हो जैसे होठ, ज़ुल्फ तेरी उडी उडी।

धनुक लचकने के बोल के साथ नर्तकियो के अग-अग थिरकने लगे। विनाका के बायें खडी चौथे नम्बर की मुटल्ली, कुन्द की कलियाँ बिखेरने वाली छोकरी हरकत करने और कूल्हे मटकाने मे बार-बार ग़लती कर बैठती थी लेकिन फिर भी उभरे-उभरे कपोलों से बारीक मुस्कराहटो की पिचकारियाँ छोड रही थी। नचनियाँ चम्पा लाल

मटकता हुआ हौले-हौले उसके पास गया और उसके भरे-भरे कूल्हो में एक भरपूर चिकोटी काटी और अपने सूखे-सूखे गिरगिट के से पजो मे उसकी कमर के ऊपरी हिस्से को फँसाकर उचकाता हुआ गुनगुनाया :

बन्दे कबा कसा कसा, शोख़ कमर ढली ढली।

और फिर ख़ुद अपनी पतली कमर में हाथ रखकर चुचके कूल्हे मटकाता हुआ अपने सीकिया सीने को फुलाकर 'बन्दे कबा कसा कसा' की एक्टिंग करता हुआ शोख़ कमर ढलकाने की 'टरेनिंग' देने लगा :

'अईसा माफिक नई' चलिगा मुम्मू, अगर अब्बी नई बना त खल्लास जरा बेशी उभार लाई गा, हाँ अलरैट। जब दोनो जानू टकराहट सूँ छिलिगा तबी न शोख़ कमर माँ ढलाव और कूल्हा माँ रचाव पैदा होई गा और दिल माँ धनुक लचक-लचक जाई गा।'

झूल रही है यो फुहार मस्त हवा की पेंग पर।

'ओ विनाका (की बच्ची) जी! बेशी नांय, थोडा ढीलमढील छोड़ दीजेंगा अपनकूँ, हय हय, गुलशन इत्ता सीना क्यूँ फुला रई ए, झूल रई ए या खाविन्द सूँ कुश्ती लड़े है। मस्त हवा की पेंग पर फुहार की मानिन्द झूलो गुड्डियो!

बल्ले बल्ले! येश् येश्! अलरैट! क्लिक।'

चूम रही हो जैसे होठ, जुल्फ तेरी उडी-उडी……

तीन बार की रिहर्सल के बाद नाच इस बार फिल्मा लिया गया। सेठ ने तुरन्त एक डाभ मँगवाया, पेडे मँगवाये। डाभ फोडकर पानी ख़ुद पी गया और गरी-पेड़े बँटवा दिये। कौन जाने? इसी एक नाच पर फिलम हिट कर जाय। या साई बाबा!

नाच के बाद इंटरवल हो गया। बादशाह सलामत तख्त-ताऊस से उतरकर एक टूटे स्टूल पर टिकते हुये हिरन मार्का बीडी धौंकने लगे। एकस्ट्रा लडकियाँ 'दिलपसन्द' कैन्टीन मे चली गईं और सेठ छगन-मगन शर्मीले नाज़ के जानिब खिसकते हुये बोले—'बी, अपन ई डास चागला या बंडल।'

सुनकर भी न सुनने का पोज करती हुई शमीम बोली—'जी, क्या कहा आपने, सच मैंने नही सुना जी !' इत्ता कहने में ही शमीम हाँफ-हाँफ गई। उसका तरबतर शबनमी मुखडा जैस कह रहा था—'हाय रे सेठ, ना कर इत्ता जुलम।' और काइया सेठ भी उस वक्त चुगद बना जुहू पर तीन-तीन अदद सहेजने वाली दमख़मदार शमीमे नाज़ के फ़रेब पर फ़िदा होकर छगन मगन करने लगा।

पूनम कोने में बैठे रविजी के पास गया और उनसे एकाध चास दिलाने की विनती की। रवि जी के बहुत जोर डालने पर डाइरेक्टर विजय सितारिया ने 'नखरे वाली' में दो गीतों का चांस दे दिया। इसके चुभते संवाद जगत् प्रसिद्ध सिने लेखक मुन्शी मनसुखलाल विश्व-कर्मा ने लिखे थे और कुछ गीत मिठबोले मस्केबाज साजन बालूशाही ने। डाइरेक्टर ने पूनम को 'सिचुएशन' समझने के लिए मुन्शी जी के पास भेजते हुये कहा—'कि उसी के मुताबिक दो 'पटाखा टाइप' गीत लिख दो और हाँ देखो, अगर इसका लचक मचकदार म्युज़िक अपन रवि नही दे सकेंगा तो चकचक बुम बुम मास्टर से दिला लेंगा।' सिचुएशन के बारे मे कोई नई बात नही मिली। जैसी की तैसी घिसी-पिटी बम्बइया 'सतोरी'। अनजान नगर, चुलबुली डगर, कंगाल तन्दु-रुस्त आशिक, बक्सा तोडकर निकाली गई नाजुक आबगीन सी ठस्सेदार माशूका। अचानक एक्सिडेन्ट। सायकिल पंचर, दिल पंचर। फिर वही नैन मटक्का, जिगर फडक्का, धक्कमधक्का वाले एक ख़ास अंदाज़ में हर बार नई पोशाक बदलकर बॉर्डर से आँसू पोछते हुये पिनपिनाना—'छोड़ गये बालम।'

तो लिखो बेटा मिट्ठू ! रानी अपने राजा को लालीपॉप चुगाती सपनों की गली मे 'इनवाइट' कर रही है—

मेरे सपनो के राजा, कभी मेरी गली आ जा।
है तुमको मेरे मीठे-मीठे प्यार की कसम ॥
तुम्हे पुकारती हुई जवानी आ गई।

मेरे गालों में लाज भरी लाली छा गई ।।
मेरी रातों के राजा, कभी चंदा बन आ जा।
है तुमको मेरे भूले-भूले प्यार की क़सम ।।

गीत लिखकर पूनम सितारिया जी के पास ले गया । सुनाया । सुनकर सितारिया बोला—'थोडा और उभारो, सुनते ही जिस्से तन-बदन मे आग लग जाय, बुलाना तो जरा साजन जी को ।'

'भइ साजन, जरा इस मे उभार ला दो दोस्त !'

साजन जी ने पूनम को हिकारत भरी नज़रो से देखते हुए गीत छीन लिया । पढा । बोला—

'बडल बॉस, अपन के यहाँ अईसा माफिक संस्कीरत वाला गीता नही चलिगा । (स्साला गालो मे गुलाबी पौडर नही, लाज की लाली उगाईंगा ।) एकदम खल्लास, दिमाग दीमकचाट्टू गीत, हमेरा प्यार पब्लक उठउठकर भाग-भाग जाईगा । (मुक्का हवा मे लहराते हुए) नही चलिगा बॉस नही चलिगा ।'

'अरे यार ; कुछ माँज-मूजकर उभार ला दो, बेचारा कुछ पैसे पा जाईंगा, आजकल दो-दो बीवियो की परवरिश कर रहा है, कहता था शाम को फ़ाका । फिफ्टी-फिफ्टी उसका तुम्हारा हो जाईगा ।'

'तो बिल्कुल चलिगा बॉस एक मुश्त चलिगा, अबी झकाझक चम-काईंगा, एकदम फश्ट किलास ।' साजन ने सब ज्यो का त्यो रहने दिया, फ़क़त आख़िरी लाइन बदल दी—

मेरी रातो के राजा, कभी चन्दा बन आ जा।
है तुमको मेरे सॉवले उभार की क़सम ।।

'वल्लाह, जियो मेरी धन्नो !' सैंडो सितारिया चिमरिखी जैसे बालूशाही को उठाकर नाचने लगा । 'वाह वा : है तुमको मेंरे साँवले उभार की क़सम, यह भी खूब जमिगा तेरी उस पैरीडी की तरह, क्या है ? सुनाना तो मेरी जान !'

'कुछ तो पढिये कि लोग कहते है, आज गालिब का एकसरा न हुआ।'

'और हाँ, वो मस्त मस्त वाला गाना।'

'वो मस्त मस्त रात वो बादा बदस्त रात

उस मस्त मस्त रात की कीमत न पूछिये।'

'मस्त मस्त रात की' मस्त मस्त मस्त कहते मस्त सितारिया सोफे पर लुढक गया (अरे ये लाइनें तो नज्मा तसद्दुक की है लेकिन कुछ सोचकर पूनम चुप रहा।) उसका दूसरा गीत एक लोक गीत था। बड़ी लचकन-थिरकन और ज़िन्दादिली से रवि जी ने इसको धुन के छदस् मे बाँधा था। एक नवेली पहली बार अपनी ससुराल से लौटती है और रस ले लेकर अपनी सहेलियो से चमक-चमक कर बतियाती है :

ना जाने यार, टिकुली मोरी कहाँ गिरी
पनियाँ भरन जाऊँ, राजा ! न जाने
यहाँ गिरी ना जाने, वहाँ गिरी ना जाने
ना जाने यार, डोरियै में लिपट गई
सेजिया सोवन जाऊँ, सइयाँ न जाने
यहाँ गिरी ना जाने, वहाँ गिरी ना जाने
ना जाने यार, साड़ियै मे चिपट गई

दिलशाद बेगम न अपनी मासल-महीन आवाज़ से गले की घंटियो को चढाते-उतारते, गालो को ऐंठते-मरोरते चहक-चहक कर जब इसे गाया और झेलम न कूल्हे मटका-मटका कर जो रस-भरी रस्साकशी की, उससे दिन दहाडे एक कयामत बरपा हो गई। कतल हो गई। विजय सितारिया ने पूनम को बधाई दी। गीतकार को पहले वाले गीत का पचास रुपया और इसका पूरम्पूर सौ रुपया यानी कुल डेढ़ सौ रुपया मिला। पचास तो गुनाह बेलज्ज़त उभार के खाते मे कट गये। गनीमत है कि पचास ही कटे वरना उभार के लिए तो बड़ी बड़ी सल्तनतें कट-मर जाती हैं। दो गीतो का मेहनताना डेढ सौ ही मिला।

आँचलों की ऊदी-ऊदी घटाओ और शादी के लिए बाजार-भाव बढाने वाले आई० ए० एस०, पी० सी० एस० अक्खड उडनछू राजकुमार जब तपते रेगिस्तानो मे पटक दिये जाते है जहाँ दूर-दूर तक उनके लहूलुहान सपनो को सहलाने और शीतलता देने वाले एक गाछ की छाँह भी नहीं नज़र आती तब सारी ज़िन्दगी एक बोझ, एक तिलमिला देने वाला व्यंग्य बन कर रह जाती है। अधिकारीगण बेकारो के लिए रटे-रटाये भीषण भाषण देकर धूल उडाते चले जाते हैं। कागजी योजनायें बनती है। टाट और फट्टियो से कोने-खुतरो की कंगाली ढककर परदेशी मेहमानो को अपनी शान-शौक़त दिखाने के लिए काम चलाऊ इमारतों को ढहाकर करोड़ों के कट्रैक्ट होते है। ग्लैमर लाने के लिए 'सपाट शरीर वाली' बिल्डिगें बनती है जो दो चार बरस मे ही पहले तो 'लीक' करने लगती हैं फिर निढाल हो जाती हैं। पुख्तगी आये भी कहाँ से ? जब कि लम्बे-चौडे ठेके मे 'घर' के ही ठेकेदार की तरफ से श्रीमान् शिल्प-निर्माता महोदय का चार आना, उप शिल्प-निर्माता का दो आना और भागे भूत की लगोटी लेकर भाग खड़े होने वाले उनके पिछलग्गुओ का आना दो पैसा पहले से ही बँधा रहता है।'

"भइ, सच पूछो जब तक उपरफट्टू का सहारा न हो तब तक नौकरी की नोकरी चुभन पैदा करती ही रहती है। नौकरी-चाकरी मे जब तक मुर्ग-मुसल्लम या ड्रिक-विक की गुँजाइश न हो तब तक वह निरी नटबाजी है। सौ दो सौ रुपल्लियो के लिये हड्डी-पसली तुड़वाने वाली बेवकूफी। लज्ज़त, लुत्फ और लाल परी एक ढंग की नौकरी की खुदाई न्यामतें हैं तभी न लिखाने-पढ़ाने में तीन चार सौ मिलने के ब-निस्बत एक सौ बीस रुपट्टी का मधुमस्त-निरीक्षक या दुर्ओगा बनने में ज्यादा फख्र हासिल होता है। हजारों को इन-कम यानी फ्रंट से न आकर बैक-डोर से आने वाली। मुग़लिया पराठा, रोग़नजोश, मुतवातिर मुतंजन और कलिया कबाब के मुतमय्यन गुलछर्रे और इन सब की अति-रिक्त मस्ती उतारने के लिए पारा-पारा होकर बिछलने

वाली गुलरू माहपारा घलुये मे । हुँ, चाँदमारी मुर्दारिसी : आधी बादशाहत ।'

['होश मे जमूरे ! याद है ?

'का वस्ताद ?'

'अरे वही होली वाली हुडदग बरखुरदार !'

'ना वस्ताद !'

'आच्चा, तो सुन मेरे बादे-रफ्तार !'

'अइसन-अइसन हते एक पक्के खबीस-खुर्राट अदला-बदलो के इनचारज आला-अफसर, सिरिफ दस दफा पास । जिनके आवारे साहबजादो का यह कमाल कि खोन्चे वालो का खोन्चा गिरा दें, अगर हिम्मत करके वह कुछ बोले तो चढ बैठें : स्साले गोली मार देंगे, जानते नही हमारे पापा······टिनटिन है और आला अफसर का यह नव्वाबी हाल कि बिना ह्विस्की के कौर हलक के नीचे न धँसे । तीन-तीन चिरगा अइसन मेहरारू, एक बरी-बियाही, दूसर तुरकिन, तीसर ईसाइन छोकरिया, वहै हस्पत्ताल वाली ई ई ई । सो सुन रिया है बेटा जमूरा ।'

'सुन रियाऊँ वस्ताद ।'

'हाँ तो दसेरा-दिवारी मिठाई और फलो के टोकरे पर टोकरे चले आ रहे हैं हाकिम-हुक्कामो को तरफ से कि 'हुजूर माई बाप ! बस फकत एक आपइ का सहारा है, हमारा इलाका बरकरार रखियो ।' और होली मे ठट्ट की ठट्ट जी-हूजूरियो की पल्टन गैडा-छाप बरी-बियाही से होली खेलती और आहिस्ते स उसकी जयपुरिया अँगिया की एस्टरे में अपन अँगूठा लगाय नम्बरी नोट की बटी सिगरेट डाल देती । सझा बिरियाँ जब आला अफसर अपन गल्ला गिनते तो पूरे बीस की 'फल्टर टिप पाकिट' । सुन लिया जमूरा !'

'सुन लिया वस्ताद, मैं ता इस्से बी ज्यादा जानता हूँ सीरी फरयाद !'

'चल हट्ट झिगुरीमल की औलाद, मुझे चरा रिया है, जान्ता है तो तू बी बता।'

'किश् किश्का चिट्ठा खोलूँ वस्ताद ; सबी तो अपन धोती, लुँगी, पैजामा, पेन्ट और रामनामी के नीचू नगे दीखे है। अमारा छटकी-अधपड्या अन्नदाता सरकारी खरिच पर 'हज' करने जाता, बेटा-बेटी से मिलने वलायत उडता, अगर भूले-भटके कबी जाँच-परताल होता तो बोलता : 'हम तो अपन मुलुक की बढोतरी के खातिर खेती का नवा-नवा तरोका सीखने अपन किसान भाइयो के लिए गिया था। हम तो इतना तकलीफ मे वहाँ पहुँचता, जब बीमार बन के 'करम भूमी' मे लौटता तो स्वागत-सत्कार दवा-दारू तो दरकिनार, ई हरामखोर हम से सवाल पूछता, हिसाब-किताब माँगता, एत्ती हिम्मत, अगर वोट का डर न होता तो रातोरात भुस भरवाय देते।' और ऊ ससुर कफन-खसोट डाँगडर घासीराम, गरभपात का गोसाईं, नकली दवाई तय्यार करिकै गरीबन की जिनगानी से जुआँ खेलैं वाला जमराज का जमाई, दू रुपिया माँ अलानियाँ साटीफिकिट देंय वाला। कौनी-कौनी कइती हेरी वस्ताद, उकील बलिट्टर, ऊ कील जौन करेजे माँ चुभकै फिर कबौ न निकसै, 'ताँत' तक का अपन पैन दाँतन से चीथ-चबा लेंय वाला जुधिट्ठिर महाराज।

हमरी अस्सी बरिस की बुढिया दादी अम्माँ आराम की उमिर माँ लठिया ठेग-ठेग, डुग-डुग दस बीस सीढी ऊपर चढ़के, पाँच रुपिया महनवारी माँ दोनो जून चौका-बासन करती, नक्शेबाज बबुआइन को मीन-मेख निकारनवारी फरवारी लानत-मलामत और घुडकियाँ सहती, ह्वारी बीमारी कब्बी न पहुँच पाती तो तनखा कट जाती। हमरी धरम की बेवा महतारी अपन लुञ्ज-पुञ्ज लरका-लरकिन का जब एकौ जून दुइ कौर रोटी न दे पाती तो···तो···का होता वस्ताद······हमेरे से न पूछ वस्ताद···गोहार···गोहार' अखबार छापी किया : भारत १३ जून '६३ : जिनगानी से मौत भली। सो अइसा सोच-बिचार कर सुबे-सुबे

संबखाँ नहला-धुला के हमरी जसोदा मइया ने फूलदार लकलाट के गुजटे कैपडे पहनाये, माथे पर खडिया का टीका लगाया, भूख-पियास राँड कै नजर मोरे राजा भइयन पै न लगै सो काजर लगाया, गठरी से निकार कै अपन गौने वारी पियरी पहनो और ··और···सब का कतल करके खुद गँडासा से अपन गरदन उतार दिया। मैं पूछता हूँ वस्ताद ! ई हमार कौसिल्ला, सुमित्रा, जसोदा और फातमा बीबी कब तलक अइसा माफिक अपन राम लछन, बलराम-किसुन और हसन-हुसेन का कतल करती रहेगी, सपूतन को दाने-दाने का मुहताज बनाये रखेगी। ओ रे दानबन्द बोल ! का ई सब माया तैंने बस डाँगरन भर का बाँध दिया है। इनसे पूछ, खेतन माँ इन्ने हाँफ-हाँफ कित्ती खातू डाली, कै गगरा पसीना बहाया, अरे या ससुरी भुइँ का सीचै बरे गजरदम से हम अपन सुख-चैन बेंच दीन रे; बडका बेटौना के जाँगर का सत्त निचोड एँही गाभिन कीन्ह, अपन मरदानी बिटैवा क कजरारी नीद सीच यहिकर सिंगार कीन्ह, गभुवारन के ललकत मुँह का कौर छीन एहिका पोढ़ बिया दीन्ह तौ तै का समझत् हा, हम तोहिका अइसन 'पल्हार्बै' देब। जान लइ लेबै औ जान दइ देबै। नही त सुन, आव हमरे साथै साथ जुआँ माँ जुत जा, अपने गाँधा बाबा कै किरिया खाय कै कहित है— साथै साथ खइबे, साथै साथ गइबे और साथै साथ पसीना माँ नहइबे। (पै सच पूछौ तौ हमहिन कहाँ दूध के धोये हन) ई हमार कल का हर-जोतना हरछठवा मयम्मर नेतवा बड्डे-बड्डे डिप्टी-कलट्टरन का नाच-नचाता, पट्टी पढा के चुनाव जीतता, गुलगुल लमछारिन कुर्सिन माँ फसिलयाय कै ऊँघता, दानो हाथ उठाय-उठाय चौक-चौक के राय देता, कागज-पत्तर जो मिलता उसे समेटकर घर लाता, हरछठवा की गरबइठी कलुइया मेहरारू तीन रुपे पसेरी के भाव बेंच पाउडर, लाली और ताजा-ताजा चा का चस्का मिटाती। चीखो, चिल्लाओ तो ज्वाब मिलता ! साला बडा सत्तवादी हरिश्चन्द का बाप बना फिरता है। अपन मुलक का चरित्तर सुधारने का जो दावा करता उसका ई हाल वस्ताद !'

'च···च···च···चुपकर जमूरा, भौत बक बक बोलने लग गिया है।'

'तो हमेरे से खोद-खोद कर क्यो पूछा वस्ताद ?'

'अपन किस्मत का खुशहाली मना जमूरा कि राज-काज परजा का है अगर कहूँ डक्टेटर का राज होता तो तुझे फाँसी-डामल हो जाता।'

'हाँ वस्ताद, अगर अपन राज न होता तो गली-गली घूमै वाला तुम्हरा टकैत जमूरा कब्बी अइसा सोच सकता था। धन्न भाग है परजा राज की, हम बी सोच सकता, खरी-खोटी सुना सकता, रानी रूठै तो अपन सुहाग लइ लेय। हमरे वोट के कीमत लाट साहब के वोट के बरोबर, ई बात दूसर कि हम पेट की आगी बुझावे बरे ओही दू रुपिया माँ बेंच कै दो जून कै खूराकी ले आइत।'

'अच्छा जमूरा, मैं हारा तू जीता। मैं गुर तू शक्कर !'

'हाँ गुरू ! ना ना वस्ताद ! जो कुछ सीखा इन्ही पाक कदमो मे सीखा, ख़ुदा कसम'।

पूनम की आँखो के आगे फुटपाथ पर कीडो से भी बदतर जिन्दगी भुगतने वाली लखहाँ आदम की औलादें कौंध गईं। खौलते दिमाग मे उफनता खयाल आया कि 'आये दिन अपने यहाँ सैंकड़ो मेहमान आते हैं, खूब टीमटाम के साथ गड्ढे-नाले ढककर पालकियाँ ढोई जाती हैं, मेहमॉनवाजी में करोडो खर्च होते है, मेजबानो के खुशकिस्मत मुल्क की तारीफ़ करते हुए मेहमान रुखसत हो जाते है और इधर हमारे ख़ुशकिस्मत मुल्क की उठती-उभरती पौध बिना खाद-पानी के दिन ब दिन सूखती जाती है। पढ़ाई-लिखाई भी ऐसी नाकारा जो अपने पैरो पर खड़ा होने का प्रैक्टिकल तरीका नही बताती, अस्सी-पचासी की बाबूगीरी ढूँढने के लिए विवश करती है।'

मेम्साना हाँक दी जाने वाली अनपढी और हजारो पढी-लिखी लडकियो के लिए काम नही, वर नही, उनकी प्रतिमा और प्रतिभा अपने नवजात भतीजो के पोतडे धोते-धोते और करांये जूठे बासनो की कालिख घिसते-घिसते घिस जाती है। दहेज लिए पिता के पास आठ-दस हजार फालतू रुपये कहाँ से आवें जब कि नन्हे के लिए भरपेट दूध देने की भी गुञ्जाइश नही, रुपया सेर दूध, पानी मिला दूध : हम उस देश के वासी हैं जिस देश मे गंगा बहती है। सो सही हाथो मे जाने के बजाय तीस-पैंतीस की उमर मे बुझी-निचुडी कुमारियाँ किसी ऐरे-गैरे विधुर के गले मढ़ दी जाती हैं और तमाम जिन्दगी मानसिक रोगो की शिकार बनी अतृप्त मातायें बुढभस वीर्य से देश की बागडोर सम्हालने वाली रीढहीन नई पीढी को पैदा करती हैं और बाकी बची-खुची अनव्याही कुमारियाँ इन रसीले दम्पतियो की सुखद ज़िन्दगी पर कुढती-सुढती बट्टे-खाते में लावारिस शुक्र-शुल्कित सन्तानें पैदा करती हुई अपने प्रिय जननायकों के लिए वोट बटोरने वाली भीड समाज को सौपकर सुजलाम्, सुफलाम् शस्य श्यामलाम् राष्ट्र की कितनी बेहतरीन सेवा करती है। जय हिन्द।'

आज की समूची पीढ़ी सिर से पैर तक झनझनाते, कहीं कुछ टूटते उत्तेजित तनाव की जिन्दगी जीती है। हम अपने आस-पास के परिवेश में बोलते-बतियाते, दुख-सुख की बुरी-भली बातें करते, खीझते-कचोटते कहीं कुछ एक बेनाम सी अजानी अपरिचित रिक्तता और संशयालुता पाते है। हम चाहते कुछ और है, हो कुछ और जाता है, चिन्तन का चक्र एक दिशा में चलता है और अभिव्यक्ति किसी अन्य विधा से व्यक्त होती है तब इस विचित्र बेकाबू परिवर्तन पर अपना कुछ बस न चलता देख हम ग़ालिब की ग़जलें गुनगुनाने लगते हैं। सुबह के निकले बहुत रात बीते आकर खा-पी लेने के बाद निपट अकेले जब हम अपने आप को दुहराते है तो पाते हैं : ईर्ष्या, जलन, अनास्था, नकारात्मकता और किंकर्त्तव्यविमूढ़ता का एक अजीब

खौलता हुआ घोल। पेबन्द लगे टुकड़ों में बटी हुई समग्रता, अन्तर्तम के घावों को रूपान्तरित करने में विवश असहाय दरिद्र शब्द और क्षरित हुए अक्षर।

और उफ़, कितनी घनघोर प्रतियोगिता है जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में, चारों ओर जहाँ देखिये : मयखानों से लेकर मन्दिर मस्जिद गुरुद्वारों तक, घास की सट्टी से लेकर ज्वेलर्स की दूकानों तक, बस स्टैण्ड से लेकर गोदामों तक, चकलों से लेकर चौराहों तक, चटपटे वालों से लेकर घर के धुँधवाते चूल्हों तक, अस्पतालों से लेकर श्मशानों तक सब जगह भीड़ भीड़ भीड़, धाजीगरी भीड़, आज ये सारी जगहे भरी ही नहीं है, उफ़ना रही है। नगर नागरिकों से, मकान किरायेदारों से, रेस्तराँ और कैफे उखड़े हुए दार्शनिकों और व्यभिचारी मानवतावादियों से, तीर्थ-तट कुकर्मी पोंगापथियों से और सैलून-सिनेमाघर शौकीन सफेदपोश शोहदों स बुरी तरह भरे हुए है, आड़े-तिरछे ठसाठस कसमसा रहे है। जनयुग का यह दिशाहीन विद्रोह, युग-युग से वञ्चित असंतुष्ट मास' (भीड़) सामाजिक जीवन की उच्चतर उपलब्धियों की ओर अग्रसर होकर उसे भरपूर भोगने के लिए अपनी मुट्ठियाँ भींचे, बौखलाया होंठ चबा रहा है। वह सभ्यता और संस्कृति की उस समस्त सुषमा को हथियाने और निचोड़ने के लिए कृत-संकल्प है जो अभी तक चन्द मुट्ठी भर मगरमच्छों की मालकियत समझी जाती थी।

ज़ाहिर है कि बढती आबादी के साथ नये-नये अनगिनत फ़ैचलेदरी भोगो का विस्तार भी बढता जा रहा है और इसके साथ साथ रतिरोग जैसी मानसिक उलझनें, कुंठायें और घुटन भी बढ़ती जा रही है। जिन्दगी तो किसी आवेशजन्य भूल-चूक के कारण बडी आसानी से पूरी की पूरी मिल जाती है पर उसे कई-कई किश्तो मे भुनाने-भुगताने की मामूली सुविधाये तक मुहय्या नही हो पाती। कहाँ मिलती है!

कोई बताये ! तृप्ति सन्तोष और सुकून जैसे हमारे खून-पसीने की अपनी औलादें न होकर किसी अजनबी रास्ते-राहत की मेहमान बन गई है। जो जितना ही सम्पन्न है, उसके भीतर उतना ही असतोष, उखाड-पछाड, व्यौत-कुतर और आपा-धापी मची रहती है। भाई छगन मगन लाल को ही ले लीजिये। करोडो का कारोबार, दर्जनों कोठियाँ, हजारो मे वसूल माहवारी किराया, लाखो का सिने इडस्ट्री मे इनवेस्टमेट। धमधूसरा धर्मपत्नी तो खैर कन्यादान के लिए है अलावा इसके पासियो जहरीले होठो वाली विषकन्याएँ, तिलोत्तमाएँ इर्द-गिर्द चक्कर काटती रहती है। नये से नये माडल का मशीनयुक्त कीमती गाडी, एयरकडीशनर कोठी, करोडो का बैक बलेस, सामाजिक प्रतिष्ठा और खयाली अय्याशो के लिए समर्पिता उर-वसियो की गोल्डेन ब्रोकेडी कनखियां मारती तुरुप चाल'।

अब और क्या चाहिये ? फिर भी ससुरा उस दिन कह रहा था। 'यार मुँशी ! स्साली आकली जिन्दगी बोर, नो चार्म, नो अट्रैक्शन, नो एनी ग्लैमर, कोई टानिक-वानिक बताओ यार !' और यार मुँशी यह सुनकर हक्का-बक्का सा चिलम जैसा लम्बोतरा मुँह बनाकर हिमालिया से डाइरेक्ट आने वाली ठण्डी-ठण्डी हवाओ का धुआँ फेंकने लग गया था।

पूनम सोचने लगा कि वातानुकूलित कोठी मे रहने वाला, रेफ्रिजरेटर का खाना खाने वाला, चौदह फीट लम्बी शेवरले पर चलने वाला, छगन मगन क्या जाने कि घुटन, बेहिस बेमानी जिन्दगी की कुढन और घिनौनापन क्या बला है ? सामने बिखर गये बी० ए० एम० ए० पास बीस-पचीस की उठती-उभरती उमर वाले गालो के पिचके सड़े सेब, दस ऊपर सौ मे गृहस्थी की बोझिल गाडी खीचते हुए हिल्ले-रोजगार से लगी खुसकिस्मत झुकी कमर वाली फायलो मे डूबी, मेजो पर टिकी गुट्ठिल लाचार कुहनियाँ, मामूली चपरासगीरी के लिए दरबदर ठोकरें खाती भारत माता ग्रामवासिनी की लाडली सन्तानें। और फिर कौंध

गया जलते अगारे के मानिन्द अँगूठाछाप अय्याश अमरपुरी के महन्त का कूल्हो पर ताल देते हुए कहना, 'चेला जी ! अपना का का फिकर पडी है, माफी-जिमीदारी जाय गंगा जी मे, पाच हजार सालीना तौ बख्शीश खरच के लाने जिन्दगी भर का बँधियै है फिर एक झपताल ..। यानी चार सौ बीस से थोडो कम महनवारी मुन्नीजान और हसीनाबेगम की गलीज ठुमरी और टप्पे सुनने के लिए, 'हिरण्यमय पात्र' का ढक्कन खोलकर 'सनातन सत्य' का साक्षात्कार करने के लिए तभी न रेंक रहा था : 'पढ़ैं फारसी बेचै तेल, या देखौ कुदरत के खेल ।' पूरे पाँच-पांच अदद बी० ए०, एम० ए० खरीद सकता है, उनका अन्नदाता बन सकता है। (चुटकी बजाकर जम्हाते हुये) सीत्ताराम, सीत्ताराम। (दो पैसा रुपया सूद की आमदनो तीन साढे तीन तक तो पहुँचेगी ही, चेलाने से डेढ़ दो सौ मन अन्न आने से कौन भकुवा रोक सकता है, चढ़ोत्री चढेगी ही और फिर उसी के बल पर चरण-चापन, चढ़ा-उतरी और चूमा चाटी चलेगी ही।) बाबा कणाद ने गलत नही कहा : यतोऽभ्युदयानः श्रेयससिद्धिः स धर्मः।

सो 'जय सियाराम जानकी मइया' की 'किरपा' से ऐसे धर्मावतारों की मौज से कटी जा रही है और कटती जायगी। अव्वल नम्बर बी० ए०, एम० ए० करके गेली प्रूफ पढने वाले और पसीने से लथपथ गली-गली अखबारो की फेरी लगाने वाले जायँ गगा जी मे। एक ओर धर्मावतार दयानिधान महन्त गुरुमुखदास हैं तो दूसरी ओर है कृपानिधान सब 'गुन' आगर सेठ छगन मगन लाल। ये अभी दोनो दो चार पीढ़ियो तक इस धर्म क्षेत्रे जम्बू द्वीपे भारत खण्डे बड़े चैन की बाँसुरी या वायलिन बजाते हुए जियेंगे, भरपूर जियेंगे लेकिन सेठ छगन मगन उदास क्यो?

इसलिए कि भाई श्यामल श्यामल बरन ने काले बाजार मे स्मगलिंग करके, नकली दवाइयाँ बेंचकर 'आयात-निर्यात' करके, कूड़ा कबाड़ वाले गोदामो मे आग लगाकर बीमा कारपोरेशन से सब कुल मिलाकर पचीस करोड़ कमाये। डुप्लीकेट बहीखातो के जरिये लाखों का इनकम टैक्स

दबायो दो चलुये मे और हमारे प्यारे भाई छगन मगन इतना कीमती टल्कम पौडर सना पसोना बहाकर भी पन्द्रह से आगे नही बढ सके। खैर, इनकम टैक्स मे तो करीं कमर निकालेगे ही। अब समझ मे आया आपके कि हमारे सेठ छगन मगन लाल जू को डनलपिलो की स्प्रिंगदार उछलती क्षीर सागरी सेज पर—नीद क्यों रात भर नही आती?

चाहे भाई श्यामल श्यामल बरन हो, चाहे भाई छगन मगन, वे अपने पूंजी के तालाब को और अधिक गहरा और चौडा-चकला बनाना चाहते है जिससे कि वे दूनी कोठियाँ बनवा सके, कीमती कारो को तलाक देकर हेलीकाप्टर्स पर हवा खा सकें। भाई-भाई यही चाहते हैं कि वे दोनो ऊपर शून्य मे चक्कर काटते रहे और उनके बैंक बेलेंस मे तिगुने-चौगुने शून्य बढते रहे। सच तो यह है कि दोनो यह मानकर इस धरा-धाम पर अवतरित होते है कि जिन्दगी एक रेस कोर्स है। कम्पटीशन है। इसीलिए उन्हे नीद लाने के लिए नीद की गोलियाँ खानी पडती हैं। सरगम के सब से ऊँचे सप्तक पर जीने की हविश लिए यह वर्ग, जहाँ वाद्य यत्रो के तारो के अतिशय तीव्र आलोडन के कारण झनझनाकर टूट जाने की शका प्रतिपल बनी रहती है। स्नायविक थकान और निरन्तर वेगशीलता के कारण चार्म, ग्लैमर या 'रम' मिले भी तो कैसे? जबकि असन्तोष और अतृप्ति के बगूले उठ उठकर हरी-भरी जिन्दगी को वीरान बना देते है।

आज की पीढ़ी को जितनी जबरदस्त विवशता, विषमता और विभीषिका की एकरस नारकीय यंत्रणा झेलनी पड़ रही है। इतना शायद ही इतिहास की कोई कड़ी कशमकश में जूझी हो। निरन्तर वेगशीलता, भागमभाग, चरैवेति-चरैवे.त अच्छा बुरा जो भी मिले उसे चरते हुए चले चलो, बढ़े चलो, बढ़े चलो। अगर जरा भी रुके, टुक दम लिया तो पीछे आने वाली भीड़ तुम्हारी छाती को छलनी बनाती हुई आगे निकल जायगी और तुम टापते रह जाओगे।

आज के इस भू+गोल यानी जमीन गायब ज़माने मे इस 'शेर' की किस्मत पर सचमुच सवासेर से कम तकरीबन एक किलोग्राम वाला बौखलाया गुस्सा आता है, एक अजीब कोफ्त होती है :

जी चाहता है फिर वही फुरसत कि रात-दिन
बैठे रहे तसव्वुरे जानाँ किये हुए।

अबे चल उठ, 'तसव्वुरे जानाँ किये हुए' के बच्चे; बैठा रहेगा तो चाय के लिए मखनिया दूध भी खतम हो जायगा। देखा नही नुक्कड पर दूध लेने वालो की भीड। समुद्र-मथन का सीन, भयंकर रस्साकशी; वाह रे फुदकियोदार अमृत !

गीतकार गृहस्थी को ढकेलने के लिए रूबी से पैसे लेकर बाजार चले। आसमान छूते हर चीजो के भाव बेभाव पडे। बाप रे, ये कँकरीले घुने गेहूँ, गीली-गीली पिसी चिनी, चिरचिराने वाला मिट्टी का तेल, विलाप करने वाली लकडियाँ, वर्णशकरी गोघृत। सब मे मिलावट··· मिलावट···मिलावट। ज़हर खरीद कर इतमीनान के साथ अगर हुज़ूर मरना भी चाहे तो उस पर भी कट्रोल यानी मौत मे भी मिलावट।

'दो डिब्बा सर्फ, एक कोल्ड क्रीम, एक एकलात, एक टूथपेस्ट, दो रेक्सोना, चार पैकेट कैंची और एक दर्जन शेफ्टीपिन।'

'और बाबू साब !'

'बस भाई बस।'

'कुल कितना हुआ ?'

'क्या हुआ साब, फकत ग्यारह रुपये बाइस नये पैसे टैक्स समेत।'

'(मर गये)'

जेब टटोली, कुल दस रुपये से भी कम जोड-बटोरकर निकले। सामने नज़र गई। फिक्स्ड प्राइस की लिस्ट के बगल मे एक 'हितोपदेश' झूल रहा था। 'उधार प्रेम की कैंची है' अतः प्रेम को सही सलामत रखने के लिए नवविवाहित पूनम जी कैंची के पैकेट लौटाकर खीझते-बौखलाते अपने दौलतखाने लौट आये।

'टैक्स-टैक्स-टैक्स, हर चीज़ पर टैक्स, जीने पर टैक्स, मरने पर टैक्स, काबा-काशी जाने पर टैक्स, खाने-पीने घूमने फिरने की सारी चीजो पर टैक्स, चार से ज्यादा बच्चे पैदा करने पर टैक्स (क्यो भाई ऐसा क्यो ? एक मुँह के साथ हमे काम करने को दो हाथ भी तो मिलते है, अपने पडोसी को देखो जरा, खैर) तो फिर मिस्टर देखना अगले साल रग बिरगे टैक्सो की नुमायश । कूल्हो से एकदम सटी तग पैन्ट या शलवार और मर्दाना कमीज की सदके जावाँ ठुम्मक ठुम्मक चाल पर, मेम साब के खाली बटुये के कमाल पर, काले साहबो के विलायती जबान के मलाल पर, बेकारी भुखमरी और नाकामी के शिकार फुटपाथ पर जिन्दगी को धकियाते, मौत को गले लगाते हुए जीने वालो के खस्ता हाल पर, दिलफेक फिकरो और लेमन-ज्यूसी लैलाओ की सनफ्राइज्ड छाप मुस्कान पर, जवानी का सिग्नल देने वाले मुँहासो की बौछार पर, सैंडिल हजामत मार्का कूचये यार पर और और आखिर मे इन सब पर नुक्ताचीनी करने वालो के अप-टू-डेट इसरार पर दुगने, तिगुने, चौगुने टैक्स लगेंगे। लगने चाहिए : कितने हसीन टैक्स ये अल्लाह की कसम।

गीतकार का फिल्मी चक्कर बदस्तूर चलता रहा लेकिन सिवाय बडी-बडी बातो, लफ्फाजी लेक्चरबाजियो और खोखली उम्मीदो के कुछ हासिल न हो सका। डेढ सौ कत्र के खल्लास हो चुके थे। फिल्मो पर बेहद इक्साइज ड्यूटी बढ जाने के कारण बहुत से स्टूडियो बन्द हो चुके थे, भूख-हडताल शुरू होने वाली थी। अब बडो-बडो के साथ किश्तबाजी चल रही थी। नई फिल्मो के निर्माण का काम प्रायः ठप सा था। एक बुझी-बुझी सी शाम को नाकामी की हालत मे चप्पलें घसीटता पूनम घर लौट रहा था कि रास्ते मे मैरीन ड्राइव का मुलाकाती रुस्तम चंदानी मिल गया। उसने झट गाडी रोक दी, पूनम को बगल मे बैठा लिया। इधर-उधर की बातें हुई; बोला : 'यार, अजीब परेशानी है, सिस्टर का वास्ते एक लेडी ट्यूटर चाहिए कोई बुढिया बुज़ुर्ग, उसका

इम्तहान बिल्कुल नजदीक है। जो कहोगे फीस दिला देंगे मम्मी से। घर से गाडी ग्राकर खुद ले जायगी और छोड जायगी।'

'किस क्लास के लिए?'

'अरे, सिम्की के लिए, सीनियर कैम्ब्रिज मे पढती है।'

चन्दानी बेतार के तार की खबरो द्वारा पूनम जी की 'चक्कू मार्का चिडिया' और उनकी संगदिल मजबूरियो से अच्छी तरह से वाकिफ था। इसीलिए उसने बडी सफाई मे सलाह का सिक्का उछाल दिया। खनखनाहट का चुम्बक बेकार न गया। पूनम ने कहा: 'डियर, वैसे तो मिसेज भी पढा सकती है। बी० ए० है लेकिन बाहर जाने में शायद उन्हे एतराज हो।'

'भइ, सिम्की खुद चली आती लेकिन इधर दिन-दिन बडी घुमक्कड होती जा रही है, पढने के बहाने किसी अपने फ्रेण्ड के साथ जुहू की सैर करने निकल जाती है, मम्मी ने इसीलिए इम्तहान तक के लिए बाहर आने जाने की रोक लगा दी है। मैं नही समझता कि भाभी जी को हमारे यहाँ आने मे कोई परेशानी हो सकती है, शोफर रोज शाम को घर से ले जाकर एक घन्टे बाद छोड जायगा। घर मे खाली-खूली बैंठने मे भी तो 'बोर' फील करती होंगी।'

बहरहाल, पैसे की तगी के कारण दोस्त की बीवी ने दोस्त की बहन को घर जाकर पढाने का 'ऑफर' स्वीकार कर लिया। बैठे ठाले ऐसी तंगदस्ती मे सौ रुपये कम नही होते, फिर मोटर मे जाना और एक घन्टे मे लौट आना, तफ़रीह की तफ़रीह और काम का काम। इस अचानक हासिल खुशी मे शकुन्त केले के चिकने पातो सी हवाई लहरों मे तैरती घर के बिखरे सामान को करीने से सजा रही थी और उधर मैरीन ड्राइव की ओर रुख किये चन्दानी की चाकलेट कलर-वाली अम्बेसडर अपने आप फिसलती चली जा रही थी। सात समुन्दर पार से आने वाली ठुनकती हवाओ के नमकीन झोकों से फर-फर उडती स्कर्ट और साड़ियो को सम्हालने मे परीशान परीजाद चेहरे मन में

गुनेहो की लहरें उठा रहे थे। चन्दानी की नशीली आँखो के अक्स मे अभी-अभी की खिची शकुन्त की जाडे की धूप सी लजीली तस्वीर बडी प्यारी-प्यारी चुनचुनाहट का अमृताजन मलते हुए बेनाम तरावट और ताजगी दे रही थी। लम्बे चौडे बॉर्डर वाली बैंगलोर साडी और उसी से मैच करता हुआ फूल-पँखुरियो वाला डोरियोदार ब्लाउज़ जिसमे शकुन्त का प्रोटेक्स छिडका, महकता बदन फँसा हुआ था। गोरे सदली माथे से फिसलती पानी की मोटी-मोटी बूँदें, सगमर्मरी मासल पिंडलियाँ चूमती लाँबी-सटकारी रेशमी लहरियाँ और धुले-धुल काजल से घायल बडे प्यारे अनियारे नयन, बिना किसी मेक-अप के निहायत सादा सलौना सौन्दर्य।

रुस्तम चन्दानी का आशिक मिजाज दिल उछल-कूद मचाकर थका डालने वाली, खटमिट्ठे खुशबूदार चुम्बन 'सिप' कराने वाली छोकरियों से लेकर गाढी लाली से सराबोर मोटे-महीन होटो, उछलते कूल्हो और आखो में चुभाये जाने वाले तीरदाजी उरोजो वाली सोसाइटी गर्ल्स और गागल की धूप-छाँह मे इतमीनान से नयन-सुख लेने-देने वाली अपटूडेट स्मार्ट लडकियो से भर गया था। शकुन्त के सलोने सौन्दर्य को देखकर आज वह पहली बार समझ सका था कि सादगी अपने आप मे स्वयं एक अनास्वादित सौन्दर्य है। बिलकुल अछूता, कुँवारा, ओस से नहाये सुबह के ताजे कमल सा, सोते शिशु की निश्छल मुस्कान सा, किसी नवोढ़ा के प्रथम-प्रथम यौवनागम की लजीली अनुभूति सा। चन्दानी इस अतीन्द्रिय रोमाच को पीकर जैसे बहक सा गया। आज उसे वे पिछले अनगिनत सौदेबाज समर्पण बेस्वाद और बासी लग रहे थे। ठीक वैसे ही जैसे उमस भरी गर्मियो के दिन मे अन्हौरियो भरी पीठ को मखमली मसृणता उबा देने वाली बन जाती है और खुर्री खाट पर का पसरना, रोमाच पुलक भरा संघर्षण एक अनूठे स्वाद की वर्णनातीत व्यंजना से गुदगुदा जाता है।

चदानी का ड्राइवर दूसरे दिन आकर ठीक टाइम से शकुन्त को ले

गया। सिम्की सचमुच बडी सिरचढ़ी, बातूनी, नाज प्यार से पली कामचोर लडकी थी। शकुन्त ने साइक्लाजिकली हल्के-हल्के हँसा-खिला कर उसमे पढ़ने के लिए चाव पैदा किया और बीच-बीच मे क़िस्मे कहानी सुनाते हुए पढ़ाने लगी। जहाँ शकुन्त सिम्की को पढाया करती थी, ठीक उसके सामने चन्दानी की खिडकी खुलती थी। चन्दानी सोफे पर तिरछे लेटा-लेटा 'पिक्चर पोस्ट' की आड से शकुन्त को दो-चार बार जरूर देख लेता था और न चाहकर भी शकुन्त की मायूस-मासूम निगाहे उससे टकराकर सिम्की की नोट बुक पर बिछल जाती थी। कभी-कभी चन्दानी कोई चीज ढूँढने का बहाना लेकर बौखलाया सा बहन के कमरे में चला आता और टेढी-मेढी गर्दन किये शकुन्त को घूरते हुए कघा या कलम उठाता, रख देता और खाली हाथ लौट जाता या लेकर फिर रख जाता। उसे कोई काम धाम तो था नही क्योकि उसके डियर डैडी ने विदेशी घडियो की स्मगलिंग करके लाखो रुपये कमाये थे और बडी दूर दर्शिता से उस कमाई को चार-चार फ्लेटो वाली पाँच बिल्डिगो के रूप मे अपने लाडले बेबी और सिम्की के खाते मे जमा कर गये थे, ढाई हजार किराया और घर मे कुल जमा दो मुर्गियाँ और एक मुर्ग छाप मजनूँ जो अपनी चाकलेटी एम्बेसडर पर तैरता सुबह शाम जुहू, चौपाटी, शान्ताक्रुज, हैगिग गार्डन, महाबलेश्वर और कभी-कभी पवनपुल-कमाठीपुरा तक बाँग देता रहता था लेकिन इधर-उसकी पाक नजरो मे तमाम मुटल्ली मुर्गिया कुडक और बदचलन नजर आने लगी थी। वह अपने घर पर ही बडी लगन से अहुरा मजदा के आगे सिजदा कर अबेस्ता के पन्ने पलटने लगा था। मम्मी भी खुश थी, चलो बेबी बिगडते-बिगडते सम्हल गया।

सिम्की के इम्तहान के फकत पद्रह दिन बाकी थे। शकुन्त बडी लगन से उसे पढ़ा रही थी और इधर सिम्की भी बडी दिलचस्पी और मेहनत के साथ पढ रही थी। हाँ, बेशक रात की जम्हाइयो भरी नींद की लहरे बिल्कुल अकेले मे बालिगो द्वारा पढी जाने वाली पोशीदा किताबों

मे टूटती हुई उसके सवा इची सीने की ऊँचाइयो से अब भी टकरा जाती थी। शकुन्त का पढने-पढाने का सिलसिला चलता रहा। 'ब्लू' फिल्म सी जिन्दगी को जीता हुआ गीतकार पूनम बम्बइया मस्केबाजियो मे घिनौने मजाक सा घुटता-घिमटता, दर-बदर की ठोकरें खाता रहा और मॉडल बनने का धधा जोडकर रूबी पिकनिक कॉकटेल पार्टियो और रॉक एण्ड रॉल की मादक धुनो मे मँगनी माँगी जिन्स की तरह बँटती हुई श्लथ निढाल इतराती डगमगाती, टा टा करती बहुत रात गये तक घर लौटती रही। अनन्त आकाश के नीलाञ्जनी विस्तार मे भाई श्यामल श्यामल बरन और छगन मगन के लाखो-करोडो के स्टाक इक्सचेंज और रेस कोर्स के दॉव-पेंच चलते रहे। डाइरेक्टर विजय सितारिया, मुँशी मनसुख लाल नचनियाँ चम्पा लाल और साजन बालूशाही के तृप्ति के दौर जूठी तलछट मे उछलते रहे। निहायत नाजुक दिलकश अदा से चार-पाँच अल्फाज बोलने मे ही थक जाने वाली, हर नये साल मे एक साल घट जाने वाली लज्जतदार छौकी-बाघरी हीरोइन शमीम के भाव दिन दूने बढते रहे, चढते रहे और रूबी और शकुन्त और गीतकार पूनम की दर-बदर ठोकरे खाती, औने-पौने भुनती मजबूरियाँ, तल्ले की घिसन, साड़ी और स्कर्ट की सिकुडन, पिडलियो की नसो की चिटखती थकन और नाकाम हसरतो की हरारत दिन ब दिन बढती गई, जीवन-रस निचोडती गई।

आज खुशनुमा शाम ताजा-ताजी ड्राई क्लीनिग की हुई कलफ-दार बोस्की की कमीज सी बडी कडकदार थी। खिडकी के रेशमी जाली-दार पर्दे फरफराती, छन छनकर आती खुशबूदार हवा कमरे मे नई दुल्हन की तरह झमक रही थी। दूर धुले आकाश मे तारे मोतियो की झालर गूँथते टिमक रहे थे। और समुद्री लहरो मे घुलती बैंड की धुन एक बेवजह सुकून और नीद के झोको का सिरप बूँद-बूँद टपका रही थी। घर-बार सम्हालने की चिन्ता मे चुइग गम सरीखे घुलने वाले मिस्टर

रुस्तम चन्दानी ने अपनी प्यारी मम्मी के साथ सिम्की को एक नई फिल्म देखने के लिए विवश किया।

क्यो बेवजह टाइम खराब हो, आज तुम्हारी सिस्टर भी नही आ सकेगी, कहला भेजा है कि सिर मे जोरो का दर्द है सो आज जाकर जरूर-जरूर 'दिल देके देखो' और कल से दिल लगाकर पढो। मम्मी अपने लाडले के इस बुद्धिमत्ता पूर्ण 'एडजस्टमेन्ट' पर अपनी जिन्दगी में आज पहली बार कुलकायमान हुई। इधर शोफर माँ बेटी को लेकर 'दिल देके देखो' दिखाने चला गया और उधर मिस्टर चन्दानी ने लुँगी फेंककर पैन्ट चढाई, बुश्शर्ट डाली और बटन बन्द करते करते टैक्सी को आवाज़ लगाई और 'ईचक दाना बीचक दाना, दाने ऊपर दाना, लडकी ऊपर लड़का नाचे मौका है सुहाना' गुनगुनाते दादर पहुँच गये और शकुन्त को आवाज़ लगाई।

'कम सून, कम सून मिसेज पूनम, आज ज़रा मम्मी ड्राइवर को लेकर किसी ज़रूरी काम से चली गई है, मैने सोचा, मै ही आपको लेता चलूं, इधर एक फ्रेण्ड के पास से लौट रहा हूँ।' मिसेज पूनम कुछ ठिठकी फिर कनेर की पत्तियो सी छरहरी अगुलियो वाले दोनो हाथ जोडकर बिना कुछ कहे आकर चदानी के बगल मे बैठ गई। टैक्सी रफ्ताइत हुई।

सलोनी साँझ की बाँहों मे झूमती दूर-दूर तक नारियल की सघन तरुराजि, जलगंधी वातास मे उभरती-उभरती बकुलपखी चाँदनी की हरकतें और बगल मे सिमटी-सिकुडी एक लजीली खुशबू जो एक हल्के नीले रंग की साडी मे चिपकी और फुँदनीदार बाँडी का अक्स फेकते अस्तित्व शून्य ब्लाउज मे बिलकुल सादे दो स्टैप्स वाले कामिनी मार्का चप्पलो में म्हावरी पगतलियो की पायलियाँ बजाती हुई बैठी थी। टैक्सी का बिल देकर जानी-मानी निश्चितता से पीछे-पीछे चदानी और आगे-आगे शकुन्त चली। चदानी ने ताला खोला। शकुन्त ने भौहो की भाषा मे पूछा : 'यह क्यो ?'

'मम्मी किसी काम से गई है न, सिम्की का क्या भरोसा, पढ़ते-पढते

सो जाय इसीलिए लॉक कर गया था । आइये आइये !' और पीछे से मेन-डोर को लाक कर दिया । सहमी-सहमी शकुन्त आगे बढी लेकिन सिम्की न दिखाई पडी ।

'आइये-आइये ! बस मिम्की आती ही होगी ! आप बैठिये, मैं तब तक आप के लिए काफी बना लूँ ।'

और शकुन्त खुद न जान सकी कि कैसे एक यांत्रिक क्रिया से चन्दानी के कमरे मे अपने आप आ गई । हर एंगिल्स पर आदमकद डाइमेन्शनल शीशे, चार-चार शकुन्त, तिरछी-तिरछी फैलती मनमोहक लहरियाँ, प्लास्टर आफ पेरिस की बनी शुभ्र-स्वच्छ अजीर के पत्ते मे मात्र आदिम नारीत्व को छिपाये बिल्कुल निर्वसन हव्वा और उसकी गद्दर गोलाइयो मे कबूतर की तरह सिर रखकर सोया युग-युग का प्यासा आदम । नग्नता से परे एक सुकुमार कलात्मक चमत्कार की प्रतीति । ड्रेसिंग टेबल, अनगिनत प्रसाधन की सामग्री, लम्बे-चौड़े सोफे, बड़ा सा रेडियोग्राम और दूर से दिखता डायनिंग हाल के कोने में रखा लाइट मारता रेफ्रिजरेटर । शकुन्त ने 'थैंक्स' कहकर बड़ी शिष्टता से काफी के लिए मना कर दिया ।

'आलराइट, तो कुछ कोल्ड ड्रिंक विंक ।'

कहकर चन्दानी उठा, रेफ्रिजरेटर खोला और दो लबरेज़ गिलास में बैगनी रंग की उफनती तरलता लिए वापस लौटा । शकुन्त के गुलाबी दुपतिये होठ कुछ देर तक झाग के उफ़नते सैलाव से टकराते रहे फिर तीखी उष्णता की एक कौध चीरती हुई बहुत गहरे, बहुत गहरे धँसती चली गई । खिडकी से दिखाई पड़ने वाली दृष्टि के अतिम छोर तक छितराई सागर की अतल नीलिमा, ऊपर झुका-झुका नील गगन, उडते हुए जल पंखियों की पाँत और पछाड़ खाती हुई हठीली लहरें । शकुन्त की सीपी के समुन्दर में भी अब झाग उठने लगे थे । बड़े अजनबी, अनूठे आकुल-व्याकुल ।

'देखिये जी सिम्की म्राईक्कि नही !' बिखरते मदिर स्वरो मे शकुन्त चहकी ।

'अजी बैठिये भी सरकार, आप तो बडा 'अजनबी' फील कर रही है मिसेज पूनम !'

ट्विंकल ट्विंकल लिटिल स्टार,

हाऊ स्वीट चार्मिंग डियर यू आर ।

हाऊ स्वीट चार्मिंग डियर यू आर, यू···यू ··आर'

गुनगुनाता चदानी 'व्यु मास्टर उठा लाया और प्रोजेक्टर चढाकर पहले तो ताजमहल, कुतुबमीनार, काश्मीर के रगीन बजरो और केसर की हल्द घाटियो मे घुमाता रहा फिर झट पिन-अप इटालियन ब्यूटीज की रगीन रीले लगा दी : सगमर्मरी प्रतिमायें, कमर मे महज फूलदार चढ्ढी पहने, उतार-चढाव को और भी अधिक उजागर करने के लिए झीने कपडे मे झिलमिल करती, अँगडाइयाँ लेती, खुमारी के लच्छे छलकाती अल्ट्रा माडन दीप-शिखायें, 'पर्पते' के पेड की याद दिलाने वाली छरैरी लडकियाँ, निरावृत्त तराशे वक्षस्थल को बड़े अन्दाज से अंजुरियो के अन्तराल से झलकाती बाब्ड हेयर छोकरियाँ, क्लीनशेव्ड बगलो वाली लिपस्टिकी होठो की पेशेवर नुमायश सजाये, मेहदी रजित तलुये मोड़े सुनहरे केशो वाली नवल हसिनियाँ, उरोजो के बल लेटी दूधिया लहरो का परिधान पहने, बडी कातिल हँसी हँसने वाली खुली चाँदनी मे नहाती जल कन्याएँ ।

सौन्दर्य के इस कदली वन मे विचरती शकुन्त के हाथो से 'व्यु मास्टर' गिरते-गिरते बचा । स्काच अब अपने पूरे उभार पर थी । शकुन्त सोफे पर कुहनी टेककर और एक पैर ऊपर मोड़कर 'एट ईज़' बैठ गई थी और एम्ब्रेला चेयर पर बैठा चन्दानी उसकी साडी से खुली हिलती पिडली को ताक रहा था । एक नाजुक सा भरा-भरा गोल मटोल पाँव, ऊपर कसी-कसी नीली नसो वाली मासल पिडली जिसमे दौडता हुआ रक्त-प्रवाह शकुन्त की ताज़गी, लज्ज़त और जायका सब कुछ था ।

बहुत कोमल उजले कमल सी चिकनी सफेदी और ऊपरी चढ़ाव चढने मे हाँफती हुई चदानी का सिहरती कशिश और अब वह उस भाग को देख रहा था जहाँ साडी का साम्राज्य समाप्त होता है और ब्लाउज की बन्दिश लग जाती है, खुला-खुला सा अजीब वहशत पैदा करने वाला, डोरियो क लहरिया कसाव के निशान छोड जाने वाला नदी का दमकता द्वीप।

चन्दानी न शकुन्त के फूलो का गुच्छा थाम लिया, हथेलियाँ कुछ अप्रत्याशित ढग म सख्त और मर्दानी थी। बलिष्ठ बाहुओ का कसाव बढता गया, घेरा तग होता गया और अब चन्दानी की साँसे महसूस कर रही थी— गहन चुप्पियों के मूक घूँघर, पीले कनेर के फूलों की बजती घंटियाँ, रजनी गंधा की मूर्छित उजास, फाल्गुनी पूर्णिमा की आलोड़न भरी बेलिया वातास, चमेली की चन्दनियाँ फेनिल गन्ध और और ऊदी-ऊदी घटाओं की छनकती-छनकती छागलें।

एक कुहुक। एक टोना। एक इद्रजाल।

पन्द्रह मिनट के बाद कुहुक, टोना और इद्रजाल के सारे बादल छँट गये थे और बारिस के बाद की उमस सी छोड गये थे शकुन्त के कपोलो, होठो, अनेक सधिस्थलो और उजले माथे पर बडे-बडे जलते फफोले, टीसते इश्तिहार। उसकी सारी देह मे अब फफोले बेतहाशा उगते चले आ रहे थे जिनके भीतर भरी हुई मवाद चिलक रही थी। एक अजीब तलभन, बेदर्द छटपटाहट। अब 'चन्दानी विला' के सारे दरवाजे खुल चुके थे और शकुन्त के भीतर एक गोपन रहस्य बन्द हो चुका था। शकुन्त चन्दानी की ओर बिना देखे, शिकारी की गिरफ्त से छुटी अदान मृगछौनी सी कुलाँचे भरती बेतहाशा भगी और उसके पीछे-पीछे 'रुकिये रुकिये टैक्सी तो लेती जाइये' की आवाज़ लगाता हुआ चन्दानी।

'ए टैक्सी! मेम साब को दादर छोडना माँगता, ये लो पैसे।'

'अच्छा साब।'

टैक्सी मे बैठी शकुन्त की सारी देह ठण्डे-ठण्डे बहते झोंकों से एक-दम ठडी थी पर भीतर जैसे एक असह्य दाह का ज्वालामुखी सुलग रहा था। ओ माँ, यह क्या हुआ ? कैसे हो गया ?

उसे याद आई अपनी युनिवर्सिटी लाइफ। फाइल की जगह एलीफैन्ट छाप चौसठ पेजी तुडी-मुडी कापी लिए, परम वैष्णव दिखने वाले, झेंपूनन्दन जो सीट्टी बचाने के बजाय नयन सुख-सेवी अधिक थे, ऐसे बछिये के ताउओं पर उसे बडा तरस आता था और शकुन्त की इस अजीब आदत पर उसकी कलीग्ज़ गुदगुदाते हुये यह कहने में न चूकती : 'कही अधिक तरस न खा बैठना मेरी बन्नो, ये मुये सब दो-दो नग बच्चो के बाप हैं।' फिर भी कितनी रिजर्व रहती थी प्रतिदिन, गांधी और विनोबा साहित्य पढती थी। गार्गी, मैत्रेयी, विदुला और झाँसी की रानी उसकी आदर्श थी, वर्चस्वशीला नारियाँ, काशी या विदेह के बीर सरीखी, महा ज्ञानी याज्ञवल्क्य की छाती को गूढ प्रश्नों के नुकीले वाणो से क्षत-विक्षत कर देने वाली तत्वदर्शिनी ऋचायें।

ऊपर से नीचे तक पुष्प करधनी का कसाव, एक संगीतमयी थिर-कन, एक चिर-परिचित फिर भी सर्वथा अनूठी कुँवारी लज़ीज़ थर-थराहट जैसे कोई परिणीता आज पहली बार अपने अछूते कौमार्यत्व की पखुरियाँ खोलकर सपनों के सिरताज के चरणों मे चढा रही हो।

तो क्या एक औरत अन्ततः औरत नहीं, लोरी नहीं, राखी नही, मात्र कामिनी है, रमणी है पर्यंकशायिनी : योनि मात्र केवल और माँ बनना जैसे उसकी अंतिम विवशता है।

कहते है कि शुरू-शुरू मे अल्ला मियाँ ने एक गुलाब, एक लिली, एक सुग्गा, एक कबूतर, एक साँप, दो सेब, एक बूँद शहद और मुट्ठी भर मिट्टी ली और उसकी ओर ललचाई हैरत भरी निगाहो से ताका—ये लो यह कौन झमक कर खड़ी हो गई : औरत, आदि मानवी।

तो क्या औरत आख़िरी बूँद तक लज्ज़त देने वाली स्पेन की

बरगण्डी है या इटली की कियान्ते, स्काटलैण्ड की ब्लैक डाग या शुद्ध स्वदेशी घरेलू उद्योग में उतारी गई 'हे कृष्ण गोबिन्द हरे मुरारे' मार्का ठर्रा। या फिर वह एक ऐसा स्याही-सोख है जिसमें रोमन छाप कैलेण्डर, डुप्लीकेट बहीखाते, फिल्मी लटके, छायावादी-आयावादी, मलीहाबादी-मुरादाबादी सब किसिम के तम्बुओं के गीत और ग़ज़ल, निगुर्णियाँ पद, मास्टर सरनाम दास एफ० ए० की नेक सलाह और तम्बूशाह के आज़मूदे नुस्खे सब के सब बखूबी सुखाये जा सकते है। फलाहारी लक्कड़ बाबा से लेकर बम्बइया बिरयानी और मटन चाप चाभने वाले शराबी-कबाबी माहताबी रुस्तम चन्दानी तक सब के लिए एक सा खिचाव, एक सा जायका चाहे वह सम्प्रज्ञात समाधि से निस्सृत 'काल भैरव' का स्वत: उत्थित उद्दीपन हो और चाहे स्काच की लहरों में बहता बहता सा, झाग छोड़ता नान वेजेटेरियन खौलता उबाल। गरमा-गरम ताजा खबर : ब्रिटेन मे वासना का भयकर विस्फोट, सुनहरे बालों वाली २१ वार्षीया सदाबहार माडल क्रिस्टीन कीलर का पर्दाफाश। कीलर : स्विमिंग पूल की मत्स्यगन्धा, उत्तेजनात्मक नग्न छवियों से बड़े-बड़े नेताओ, मन्त्रियो और रईसो पर डोरे डालने वाली, सीने, कमर और कूल्हो की नाप-जोख का तखमीना देने वाली, पाँच-पाँच शिलिंग मे बेंची जाने वाली डाइरेक्टरियो की मरकज, ब्रिटिश सरकार को हिला देने वाले प्रोफ्युमो काड की कलक, अन्तर्राष्ट्रीय इदर सभा की उर्वशी, लन्दन मे तहलका मचा देने वाली खूबसूरत बाजारू बला।

हाय रे, भोरम्भोर ही आज सप्तपदियों की शपथ ने चार-पाँच दिन बाद अपने उलझे केश सुलझाये थे और साँझ सीझते-सीझते गौरा पार्वती गुनाहों की गोरी बन गई। भीगी साड़ी, भिसे वक्षोज, फैला-फैला सीमन्ती सिन्दूर और बहका-बहका पातिव्रत पर चोट करता स्वस्थ किन्तु निठल्ला नाकारा रति व्यवसायी दलाल सा गुण्डा काजल।

किसी तरह डूबती-उतराती शकुन्त घर पहुँची। सब अपने अपने हिल्ले-रोजगार से बाहर गये हुये थे। महज द्वार पर का ताला ही उनके दुर्भाग्य सा कायम मुकाम था। खोला और जैसी की तैसी छिन्न-लता सी चारपाई पर बिछ गई। सामने टँगा पूनम का 'कपल-फोटोग्राफ' जैसे कह रहा था : 'मेरी सर्वस्व, क्यो मैंने तुम्हारी बाँह गही, जब मै तुम्हे गीतो सा दुलार नही पाता। मेरी लाचार रूह! तुम्हे गृहस्थी चलाने के लिए बाहर जाना पडता है, मै करूँ भी क्या? लाख सर पटकने पर भी तो ओ मेरी शकुन्तला! मै कही से कुछ जुटा नही पाता, लेकिन चन्दानी से बच के रहना मेरी गुडिया, अच्छा आदमी नही है। कही से भी कुछ गुजायश होती तो मै कभी नहीं भेजता उस साड के पास मेरी उजली बछिया! लेकिन मुझे तुम पर पूरा विश्वास हे अपने तिल-तिल चुकने वाले श्रम की शपथ, माथे पर चुहचुहाते स्वेद की सौगन्ध!'

खंडित विश्वास, बाजारू सिन्दूर, बेगमबेलिया के तन-मन पर उगते फफोलों के कैक्टस, नागफनी के झाड़ झंखाड़, नीद के तरल अन्धकार में बहता एक झोंका। हड़बडा कर जगी, देखा, धूल से अँटे घुँघराले बाल लिये पूनम सिरहाने बैठा गमगान, बहुत उदास एक खत पढ रहा है और आड मे अपना स्कर्ट बदलती रूबी बडबडा रही है कि किसी दिन लुटवा लोगे तुम लोग मुझे, बन्नो तो घोडे बेंचकर सो रही थी और दरवाजे फाटक ऐसे खुले थे।

रात के दस बज चुके थे, ट्राम-बसों की खडखडाहट मद्धिम पड चुकी थी। माँ जी नही रही शकुन, विजन का पत्र, विजन : चचेरा भाई। घर से भेजा हुआ देश से आये चचेरे भाई का पत्र जमीन पर पड़ा फडफडा रहा था और थोडी देर पहले ड्राइवर द्वारा पहुँचाई गई प्राईवेट ज्ञान-दान की दस-दस रुपये के दस करकराते नोटो वाली दक्षिणा उखडी मेज पर पड़ी शकुन के साथ गुमसुम, निष्प्राण और निर्वाक् थी।

●●●

सिरफिरी बकवास बनाम चितन का नवनीत

सारे सिलसिले जैसे के तैसे बा अदब, बा मुलाहिजा चलते रहे। रूबी काफी रात भीगे लडखडाती, हाँफती, अट-सट बकती आती रही। गीतकार पूनम अँधेरे मुँह के निकले साँझ झुके खाली तन, खाली मन, टूटे, दबे पाँव अपराधी जैसे दाखिल-दफ्तर होते रहे और कुछ दिन तक मन ही मन रूठी-सूठी सती सावित्री ठन्डे चूल्हे के सगीत को खदबदाने के लिए विवश चार दिन तक लौटाई जाती गाड़ी मे बैठकर 'चन्दानी विला' की ओर फिर आने जाने लगी। 'नखरे वाली' की शूटिंग सोलहो सिंगार किये पूरे उभार के साथ नारियल पर नारियल तुडवा रही थी। अब पूनम उन दो गीतो के जरिये 'नखरे वाली' फिल्म यूनिट की हस्तियो से अच्छी तरह वाकिफ़ हो चला था, उठने बैठने लगा था, गन्दे मज़ाको और ठुनकते ठहाको मे भी झेंपते-झेंपते शरीक होने लगा था। एक दिन इंटरवल मे जब यूनिट के छोटे-बड़े लोग पास की कैंटीन और अपनी-अपनी केबिनो मे थे, पूनम को अलग-थलग बुझा-बुझा सा बैठा देखकर मुन्शी मनसुख लाल विश्वकर्मा आये और उसे बगलिया कर घसीटते हुए अपनी केबिन मे ले गये। किश्तीनुमा खुतरी जिल्द वाले मुन्शी जी किश्तों मे अपनी जिंदगी जीते थे किश्तो में शौच जाना, किश्तों मे खाना-पीना, किश्तो में सोचना और कई किश्तो मे हिस्सेदार हँसी हँसते हुए यक ब यक सीरियस हो जाना। उन्होंने तीन-चार बार घंटी

बजाई, पुकारा, एक लाइट मैन अकड़ता-अकडता टेढी मरियल चाल चलता आया। उसे पाडुरग रेस्तरॉ मे भेजकर वहाँ से दो गर्म काफी, और दो पीस दोशे के मॅगवाये। खाने-पीने के बाद बडे प्यार इसरार से किंइनो मे टहलते-टहलते, पूनम के कन्धे पर हाथ रख अपने वार को पैनाते हुए टुकडो मे मुशी जी बोले. भइ देखो, 'नखरे वाली' के बाद मैंने 'रगारग' स्टूडियो मे रिलीज होने वाली 'फुदकती मैना' की पटकथा और सवाद के लिए हामी भर ली है लेकिन क्या बताऊँ यार, इधर स्साला मूड ही कुछ उखडा-उखडा रहता है। ऐसा करो, न हो तुम दो-चार कहानियाँ पढ-पुढकर एक कहानी का ताना-बाना बुन डालो, कच्चे ढग से टाँके जोड लो, फिर दोनो किसी दिन साथ-साथ बैठकर 'गैप्स' भर लेंगे। अपना सितारिया ही इसे डाइरेक्ट करेगा। यह ला रख लो, आपसी हिसाब-किताब है, कम बेशी आगे-पीछे समझ लेंगे। हॉ तो अगले हफ्ते लिखकर घर पर ला रहे हो न ? तुम्हे ज्यादा समझाना क्या, खुद समझदार हो, इक्सपेरीमेण्ट के चक्कर-वक्कर मे मत पड़ना बन्धू, वही चलती फिरती थीम, कुछ दीदा-दिलवरी, कुछ दादा-गिरी और फिर वही दीदा-दिलेरी, 'याहू' टाइप उछल-कूद, फिर हाँ, क्या है वह : सुर्ख आँचल को दबाकर जो निचोडा उसने, आग पानी मे लगाते हुए लमहात की रात, थोड़ी मान मनौवल फिर वही बुचियाते हुए घिघियाना : अभी न जाओ छोडकर कि दिल अभी भरा नही। फिर आखिर मे इधर-उधर से अटका-भटकाकर पोपले पंडत का गणाना त्वा गणपति हवामहे। और हाँ, तिकानियाँ इशक मत लडाना यार, स्साली पब्लक धीरे-धीरे समझदार की दुम बनती जा रही है। यार लोग पहले से ही रिजल्ट निकाल देते है। कुछ ऐसी टर्निग देना मितवा कि वहाँ तक स्साले सोच भी न सकें मसलन ट्रेजेडी की कॉमेडो या कामेडी का चलते-चलते कचूमर निकाल देना। अच्छा नमस्कारम्, कहते हुए मुन्शी मनसुख पूनम को वही छोड़ आये जहाँ से उसे बगलिया कर लिवा ले गये थे।

पूनम ने देखा, जेब मे ढाई सौ के नोट लहरा रहे हैं। सात दिन की घनघोर मेहनत और आदर्शों को ताख मे रखकर उसने मुन्शीजी के निर्देशानुसार 'फुदकती मैना' की पटकथा का ताना-बाना गूँथ लिया और उसमे मासल रग भर कर मुन्शीजी के माटुगा स्थित 'मदन सदन' पर पहुच गया। उनका विपुल पूर्विया परिवार ननिहाल गया हुआ था और वे निश्चित होकर संप्रति जनता-जनार्दन की सुरुचिपूर्ण सेवा में स्वयं को समर्पित किये हुये थे। पट बन्द न होकर उडके भर थे। हल्के से ठेलकर पूनम जी अपनाया जताते, बिना किसी प्रकार की सूचना दिये हुये साकार अवतरित हो गये। सजे सजाये कमरे की माजेक पर कीमती कालीन बिछा हुआ था और उसके ऊपर एक कोने में दूधिया गद्दा उफ़ना रहा था। गद्दे पर अस्त-व्यस्त पाँच छः फूल कढे बडे चित चोर गोल-मटोल तकिये पडे थे। दो तर-ऊपर रखे तकियो पर मुन्शोजी का गजा सिर टिका था एक तकिये को वे बुरी तरह भीचे गोद मे समेटे उठंग पडे थे। अगल-बगल लीपी-पुती चेहरे वाली दो नाग-कन्यायें कागज़ पर कुछ गोद रही थी। एक चुस्त कुर्ते शलवार मे थी और दूसरी काजीवरम् की साडी और दूधिया ब्लाउज मे। चेहरे कुछ जाने-पहचाने लगे। शायद 'नख़रे वाली' के सेट पर एकस्ट्रा लडकियो के बीच देखा था। मुन्शी जी शलवार वाली की अस्तित्व-शून्य कटि को अपनी जाम्बवानी भुजाओं मे समेटे कुहनी पर ठुड्डी टिकाये पैर के अँगूठे से बाईं जाँघ खुजलाते किसी तीसरी फिलम की कच्ची कहानी डिक्टेट कर रहे थे। बीच-बीच में जब मूड आफ हो जाता तो नया आइडिया कैच करने के लिए काजीवरम् की कसीली बाहो वाली मछलियाँ उछाल देते। लेकिन मूड आफ ही रहा, आइडिया आता भी कैसे ? स्थूल निर्माण और सूक्ष्म निर्माण दोनों को साथ-साथ चलाना चाहते थे— चित भी मेरी पट भी मेरी।

और उधर आप के हीरो बिना किसी इत्तिला-उम्मीद के, सब को चौंकाते, फर्शी सलाम की स्टाइल में तुडते-मुडते, झेंपते-सिमटते, 'मदन-

सदन' के साधना-कक्ष में अचानक आ धमके । मुन्शीजी को किश्तो में छीकें आईं, हडबडाकर उठ बैठे और फडकते नथुनों को मसलते 'फुदकती मैना' की स्क्रिप्ट लेते हुए बोले—'आव भइ आओ, जरा नजदीक आओ । कहो क्या रग ढग है ?'

(रंग ढंग तो तेरे है बेटे, दो दो को बगलियाये बैठा है और रग-ढग मुझसे पूछकर जले पर बरनोल लगा रहा है)—'जी ठीक है ।'

स्क्रिप्ट उलट-पलट कर देखी और फिर लापरवाही से एक बगल पटक कर बोले—'भइ, किसी दिन इतमीनान से आओ, यही खाना-वाना खाओ, अभी तो टुन्नू की अम्माँ अपने मायके गई है, ज्यादा से ज्यादा दो चार घण्टे लगेंगे सुधारने मे, क्यो ? अरे धूप-धूप आये हो, री बालिके ! जरा आपको ठंडा-ठडा 'रूह-अफ्जा' तो पिलाओ रेफ्रिज से निकालकर ।'

'येश् अंकल, मुझे भी बड़े जोरो की पीआस लगी है ।'

'पियास लगी है या पी-आस यानी-यानी ख्वाहिशे खसम ··हि हि हि हि······

देखा पोयट, ऐसी सूझ का गिन्नी लानी पडती है तब कही सवादों मे कैथिया कसाव आता है, आसान नही है चीमडो की जेब से अठन्नी निकाल लेना, गिन्नी देते है तब कही अठन्नी मिलती है दोस्त !' शलवार वाली बडे इतमीनान के साथ कटावदार अँखडियो से प्यासी-प्यासी पूनम को पी रही थी । मुन्शीजी की 'री बालिके' द्वारा पेश किया गया 'रूह अफजा' पी पाकर पूनम जी रुख्सत हुए । रूहानी इजाफा तो खाक हुआ, उल्टे शारीरिकली : नाहक लगी लगाई तबीयत उचट गई ।

'नखरे वाली' की शूटिंग अब करीब-करीब उतार पर थी । सेट पर डायरेक्टर विजय सितारिया से पूनम की रोजाना मुलाकात हो जाती थी । विजय को कई बार पूनम ने घर चलने के लिए आमंत्रित किया

था लेकिन व्यस्तता के कारण ऐसा संयोग ही नहीं जुटता था। हीले-हवाले चलते रहे। फिल्म की आज आखिरी किस्त फिलमाई जाने को थी। बहुत छोटे-छोटे दो सीन थे। सुबह-आठ बजे से चार बजे तक 'टेक' ले लिए गये। एक काम, एक जिम्मेदारी, एक झंझट, तीन महीने रात-दिन चलने वाला रगडा आज खत्म हुआ। बोझ हल्का हुआ। विजय सितारिया इसी हल्के-फुल्के मूड मे झूमता-इतराता घर गया। नहाया। आज वह अपने आप में एक अनूठी ताकत महसूस कर रहा था—किसे पटक दे, किसे ऊपर उछाल दे, किसे पटखनी खिला दे? जल्दी-जल्दी कपड़े पहने, पर्स टटोली और गाडी निकालकर खुली सडक पर दौडाने लगा। ट्रैफिक के धीमी चाल वाले कायदे-कानूनो पर उसे रह-रहकर तेज गुस्सा आ रहा था। जैसे-तैसे दादर आ गया। पूनम से इधर हफ्तो से भेंट नही हुई थी। कैसे होती? वह तो आजकल मुन्शी जी के लिए कच्चे टाँके जोड़ने मे लगा हुआ था। खैर। पूनम के मकान या कहिये एक अदद कमरे का पता बड़ा सीधा सा था, सो घर बडी आसानी से मिल गया। सितारिया ने गाड़ी रोक दी खट-खट सीढियाँ चढ गया। कभी-कभी रूबी और शकुन्त से विजय सितारिया, रवि जी और मुन्शी मनसुखलाल के बारे मे पूनम के द्वारा चर्चा हो जाया करती थी। रूप-आकृति से भले ही परिचय न हो लेकिन नाम से तो करीब-करीब सब परिचित थे। फिर परिचय न होते हुए भी ऐशो-इशरत की कनखियाँ मारती कैडलक किसी के परिचय की मुहताज नही। बदकिस्मती या खुशकिस्मती से पूनम जी नदारद थे और शकुन्तजी 'प्राइवेट ज्ञानदान' के अनुष्ठान मे गई हुई थी। घर मे महज रूबी थी। महीनो से, जाने-अनजाने घेरो मे कसमसाने वाली, शिथिल, एकरसता की जिंदगी जीने वाली, आरकेस्ट्रा की धुन पर डेलीकेट स्टेपिंग करने वाली और अजनबी-खनकती बाहो मे जुही की कलियो की लड़ियो सी झूल जाने वाली रूबी, डियर रू···बी। रोज-रोज वही जानी-पहचानी उबाने वाली धुनें, मासल गीत, वही घिसी-

पिटी बातें, वादे, इसरार, यान्त्रिक क्रिया। उसे चाहिये थी लोकगीत की एक अछूती कडी, पुरवाई की फुलझडी, अँजुरी भर मकई की दूधिया फसल जिसके लिए वह मुद्दत से तरस रही थी। इस समय फकत एक चढ्ढी से छलछलाती मर्मरी जांघो वाली रूबी का ऊपरी भाग चार अंगुल चौडी पट्टी से खुला-अनखुला ढका था और वह कही से थककर आई बडी सुकून की सी हालत में मोढे पर बैठी बडी बेसब्री से निंदासी अँगडाइयाँ तोडती शकुन्त का इन्तजार कर रही थी। दरवाजा अंदर से बन्द था। हल्की सी दस्तक सुनाई पडी। यह रोज की थपथपाहट शकुन्त की आदत बन चुकी थी। जैसी की तैसी दौडती रूबी ने दरवाजे खोल दिये और एक अजनबी को देखकर झटके स उल्टे पैरो हडबडाती भागी। कजली वन की इस मदमस्त चाल पर सितारिया मर मिटा। हतमूढ वहीं ठिठक गया। रूबी पर्दे की आड मे जाकर हथिनी पर पडी सलमे-सितारे जडी मखमली झूल की तरह एक उठंग स्कर्ट डाल कर झूमती बाहर निकल आई।

'वेलकल बास, आप शायद मुन्शी मनसुखलाल साहब...'

'नो, नो, विजय सितारिया।'

'ओ डाइरेक्टर साब, आइये आइये।'

'जी, पूनम यानी गाने लिखने वाले यही कही रहते हैं न, मैं ज़रा उन्ही की तलाश में था, महीनो से वादा टलता रहा।'

'जी हाँ यही रहते है, अभी लौटे नही, आप आइये न ऽ ऽ'

'अच्छा फिर कभी, कह दीजियेगा विजय आये थे।'

'पहली बार आप ऐसे नही जा सकते सर, अपन लोगन के पास आपकी खातिर तवज्जह करने के लिए है ही क्या ? फिर भी दिल है डाइरेक्टर साब, उछलता दिल।'

और आकर विजय के सामने वह मूँगिया चट्टान सी खडी हो गई। लाचारी हालत में विजय को बैठना ही पडा।

'तो आप मिसेज़ पूनम ?'

'जी नहीं', रीता हेवर्थ मार्का वक्षस्थल पर नीची निगाह किये रूबी शर्माते शर्माते बोली—'वह तो पढाने गई है, मैं उनकी मेजबान हूँ जी, मकान की तगी से फिलहाल मेरे यहाँ ही टिक गये है जी !'

'तो आप क्या करती है ?'

'जी, जी यूँ ही बस कुछ नहीं जी, कुछ दिलाइये न जी, छोटा-मोटा कोई रोल, आप तो कुछ भी कर सकते है जी !'

'अच्छा देखिये, मुझसे कल ठीक इसी वक्त जुहू पर मिलिये, आप के लिए कुछ कर सका तो मुझे इन्तिहा खुशी होगी। अच्छा बाय बाय।'

'नो नो, नोऽ बास, वन मिनिट प्लीज, माई डियर बास हैव ए कप आफ टी।'

'नहीं भाई, कोई तकल्लुफ नहीं, तुम्हारी कसम फिर कभी आयेंगे। इतमीनान से घटे दो घटे ठहरेंगे तब पीना पिलाना। अ...च्..छा' और रूबी के कधे झकझोर कर सितारिया चला गया। कजली बन की मदमस्त चाल के आगे कैडलक पिछड पिछड जाती थी।

जुहू की रगबिरंगी तितलियो के परो से पराग झाड़ती सेंटेड-सनी शाम। अगल-बगल, आगे-पीछे जोडे ही जोडे, एस० आर मिल से अभी ताजी ताजी आई कलफ लगी साड़ियो सी फरफराती, चिकनी-चुपडी उम्मी, चुम्मी, टिम्मी, पुष्पी। सर्फ से धोये टिनोपाली विज्ञापित कपड़ों जैसे लाइट मारते, नाज़ उठाते, बड़े फुर्तीले, बड़े आज्ञाकारी उनके डियर डियर। रूबी ने आज जिन्दगी मे पहली बार साडी पहनी थी। पोनीटेल वाली मुर्छली अलकें आज पहली बार रिंग पर बँधे जूड़े मे रूपायित होकर बेले की अधखिली कलियो मे गुथी थी। चिकन की सफेद साड़ी, जबलपुर के भेड़ाघाट वाले जल-प्रपात जैसा ढलका-ढलका उल्टे पल्लू का छोर, महीन डोरिया की लकीरो वाला झीना-झीना कुहनियों के नीचे तक खिचा ब्लाउज, साडी से झलकते रेशमी साये की फिसलन, हाथ मे खाली-खाली ट्रान्जिस्टरनुमा वेनिटीबैग और सस्ते

हवाई चप्पल गोया आज कतल की रात थी। स्कर्ट की जानी-पहचानी रूबी आज इस लजवन्ती वेशभूषा मे कुछ अधिक मासल, कुछ अधिक वासनामय, कुछ अधिक कुँवारी लग रही थी। 'नखरे वालो' को डाइरेक्ट करने वाला तो पहली नजर मे उसे पहचान तक न सका जब खुद नखरे वाली ही उसकी आँखो मे आँखे डालकर बडी नशीली मुस्कान से उसे 'डाइरेक्ट' करने लगी तभी उसे याद आया, ओ रूबी तुम्म, इक्सेलेण्ट मेरी मीनाकुमारी!

जुहू की भीडभाड से तग दोनो कुछ देर सब से अलग-अलग बिना एक दूसरे से बतियाते दूर आकाश मे उडते, नीडो को लौटते पक्षियो को देखते रहे फिर सितारिया रूबी को एक रेस्तराँ मे ले गया, बहुत हल्का सा 'मेनू' मगवाया और बेयरे को टिप देकर गाडी पर आ बैठा। धु धलका गहराने लगा था। गाडी फिसलती चली जा रही थी और रूबी के जूडे मे गु थे कुछ कुछ खिल आये बेला के फूलो. नशीली मद्धिम-मद्धिम आँच सितारिया के जेहन मे एक अजीब खुमारी, एक ठुनकती तन्द्रा पैदा कर रही थी। एक खूबसूरत से पार्क पर गाडी रोक दी। बड़ी फुरैरी हरी-हरी मखमली घास का गलीचा बिछा था। टुटरूँ टूँ दो तीन जोडे बैठे रोमास न लडाते हुए भी देखने वालो की नज़रो म रोमास लडाने का पुरलुत्फ अहसास पैदा कर रहे थे। सितारिया रूबी का हाथ अपने हाथ मे थामे ताज़ी घास के तिनके खुटकते हुए पसर गया और गुलमुहर के पीछे से ताक झाँक करने वाली चन्दरिमा को देखने लगा। फिर रूबी की रान पर अपने सिर को हल्का सा टिकाकर आहिस्ते आहिस्ते बोला :

'डियर रूबी! -तुमने कभी गदराई चाँदनी, चौदस की चाँदनी चक्खी है, कितनी लज़ीज़, कितनी ज़ायकेदार होती है निगोडी और हाँ बेले के फूल—मुरझाये बेले के फूल रूबी; मेरी ज़िन्दगी की सबसे बड़ी कमजोरी रहे है, कभी उनकी घायल तडपती महक तूने पी है, कितनी दिलकश, कितनी दर्दीली फिर भी कितनी दर्दमारी होती है

'अबे सुन बे गुलाब! तू मुझे फूटी आँखो नही भाता : गीले आटे की सी गन्ध, पता नही तेरी किस खूबसूरती पर रीझकर किसने तुझे फूलो का सरदार बना दिया है। जानेमन! गुलाब के फूलो की पकौडियाँ बन सकती है, आचार मुरब्बा तो बनाया हो जाता है। ये मरदुये सूँघने या बटन होल मे टाँकने के कत्तई काम नही आ सकते और लाहौल बला-कूवत; सफेद गुलाब तो जैसे किसी मय्यत पर चढाये जा रहे हो। हा, मुई छरहरी चमेली तो किसी ज़माने मे इतरा-इठलाकर मुझे खूब तडपाती रही है सिरचढी सहपाठिनी की तरह जो सवेदती कम झकझोरती ज्यादा है। और आह, वे गवई पगडंडी पर छितराये ढेर सारे आछी के फूल = अँजुरी भर गन्ध + मैके की याद। लेकिन बेले के फूल, सच कहूँ मुझे बहुत प्यारे लगते है तुम्हारे खुले झाकते महक रहे अंगो की भाँति, गन्ध से लहकते, लपटे उठाते, रोक लापरवाह इनको रोक, लो फिर महके, सब्र और सुकून को हौले-हौले उकसाते हुए।'

'रूबी! यह बेले की ढीठ खुशबू और तुम्हारी गिलहरी सी कुतरती निगाहे मेरी सारी पर्तों को कितनी आसानी से खोल रही है, एक-एक पाँखुरी सा विलगाता तुम्हारा यह मदिर स्पर्श। मै नही जानता कि वह क्या है जो तुमको बन्द करता और खोलता है। पहले पहल की बरखा-बहार का सा छनछनाता सगीत। ऋतुस्नाता धरती को सीचता सा, उर्वरा बनाता सा, सार्थकता देता सा। तटो के आँचल पर सफेद फेन के थक्के जमे जा रहे है, तुम्हारी साँसो मे रह-रहकर सदली झोको की महक आ रही है। प्रिये! आज तुम्हे मुद्रित नही महज चुम्बित करने को जी चाहता है। ओ आबेहयात सी छल्की-छल्की कटोरी की तरह पवित्र किस नदनवन के झरने से नहाकर महकती मेनका सी रातो रात मेरे लिए, सिर्फ मेरे लिए तू बहिश्त स उतरी है। यह जानते हुये भी कि अनगिनत सेजो मे तेरी सिसकियो की ऊष्मा की छाप अब भी उबल रही होगी फिर भो तू मुझे रोज-रोज उगने वाली उषा की तरह बेहद सुकुँवार लगती है, बिल्कुल अछूती, असूर्यम्पश्या, कुँवारी कुन्ती सी।

स्वच्छ शरीर की सतह पर मासल लहरो मे किलोलें करती हुई दो अग्निशिखायें कदली दल पर कैसे धीरे-धीरे उतर रही है ? ओ पाताल से फूटी हुई मधु निर्झरी ! तुम्हारे अधर पर ढरते अगूरो को, तुम्हारे अनावृत्त साँवले तन के सगीत को मै कितनी बार पी चुका हूँ, पी रहा हूँ जैसे आकाश धरती को विनत भाव से पीता है। और यदि कहे, तो तेरे लिए अब चुम्बनो का एक पारदर्शी झीना कवच बुन दूँ। तलुवो मे, त्रिवली मे, वक्ष के गहराव मे, कपोलो मे, नासिका मे और ओस-डूबी आकाश गगा मे। सर्वत्र चुम्बन ही चुम्बन, आर्द्रा की शीतल बौछार। सलोनी रात की सुहागिल सोगात।

ताज से लेकर भटियारखाने तक का खेला-खाया एग्लोइडियन माडल सितारिया की कवियाई गीताजलि को न समझ सका। एक हवाई चुम्बन उछालती हुई रूबी अपने नेकलेस से खेलते ठुनकते बोली : 'आपका ज्वाब नही बास, आने वाला फिल्म का डायलाग दुहरा रहा है क्या बास, अपन तो बोर हो गये यार आज, प्लीज बास वो देखो कितना प्यारा-प्यारा मूनलाइट लाइट मार रहा हैं, क्या कहता है बास, बताओ न ऽ ऽ ऽ।'

'तुम भी नही समझोगी जगल की मोरनी मेरे इस दर्द को, ये अगली फिल्म के डायलाग नही रूबी, मेरी जिन्दगी के मीर*की ग़ज़लें हैं' :—

दिल वह नगर नही कि फिर आबाद हो सके
पछताओगे सुनो हो यह बस्ती उजाड कर
फूल गुल शमसो क़मर सारे ही थे
पर हमे इनमे तुम्ही भाये बहुत
सैर की हमने हर कही प्यारे
फिर जो देखा तो कुछ नही प्यारे

'मेरे प्यारे प्यारे डाइरेक्टर साहब, अपनी अगली फिल्म मे किसका रोल दे रहे है मुझे ?'

'जिसका तुम चाहोगी मेरी दोस्त ! पर आज ये सब मत पूछो, मुझे जी भर बरस लेने दो। एक जमाने से मै बोझ ढोता ढोता थककर चूर-चूर हो गया हूँ। रूबी ! जाने क्यो लगता है कि तुम्ही यह गठरी उतारोगी। सडे गले सस्कारो की पीढी दर पीढी, परत पर परत जमी चिकटी अन्ध रूढियो की। रोमाटिक प्रम जिदगी की बेइन्तिहा खुशी का शीतल झरना है इस मानती हो न। मैं जब रग, गन्ध, ओस और फूल पखुरियो की उजास पीने वाल के पल्ले टिकुली, मिस्सी, सेन्दुर, भारी भरकम गहनो और चटकीले फूहड़ रंगों वाली साड़ियों की फरमायश पर फरमायश करने वाली खूसट भैसों को जुगाली करते, पगुराते देखता हूँ और दूसरी तरफ शैले और कीट्स की चहेतियाँ किसी लखपती के लौंडे या एक-एक नये पैसे का हिसाब-किताब जोड़ने वाले किसी बकलोल कजूस के गले मढ़ दी जाती है तो चाहे वह बनिये का बालक पोर-पोर के लिए जड़ाऊ गहने गढ़वाये, चाहे महज एक नये पैसे की नाक़िस भूल पर रुई सा धुनकर वह चुग़द चिड़ा कंजूस, खाली पेट उसे सारी-सारी रात निचोड़े तब उनके लिए सारी पढ़ाई-लिखाई और ख़्वाबों में पलीता लगाकर पूरी फौज के लिए पतीली-पतीली भर भात पसाना और बची-खुची जूठन से अपने पेट की गड़ही पाट लेना ही शेष रह जाता है। सारी रंगीनियाँ चूल्हे चक्की, हल्दी-प्याज और बेसन की पकौड़ियों में पेबन्द लगाती हुई बदरंग हो जाती है। ऐस बेवकूफी भरे उलट फेर को, छकड़े के साथ रेस कोस की घोडी और चहकती चतुर मैना के साथ सीत्ताराम रटने वाले बगडुम पोपट को देखकर मुझे मिचलाई आने लगती है रूबी ! गुड्डे-गुड्डियों का ब्याह, अनमेल ब्याह छिः, बुजुर्गों की शानो शोहरत का नक्कारा, अपनी बीती तो गाये चुकती नही, जग बीती के पचड़े मे कौन पड़े ! ख़ुद बजती बीन सुनकर पगुराने वाली, लीबर बहाती भैंस पाल रखी है मैंने इसी का तो गिला है और

महज मैं ही नही, पचास-साठ फीसदी नई पीढी की आकाशी प्रतिभा इन भैंसो के चहले मै फँसकर चूल्हे-चक्की मे झुलस जाती है।

कही पढा था कि हमारे दानिशमन्द दादे-परदादे हमारी दादियो से यह उम्मीद रखते थे कि वे महज पेट भरने के लिए ही खाये, चटखारें ले लेकर खाना, जीभ की खुजली मिटाने के लिए खाना एक सरीहन गुनाह था। यही नही, ये बडे एडवान्स्ड पश्चिम वाले भी अपनी औरतो को—खासकर नई नवेलियो की चॉदनी रात मे खुले मे नही सोने देते थे। उन्हें डर था कि कही मिस्टर 'मून' अपनी किरणो के ज़रिये उन्हें खराब न कर दें। ऐसे दिमागी दिवालियेपन की हालत मे उस ज़माने मे समान स्तर पर यानी एक सी हमवार ज़मीन पर सेक्स का लुत्फ उठाने की बात सोचना भी गुनाह था। चार-चार बच्चो की माये हो जाती थी लेकिन बच्चो के बाप की सूरत से महरूम, वे गरीब बिना इच्छा के जितना सेक्स का भार अँधेरे या कोने-खुतरे सयुक्त-परिवार में गूँगी बनी सहन करती थी उसकी मात्रा यानी वज़न वेश्यावृत्ति की अपेक्षा कही अधिक था। क्या लाख टके की बात कही है किसी कविराज महराज ने :

बडभागिनी पी के सुहाग भरी कबौ आँगनहूँ लौ न आवती है।

वाह री मेरी छछूँदरी! सच रूबी, घूँघट की आड़ मे जितने शिकार हुये है उतने बिजली गिराती चलने वाली नागन चाल मे नही। अभी तीन-चार महीने पहले एक वणिक्पुत्र की बहू गगा नहाने के बहाने मुँह-अँधेरे उठकर कही भाग गई। ऐसी लाल परी की तरह बोतल मे बन्द करके रखता था लाला कि कही दुनिया की झझक न लग जाय और वह उबलती लाल परी लाल की नज़र बचाकर ट्टाट की सूराखो से जवान गाहको से नैना लडाया करती थी। सुश्री लक्ष्मी जी की सदा सहाय से खूब बिक्री होती थी लाला की, अब बैठके निम्बू नून चाट बेटा!

सचमुच आदमी का जनम पाकर इस शीतल झरने के पानी के

बिना बँधे तालाब के सडे जल से प्यास बुझाना कितनी बड़ी लाचारी है। इस प्रकार के लजीज कतरो से महरूम रहना कितनी बडी बदकिस्मती है। मेरे ख्याल से विवाह रोमांटिक प्रेम का ही परिणाम होना चाहिये क्योकि यह कही हार्दिक, स्नेहपूर्ण और यथार्थवादी होता है। यह महज दकियानूसी खामखयाली है कि स्त्री से हार्दिक प्रेम और उसका आदर करने वाला पुरुष उसके साथ सोने का विचार नही कर सकता और इसीलिए उसका प्रेम काव्यमय रूप धारण कर सिर्फ बाँझ बन कर रह जाता है। एक जमाने से औरत और मर्द के बीच जिन्सी-मसाइल का लेकर एक लम्बी-चौडो खाई खुदती चली आई है। आप बीस-पचीस बरस की लडकी से तो बाकायदा उम्मीद रखते है कि वह अपने बवाँरेपन की कोरी अछूती सौगात आप को सौपने तक सील-बन्द रखे और खुद तब तक बज़रिये बिजली इलाज करवान के लायक बन चुके होते है। यदि आप खुद को शादी से पहले इधर-उधर के मेडो की हरी-हरी घास पर मुह मारने और चरने-चोथने के खुदमुख्तार मानते है तो फिर औरतो को तब तक उस लज़ीज ज़ायके से महरूम रखना कहा की इन्सानियत है लेकिन हुज़ूर आप इन्सान है कहाँ ?

और फिर सोचने-विचारने के पैमाने भी तो बदल रहे है अब, एक ज़माने मे औरतो के खुले टखने मर्दों के दिमाग मे उबाल पैदा करने के लिए काफी थे लेकिन अब, अब तो चर्खंघिन्नी भेलम के घूमते घाँघरे की सिरचढी अडरबियरी झलकियाँ भी भाई लोगो पर कुछ जादू टोना नही कर पाती। सुन रही हो रूबी, महज एक इसी सीन को देखने के लिये एक सिरफिरे सरदार जी साढे बारह बजे दिन से साढे बारह बजे रात तक टिकटें खरीदते, गडेरियाँ चूसते एक आसन पर बैठे रहे कि 'भैंण...' कदी ते उताँ उठेदी (कभी तो ऊपर उठायेगी) और बेचारी सरदारनी मुये सरदार को मोटी-मोटी गालियाँ देती इन्तज़ार करती रही। रीता मशीन पर शलवार सिलती-उधेड़ती कसमसाती-कोसती रही :

दीवा जले सारी रात मेर्या जालमा, दीवा जले सारी रात।
आवेंगा त पुच्छ लवागी मेर्या जालमा, कित्थे गुजारी सारी रात।।

ख़ैर, यह तो सिर्फ कपडे पहनने के फैशन की बात हुई, अगर नंगे रहने का फैशन चल पडे तो वह नंगापन भी हम मे उबाल नही ला सकेगा और तब उबाल पैदा करने की लाचारी मे औरतो को झख मारकर कपडे पहनने पडेगे। देखा नही अमेरिकन तस्वीरो मे औरतो का एक नया फैशन, बिल्कुल तंग चुस्त लिबास, गुल बदन के साथ चिपटा रहने वाला, उसी रंग का, मानो चमडे का एक और परत हो जिससे पता भी न चले कि तीरन्दाज़ परदे मे है या खुल्ला खुल्ला जल्वा दिखा रहा है और यही वजह है कि उबाल मे आकर वे लोग डेटिंग करते हुय रति-विलास को महज़ खून की खदबदाहट मिटाना मानते है। इस मासल संगीत के सैलाब मे, उत्तेजित क्षणो का सा स्वाद पाने के लिए बाहे गुदवाते-गुदवाते औरतें चिथडी हो जाती है। लेकिन जिस रोमांटिक प्रेम की मै बात कर रहा हूँ यह महज ख़ून की झुरझुरी नही रूबी, इसका ताल्लुक़ात जिन्दगी की अज़ीम क़ीमतों से है जिसके एक क़दम आगे पहुँचने पर सब्र और संयम की सीमा शुरू हो जाती है। ठीक है खाने-पीने की तरह सेक्स भी तन-मन की एक क़ुदरती भूख है यदि इस पर सेंसर बैठा दिया जाय तो बाँधकर रखे जाने वाले सोने के माफिक यह और भी उभरती है। घर मे रखे मीठे बेरो को फेककर झडबेरी के खट-मिट्ठे कसैले बेरो को तोड-तोड कर खाने और काँटे चुभवाने मे कुछ दूसरी ही लज्जत हासिल होती है। फिर क़ुदरत की इस सीधी-सादी भूख को झुठलाने की कोशिश करना सबसे बड़ी क़ुदरती गद्दारी है। रोमन कैथालिको मे एक ज़माने मे यह चलन थी कि आजन्म ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर ईसा की दुल्हनें गिरजाघरो को आत्म-समर्पण कर देती थी। इनमें संन्यासी और संन्यासिनियाँ एक ही मठ में अलग-अलग रहती थी। दोनो के बीच एक मोटी दीवार रहती थी। सात सौ साधु और

धर्म है, न्याय के पत्थरों से जेल की दीवारें बनी और धर्म के पत्थरों से वेश्यालय।' और हाँ 'नर्क' के रास्ते पर नेक इरादों के ही पत्थर जड़े रहते हैं।' बहुत अधिक धार्मिक भक्ति डूबी हुई कामुक वासना का ही परिणाम होती है।' पब्लिकली फल-फूल सूंघकर नुमायशी जिन्दगी जीने वाले संयमवादी (?) के दिमाग़ में रात-दिन स्वादिष्ट व्यंजनों का 'मेनू' घूमता रहता है जबकि एक औसत दर्जे का व्यक्ति खा पीकर रोजमर्रा के अन्य कामों में लग जाता है और अगले भोजन के समय तक खाने-पीने की चिन्ता ही नही करता। मैंने अपने विद्यार्थी जीवन में हीन-ग्रन्थि के शिकार उन लड़कों की बनस्बित जो लड़कियों से कतराते, झेंपते और ख़यालों में ख़ुराफात करते रहे है, उनको, जो घुलने-मिलने वाले और सतही तौर से देखने में बड़े बदचलन दिखाई देते रहे हैं, कही अधिक स्वस्थ, साहसी, पवित्र और बेहतरीन ज़िन्दगी जीने वाला पाया है। खोखली मर्यादा या शिष्टता-निर्वाह के लिए बुजुर्गों के द्वारा सेक्स को हौवा बनाकर रखने का मतलब है: संतति के लिए ता जिन्दगी मानसिक रूप से आरोपित नपुंसकता। और फिर होता यह है कि जिन अराजकतापूर्ण मनोवेगों का निकास सेक्स में नही हो पाया होता वे दूसरी शक्ल अख्तियार करते हैं। आये दिन अख़बारों की मोटी-मोटी सुर्खियो में डाकेजनी, चोरी, छिनाली, क़त्ले आम और 'रेप' की खबरें पढकर यही बड़े-बूढ़े भलेमानुस अपने अच्छे दिनों की याद करते हुये दिन दहाड़े की इस बेहया आजादी पर हजारों लानतें-मलामतें भेजते हैं। सीधी सादी ज़िन्दगी के बीच अनायास उग आने वाले युगल प्रेमियों के हार्दिक प्रणय को स्वीकारने में लैला मजनूं और शीरी फरहाद के आशिक ये लम्बी नाक वाले बेवजह बमकने लगते हैं और जब प्रेम के तीव्र ज्वार में समर्पित दोनों प्रणयी जगत् की चहार दीवारी को तोड़कर अनन्त में लीन हो जाते हैं तो यही भले-मानुस छाती कूट-कूट कर रोते हैं। आये दिन अख़बारों की तमाम सुर्खियाँ ऐसे ही नामाकूल बुजुर्गों की नासमझी से सिसकती रहती हैं।

कितना अच्छा हो कि इन सब यौन अनर्गलताओं को रोकने के लिए विवेकशील साहचर्य विवाह की वैध नींव डाली जाय, स्वस्थ परम्परा क़ायम की जाय। जहाँ तरुण युवक-युवतियाँ एक दूसरे से खुलकर मिल सकें, एक दूसरे के मनोविज्ञान की मिठास से परिचित हो सकें और फिर सोच-विचार कर स्थायी सम्बन्धों में बँधकर एक स्वस्थ-सृजनशील पीढी का निर्माण कर सकें।

डियर, ये मुखौटेबाज कहने से चूकेंगे नहीं कि ब्याह से पहले खुले आम मिलने जुलने की छूट देने से व्याभिचार बढ़ेगा, नाजायज औलादें पैदा होंगी—तो दादा मेरे निखालिस की अपेक्षा वर्णसंकरी बीज से जन्मी सन्तानो से दुनियाँ को कही अधिक सजाया सँवारा है, रोशनी दी है और बडी बारीकी से चिन्तन को कातते हुये उन बड़ी-बड़ी इलहामी किताबों की रचना की है जिनके बारे में यह दावा किया जाता है कि दुनिया में जितना जो कुछ बेहतरीन है, नायाब है, वह सब यहीं है इसके अलावा कही कुछ नही। सुनती हो रूबी, उधर विलायत में तो नाकारा लोगों को बाँझ बना देना व्यावहारिक राजनीति के क्षेत्र में आ चुका है, जल्दी ही उस पर अमल होने वाला है। वैज्ञानिक ढंग से कृत्रिम गर्भाधान द्वारा सभी पालतू चौपायों की नस्लें सुधार ली गई हैं फिर खुद को ये दोपाये कहे जाने वाले हज़रते इंसान क्यों महरूम रखे हुए हैं। अगर अब भी अक्ल नही आती तो घटिया नस्लों की यह बासलेटी पैदावार इस 'कोल्ड वार' के ज़माने मे एक दिन सैनिक शक्ति की दृष्टि से आपको और ननिहाल में रखी आप की जंग लगी तलवार को ले डूबेगी।

तय है कि क़ुदरती बहाव में किसी प्रकार की रुकावट आने से ही निथरे पानी मे गन्दगी और सडाँध पैदा होती है, क़ुदरती तरीके से दिली सुकून न मिलने पर वह आदमी रात-दिन जिस्मानी मसाइल के ताने-बाने बुनता हुआ अपना दिमाग़ सड़ाता रहता है। इनको निकलने का एक अच्छा खासा चौड़ा रास्ता देकर ही जिंदगी को अजीम-उश्शान

और उस्तवार जनाया जा सकता है। कला और सेक्स का भी बड़ा नज़दीकी रिश्ता है रूबी; इसके लिए एक ख़ुशगवार फिज़ा निहा-यत ज़रूरी है। जब एक फ़नकार को किसी मजबूरी से पगुराती भैंस के खूँटे से सारी ज़िन्दगी बँधा रहना पड़ जाता है तब वह उस आबेहयात से, उस रूहानी ख़ुराक से हमेशा हमेशा के लिए महरूम हो जाता है। और इसे भी अच्छी तरह समझ लो मेरी जुस्तजू! कि एक आर्टिस्ट को जिस 'सेक्सुवल फ्रीडम' की ज़रूरत होती है वह है मुहब्बत करने की भरपूर आज़ादी, न कि अपने पाक ख्यालों की तस्वीर से बाजारू इश्क लड़ाकर उसे 'लोडेड' कर देने वाला घिनौना छिछोरापन। और ऐसी रूहानी भूख मिटाने वाले प्रेम करने की भरपूर आज़ादी हाथीदाँत की मीनारों का दावेदार, मजारों पर सदाबहारी प्लासटिक के फूल चढ़ाने वाला तुम्हारा समाज कब देगा रूबी, कब देगा?

कहकर सितारिया ने जैसे ही उस आबेहयात के जाम को होठों से लगाकर अपनी तावील तिश्नगी बुझाने के लिए बाहें फैलाईं तो पाया वहाँ पर एक 'वैक्यूम'। अमलतास के पीले पत्ते एक एक कर झड रहे थे। रूबी पैर पटकती वाही-तवाही बकती कभी की विजय सितारिया को छोड़कर जा चुकी थी। ऐसे सिरफिरो की बेहूदी बकवास और रूहानी ख़ुराक से वह अच्छी तरह से वाक़िफ़ थी जो बड़ी-बड़ी सब्ज़-वादियो मे घुमा टहलाकर पास पल्ले की भी लेई पूँजी छीनकर बैरंग चिट्ठी की तरह बिन पढे वापस लौटा देते हैं।

●●●

घुटन महज घुटन

कच्ची धूप की टॉफियाँ चूसते-चुभलाते 'भूदान' करते पूनम जी पाँच छः दिन बाद इतमीनान से मुंशी जी के 'मदन-सदन' की ओर चल पड़े। सोच रहे थे कि चलो दोपहर का खाना वहीं खा लेंगे। यार, वह कटावदार अँखड़ियों वाली शलवार थी बड़ी जोरदार, स्साला मुंशी भी क्या तकदीर लेके धरा-धाम पर अवतरित हुआ है। स्क्रिप्ट स्वीकार कर ले तो ढाई तीन सौ और माँगूं। बड़ी किल्लत है। शकुन्तला भी अब उडने लगी है, बम्बइया हवा लग गई मालूम होती है। पहले तो बोल नही फूटते थे अब यह ला, वह ला—आये दिन महनामथ मचाये रखती है, रोज-रोज की दाँता किटकिट, कहाँ से बैठे बिठाये बला मोल ले ली मैंने ? बेटा, तुम्हीं तो 'रूपशिखा' के यशस्वी सम्पादक बने अन-छपियों को छापने का दायित्व सम्हाले साहित्य को भी धन्धेबाजी से जोत दिया था। तो क्या बुरा किया था मैंने ? साहित्य मे भी तो अड्डेबाजी, अखाडेबाजी, गुटबाजी, मस्केबाजी, चालबाजी, और न जाने कितनी-कितनी बाजियाँ चलती हैं। ब्राह्मण और ब्राह्मणेतर वर्ग, चाहो तो समूचे इतिहास को मथकर आँकडे निकाल लो। तुम्हे क्या ? लेकिन इसमे क्यो खामखाह सर घुसाये पडे हैं। अब अँजुरी भर भर पियो न गोल सुडौल गदकारी कलाइयो की अगुरु धूप।'

अतीत के चिन्तन का तार टूटा तो सामने 'मदन-सदन' खडा गुस्सा

दिला रहा था। अरे, बड़ी जल्दी आ गया। गेट खोलकर कुलंकते-हुमसते अंदर घुसे, देखा, दरवाजे पर डेढसेरा अलीगढिया ताला झूल रहा है और 'आउट' की तख़्ती लगी हुई है। पूनम जी वही सर पकड़ कर बेंच पर बैठ गये : माड्डाला साले मुंशी के बच्चे ने। थोड़ी देर सुस्ता कर लान पर लगे नल से गरम-गरम 'रूह अफ्जा' पिया और मरियल चाल से चल पड़े। किसी तरह मरते-भीखते घर पहुँचे, शकुन्त नही थी, गीला-गीला पेटीकोट डोरी पर पड़ा बता रहा था कि अभी अभी गुस्ल करके कही गई है। कोने पर पड़े स्टोव पर मकड़ी के जाले बुने हुये थे। रूबी गाढा लिपस्टिक लगाये, उबा देने वाले मेक अप के साथ पर्स झुलाती धंधे पर रवाना होने होने को थी। पूनम जी बौखलाये से पहुँचे और रूबी पर उबल पड़े : 'कहाँ गई......वाली; तुमने रोका नही, यह रोज-रोज का थुक्का-फतिहत मुझे बर्दाश्त नही।'

रूबी पर्स नचाते हुए बोली : 'च च च च, नही होती तो मैं क्या करू ? बांध के रक्खो न अपनी गुड़िया को, मुझे क्यों तेहा-तरब्बी दिखा रहे हो ? अय मिस्टर सुन लो, अगले महीने तक कहीं अपना बन्दोबस्त कर लो।' दोपहर बीती, शाम बीती। रात आ गई लेकिन दिनभर का भूखा-प्यासा गीतकार सिग्रेट के खाली पैकेट सा खाली पेट पड़ा रहा और उधर हैंगिंग गार्डन की सूनी बेंचों पर चन्दानी का जाम सजता रहा। सिम्की का इम्तहान कभी का ख़तम हो चुका था लेकिन गाहे-बगाहे शकुन्त का वहाँ जाना जारी रहा। ख़ुदा को यही मंजूर था। चन्दानी के इसरार पर पहले तो शकुन्त झिझकते-झिझकते साथ देने के लिए 'सिप' कर लिया करती थी लेकिन अब बाक़ायदा जमकर पीने लग गई थी और पी-पाकर जब वह अमेरिकन स्टाइल में होठों को भीच-कर 'येश्' कहती उस वक्त चन्दानी के ऊपर हल्की बियर भी जर्मनी की राइनहासन के मुकाबले में कही ज्यादा नशा ला देती। रुस्तम चन्दानी को राइन के नशे में डुबोकर रात दस बजे जब हिचकियाँ लेती, बात बेबात पर कामोद्दीपक खिलखिलाहटों की कुल्हड़ियाँ फोडती शकुन्त घर

लौटी, उस वक्त उसके बाँये हाथ की अनामिका मे हीरे की एक बड़ी अँगूठी जगर-मगर करती हुई पूनम जी के पुरुषत्व का इंटरव्यु ले रही थी।

गीतकार सृजन के पीड़ित क्षणो जैसे मूड मे दोपहर से वैसे ही भरे बैठे थे कि शकुन्त के बहकते आते देखकर उनका गुस्सा और भी मौलिक माध्यम से भड़क उठा। उन्होने उसका 'पोनीटेल वाला' मुछंल पकड़कर कस कसकर चार चाँटे लगाये और कुरते को खीचकर दो टुकड़े कर दिये। इज़ारबन्द के कसाव से झाँकती हल्की ऊँचाई और वक्ष का भरा-भरा फैलाव देखकर 'फुदकती मैना' के सृष्टा को लगा कि बीच चौराहे पर उसे नंगा करके पिचपिचे टमाटरो, सड़े अडे के खोलो और नुकीले ढेलो से मार-मारकर लहू लुहान कर दिया गया है और फूहड़ गालियाँ बकते आवारा लड़को की टोली उसका पीछा कर रही है। चन्दानी द्वारा अल्पायित चुम्बन के हवाई फूल चाँटो की झनझनाती आँच मे झुलस गये और बियर का हल्का नशा जयहिन्द सायकिल के हिरन की तरह चौकड़ियाँ भरता फुर्र हो गया। महज चार चाँटों के रसीदी टिकट चिपकाकर गीतकार निढाल हो गये और खुद अपनी इस हैवानियत पर लानत भेजते हुए फफक-फफककर रोने लगे। भारतीय नारी बिना एक शब्द बोले, चीखे चिल्लाये, गठरी की तरह गुड़ी-मुड़ी ज़मीन पर लुढ़क गई। उसे उस वक्त मायके की याद आ रही थी। साँसों में घर के पिछवाड़े के आछी के फूल बेसाख्ता महक रहे थे। किसी ने किसी को नही मनाया। बाहर के दरवाजे दोनो की आँखो में जागती बहानेबाज नीद की तरह खुले रहे। बारह के आस-पास रूबी आई और दोनो का 'कोप एंगिल' से नज़रों का 'किलोजप' देती हुई टकराकर निकल गई और सारा माजरा समझकर भी चुप लगा गई। रूबी की इस तटस्थता ने जैसे दोनों के रिसते जख्मो में एक चुटकी फ्रूटसाल्ट डाल दिया। रात टिक टिक की न चुकने वाली आवृत्तियों मे बहती रही, बिछलती रही।

शकुन्त सुबह सुबह उठी और समझौते का रास्ता अख्तियार करके रात की लानत-मलामत भूल कर स्टोव जलाने लगी। स्टोव की क्षुधा-वर्द्धित आवाज़ से चौंककर पूनम जी सुप्तावस्था से जागृतावस्था मे आ गये। शकुन्त ने झटपट 'बेड टी' बनाई और दो प्याले तैयार कर पति-देव और रूबी के सिरहाने रख आई। अस्तव्यस्त पडी रूबी अभी तक खुर्राटे भर रही थी। चाय को सेतु बनाकर दम्पति मे जैसे रस्मी समझौता हो गया। चलो जो कुछ हुआ सो हुआ, अब उसे भूलने मे ही भलाई है। पूरन ने भी अपने आप को मना लिया : अगर मर्द जाँगर खपाकर मिट्टी गारा ही ढोकर सुबे-शाम औरतिया को दो टिक्कड दे सके, मोटा-झोटा पहना सके तो यह नौबत न आये।' लेकिन चित-कबरी चाँदनियो में चुरने वाले गीतकार गारा-माटी ढोने के लिए कुव्वत कहाँ से लायें ? हड्डिया चिटखा देने वाले लू के तमाचे कैसे बर्दाश्त करें ? सो फिर अटक-भटककर मुन्शी जी से मिलने माटुंगा स्थित 'मदन-सदन' की ओर चल पड़े। हालत जस की तस थी।

सूखे पत्ते और लावारिस घूमने वाली बकरियों की लेडियाँ अलबत्ते बिखरी पड़ी थी जो पिछली बार नही थी। मुंशी के सात पुश्तों को अपनी ठेठ गवईं बोल-चाल की भाषा में सतरंगी माला पिन्हाकर गीतकार घर न लौटकर स्टूडियो की ओर मुड पड़े। शायद सितारिया से कुछ सुराग़ मिले। सौभाग्य से डाइरेक्टर सितारिया अपने केबिन मे बैठे-बैठे फोन पर चम्पा लाल की हरकतो पर लाल पीले यानी घुल-मिलकर नारंगी रंग के हो रहे थे। सेट सूना पडा था। बौखलाये हुए अपने आप बोले : 'हुँ मुँशीवा अपन मेहरारू के लियावे बरे देवरिया गइल हौ। लौटल नाही।' आये तो शूटिंग शुरू हो, वैसे पार्ट सबको बाँट दिये गये है, भाई इस बार मुन्शी ने डायलाग लिखने मे कलम तोड़ दी है, पूरे दस हजार लिये भी तो हैं गिन गिन कर सेठ से। पूनम के कान में जैसे किसी ने गरम-गरम पिघला राँगा उडेल दिया हो, फिर···की चोट कहो भी किस से जाय, सुन अठिलैहैं लोग सब। कौन

सुनेगा मेरा गिला और सुनकर कौन विश्वास करेगा? रूह-अफ्ज़ा, रेशमी शलवार या काजीबरम् की साडी या ढाई सौ रुपल्लियो की 'तू तू' करके फेंकी गई हड्डी चिचोडी पेशगी।

पूनम के दिमाग की नसें यकायक झनझना उठी। बैठा हुआ सितारिया, सामने की प्लाइउड की मेज़, मेज़ पर रखी 'फुदकती मैना' की टाइप्ड स्क्रिप्ट और पूरा केबिन जैसे उसे हिलता-उखडता, पछाडें खाता दिखाई पडा लेकिन यह महज उसके दिमाग का फितूर था। सारी चीजें जैसी की तैसी थी, बदस्तूर, ख़ातिरजमा, ज्यो की त्यों। एक वही था विस्थापित, यायावर, हवा मे तैरते बैलून सा। बिना किसी शिष्टाचार का निर्वाह किये पूनम होठ चबाता सडक पर आ गया। घर भी जाकर क्या करेगा? 'कौन सी जागीर बँधी है मेरे नाम। क्यो न चलती ट्राम या बस के आगे अपने आपको झोक दूँ, क्षण भर मे सब खेल खतम, दुनिया भर के खटराग से छुट्टी मिल जाय। है ही कौन अपना सगा, एक बहन बची थी वह भी किस औघट घाट लगी (लीपत पोतत मइया मर गइ, बाप तला के तीर। बहिनी का लइगे नाग देउता भइया माँगै भीख ॥) और शकुन्तला! अरे मारो गोली, ससुरी बहतुई, नही-नही मेरे सपनो की तस्वीर, मेरे जीवन संगीत की झंकार!'

मानसिक झंझावात के वात्याचक्रो को मथते, शब्द पर शब्द, विचार पर परस्पर विरोधी विचार उफनते चले आ रहे थे। उसे पता नही था कि वह कहाँ किधर चला जा रहा है कि अचानक खडर-खडर करती हुई एक ट्राम बडे जोर के धक्के के साथ लडखडाकर रुक गई और उसका मुस्तडा कडक्टर : स्साला कहाँ कहाँ का वनमानूस म्हारी आक्खा मुम्बई माँ आकर मरला : कहते हुए उसे पटरी से साइड के फुटपाथ पर ढकेल दिया। अब चेतना लौटी कि कब कहाँ से वह सुरक्षित फुटपाथ छोड़कर ट्राम की पटरियों के बीच आ गया था। वह फिर फुटपाथ पर घिसटने लगा, पिंडलियो को हल्की खरोच लिये, कि पीछे से किसी ने उसके

कन्धे पर एक हल्की सी धौल जमाई : 'पैचाना नईं परदेशी भाय, अपन कूं।'

'अरे झेलम तुम' चिकने चिकने गालो वाला कभी का कमसिन 'चैप' सामने दाढ़ी मूंछ और मुहासो की कीलो से भरा घिनौना चेहरा लिए खड़ा मुस्करा रहा था।

'ये क्या हो गया तुम्हे झेलम ? तुम्हारे चेहरे पर !'

'अरे हट्ट यार, ये तो जवानी की निशानी है भाय, अपन बी अब मरद हो गिया है मरद—' बाहो की मछलियाँ तड़काते झेलम बोला।

(अपन को तो कभी पता नही चला कि ससुरी जवानी कब आई और कब चली गई) बोला : 'और तुम्हारे दोस्त कहाँ है सब ?'

'अरे ना पूछ भाय, अपन की तो स्साली आक्खी फिल्म पाल्टी ही गारद हो गई। सानी बम्बइया पुलाव खाके खल्लास हो गिया। ताला, चिम्मी ससुराल पौच गिया, दारू का धन्धा शुरू किया था न। और मेवानन्द 'सप्लाई' का बिजनेस करता फारस रोड कमाठीपुरा में।'

'और शहीदा, सीनाकुमारी।'

'अरे वो तो हराम की कमाई से खूब मौज मारता। सुबू-सुबू उठता, शहीदा नकली आँखी लगा के अन्धा बनता, सीना अपन टाँगी पर मोम रगड-रगड के घाव बनाता, सडी-गली पट्टी चिपकाता, लँगडा-लँगडाकर शहीदा को बाजू पकड़ाये चलता, ईरानी होटल पर फस्ट किलास चाय और चार-चार टिकिया मक्खन-टोस्ट खाता। दिन भर मरभुक्खे बाबू साब की घरवालियो को बेशी औलाद को दुआ का दरद बाँट कर बीस-पचीस पैदा करता और शाम को दोनो साथ-साथ साहब का बाप बनकर मटन-बिरयानी उड़ाता, पवन पुल की सैल करता। एक दिना तो एक कालीज का छोकरा सीना के पास आया, बोला ए लँगड़े, हम तुमेरे लैफ पर किताब लिखेगा, तुम आपणी आक्खा लैफ बताओ, कित्ता कमा लेते हो रोज भीख माँगकर। सीना बोला—साब हमेरे साथ चलो उस पुल तक, आपणा सरदार सूं मिलायेंगा, वहाँ तुमेरे कूं आम्हरा

सरदार सब कुछ रत्ती-रत्ती बतायेंगा। सीना लँगड़ाते-लँगड़ाते छोकरे को पुल तक ले गिया और पुल के पीछूँ जहाँ कोई चिडिया मातूस नईं था, छुरा निकालकर तन कर खडा हो गिया और छोकड़े का घड़ी-कलम और मनीबेग सब छीनकर दो लाफा लगाया और बोला : स्साला बड़ा आया हमेरे लैफ पर किताब लिखने वाला, जा साले अपनी भैंन की करतूत पर लिख। चल हट्ट, भाग यहाँ से नईं मार मार के भुर्ता बना देंगा।'

ये सब हैरत अंगेज बातें सुनकर पूरन के होश गुम। फटी-फटी आँखो से झेलम को देखता बस इतना ही पूछा : 'और तुम ?'

'अपन तो अब हलाल ईमान की कमाई खाता है भाय।'

'कैसे ?'

'नवा-नवा आने वाला पिच्चर का पोस्तर चिपकाता है दीवाल पर, आक्खी मुम्बई एक कोने से दूसरे कोने तक, सौ चिपकाता है तीन रुपे पाता है। रात कूँ बारा आणेँ का गाठिया पापडी खाता, चार आणा हवलदार कूँ सोने का देता और 'डान चाचा तुम कितने अच्चे, तुम्में प्यार करते सब बच्चे', गा गाकर साईं बाबा का नाम लेकर सो जाता। पंद्रा दिन सर्वीस करता, पंद्रा दिन सडे मारता, दो तीन का धुआँ फूँकता, चौपाटी पर चाट उड़ाता और पिच्चर तो फोकट मे देखता। साल दू साल माँ जब दू ढाई सौ हो जाइंगा तब किसूँ घाटन से शादी करके आपणा घर बसाईंगा, मरद हो गिया है अब तो पूरा मरद, गाठिया-पापडी खाते-खाते स्साला पेट खराब हो गिया है, या साईं बाबा सुन लो।

'पण अपन की करता भाय ?'

'कुछ भी नही, कुछ भी नहीं झेलम!'

'काहे स्साला खाली-पीली बण्डल मारता', सीना तो हमेरे कूँ बोलता—'आपणा परदेशी भाय समुन्दर के किनारे वाली कोठी पर सेठ की छोकरी को पढ़ाता, चिड़िया फँसाता, फुरइया, माशा का फोट्ट छापो करता, भोपूँ बजाता घूमता, पण हमेरा जो नवा-नवा सूट किराये पर

लिये गिये चा अबी नाही वापिस किया, कभी पहूँच के ले लेगा, रम का पव्वा नईं अब आक्खी बोतल लेंगा।'

'वह ठाट-बाट तो कभी का खतम हो गया झेलम! अब तो फकत मौत चाहिये। जिन्दगी मुझ से बरदाश्त नही होती यार।'

'अरे हट्ट, स्साला पाँच हाथ तीन फूट का पक्का मरद होके औरत का माफीक ची ची करता। चल हमेरे सेठ के पास, तेरे कूँ बी तीन रुपे रोज की सर्वीस दिला देंगा।'

सौवें पोस्टर की लेई मे आज की मशक्कत भरी शाम डूब मरी। गीतकार पूनम उर्फ मजदूर पूरन की हथेली में भिंचे थे तीन रुपये के सीले-सीले नोट और दीवाल पर अभी-अभी लगाये गये पोस्टर पर बडे-बडे हरूफो मे कुछ यो चमक रहा था :

कैपिटल में

अगले शुक्रवार से रोजाना चार शो : १२॥ बजे, ३॥ बजे, ६॥ बजे और ६॥ बजे रात।

रंगवाणी प्रोडक्शन :

नखरे वाली (पूरा रंगीन चित्र)

कलाकार : शमीम, साजेन्द्र कुमार, विनाका माला, तागा और मुमताज़

चुलबुले गीत : साजन बालूशाही। मनमोहक संगीत : रविजी

है तुम को मेरे साँवले उभार की कसम।
ना जाने यार टिकुली मोरी कहाँ गिरी॥

जिगर फडक्का डास : झेलम

सवाद लेखक : जगत्-प्रसिद्ध मुशी मनसुख लाल विश्वकर्मा

निर्देशक : विजय सितारिया।

● ● ●

●● सितारों के चक्कर

हर रोज उगने वाली सूरज की चटकीली किरन के साथ पूनम का गीतकार दफन हो जाता और वह महज एक मजदूर पूरन, दिन भर मे सौ पोस्टर चिपका कर तीन रुपये कमाने वाला यानी सिर्फ पद्रह दिन ही मिलने वाले काम के जरिये पैंतालिस रुपये की आमदनी वाला औसत दर्जे का हिन्दुस्तानी रह जाता और हर रात आसमान मे टिमकने वाले तारो की बारात के साथ शामिल होकर उसका कुम्हलाया कवि चेतन होकर फूट पडता। इस प्रकार एक महीने तक वह मुखौटे भरी जिन्दगी जीता रहा। बात साफ नही हुई क्या ? पूरन सुबह-सुबह उठता, घरनी कुछ बना देती, खा लेता और अपने सेठ से सीढी, पोस्टर और लेई लेकर काम पर निकल जाता। दिन ढले निचुड़ा-निचुड़ा वापस आता और थोड़ा सुस्ताकर खाना खाता फिर मजदूर का चोंगा उतारकर गीतकार का चेहरा लगा लेता। दिन भर की पीड़ा, बिखराव, छटपटाहट और घुटन को शब्दो का जामा पहनाता, साँचे में ढालता और फिर कही किसी पत्रिका के लिए भेज देता। इस उम्मीद पर कि कही से कुछ पैसे-वैसे आ जायँगे। रूबी को मकान का आधा किराया देना था क्योंकि रूबी को भी तो किसी सेठ्ठुस को पूरा किराया चुकाना था। रूबी ने उस दिन उबाल मे आकर घर से निकलने की नोटिस दे दी थी लेकिन शकुन्त द्वारा दी गई 'बेड टी' के ठडे छीटो से खीझ का फेन

बैठ गया था। बात आई गई यूँ ही सी जहाँ की तहाँटँगी रह गई थी। न तो शकुन्त ही पूछती कि दिन भर आप कहाँ रहते हैं ? क्या करते हैं ? और न पूरन ही बताने की जरूरत महसूस करता, बताने लायक था भी क्या ? साड़ियों के रंग धुलने लगे थे, पेबन्द टँकने लगे थे लेकिन भीतर का उफान, बाहर की खुली हवा (?) मे आने के लिए बेचैन घुटती नई ज़िंदगी दिन-दिन कशमकश करती उभरती चली आ रही थी। रुस्तम बन्दानी एक शहरी सभ्य साँप की तरह शकुन्त के याद की पिछली पुरानी केंचुल को उतारकर अब मलय-पवन की अन्य संदली बाहों और अनूठे देह-रस की खोज में रेंग रहा था।

लम्बी सीढ़ी के आखिरी डंडे पर चढ़ा पूरन कभी-कभी सोचने लगता कि कितनी धुरीहीन; विशृङ्खलित; टूटे पहिये सा जीवन है। (युग-जीवन भी) । इतनी वैज्ञानिक उपलब्धियों के तन्तुजाल से बुना स्पुतनिक युग का जीवन, कैवेण्डर्स सिग्रेट के विज्ञापन के लिए निकले किराये के टट्टू, सबसे ऊँचे दिखने वाले लम्बुओं सा सफेद-पोश, विस्मयाकुल फिर भी कितना उपहासा-स्पद, खोखला। सब ओर से चिटखा, छितराया, ईर्ष्याजन्य बौद्धिकता की ज्वलन शीलता से झुलसा, निष्ठाशून्य, आवेशपूर्ण तीव्रता से व्याप्त जैसे किसी ने हमें तहखाने के नीचे बन्दकर बाहर से ताला डाल दिया हो। मैंने, रोज-रोज औने-पौने अपने देह की कपास कतवाकर लोक-लाज का कम्बल बुनने वाली रूबी से लेकर करोड़ों रुपये कमाने वाले सेठ श्यामल श्यामल बरन और छगन-लाल को देखा, भीतर झाँक कर अच्छी तरह देखा, मुसवा मुन्शी किस मोरी का कीडा है, लेकिन सब जैसे अतृप्ति, ऊब और घुटन के मारे गये गुलफ़ाम, न खतम होने वाली गंदगी और ग़लीज़ को उलीच-उलीच कर ढोने वाले बौने, कुलबुलाती चेतना के लिए सब जगह वीरानियाँ ही वीरानियाँ हैं। बदलियों के स्तनों तक का दूध सूख चुका है। ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ अपने सपने सहेज

कर रखे जा सकें। सब जैसे अपनी 'लाश' ढोते हुये उद्देश्यहीन यायावर; रोजमर्रा के काम करते हुये भी अपने आप से वीत-राग, तटस्थ, कल्पित भय और सन्देह से सताये, उजले माथे पर तिरंगा तिलक लगाये, प्रवंचित; काठ की टूटी तलवारों से युद्ध करने वाले; पुंसत्वहीनता के पक्षधर, प्याज के छिलकों की तरह जिनका सारा विवेक, जिनकी सारी चेतना उतर चुकी है।

मुसीबत तो यह है कि कोई किसकी-किसकी सुने, किसको-किसको तरजीह दे, जिसे न साधो, न दुलराओ, वही ठुनकने लगता है। औरत को अच्छा खाना-कपड़ा और सिंगार-पटार से न बहलाओ तो वह बाहर ताक-झाँक करने लगती है। मुन्ने को टाफी-बिस्कुट और रंग बिरंगे गुब्बारे लाकर न दो, टिकटिक घोड़ा बनकर अपनी पीठ पर न चढ़ाओ तो वह बरखुरदार बाप को बाप मानने से इंकार करने लगता है, बास के आगे पाल्सन न पिघलाओ तो वे 'सीरियस' होने लगते हैं। और सबको छोड़ो; खुद पाव आध पाव दूध न पियो तो लस्टम-पस्टम छकड़ा घसीटने वाला यह चोला भी विद्रोह करने पर आमादा हो जाता है।

पूरन उर्फ पूनम ने अपने दर्द को गीतो में ढालकर आठ-दस नामी गिरामी पत्रो मे भेजा, डेढ़ दो रुपये पोस्टेज मे पोस्टर चिपकाने की गाढी कमाई पल्ले से दी लेकिन न कही कुछ छपा-वपा और न कोई उत्तर आया। कुछ रचनाएँ 'हवा' मे भी उछालने के लिए भेजी लेकिन वहाँ से भी वे प्रशंसा पत्र के साथ खेदपूर्वक लौटा दी गईं। पूनम का कलाकार कचोट खाकर अपने आप से पूछता: तेरी रचनाएँ उन तमाम छपित-उड़ित रचनाओ से बुरी तो नही फिर क्यो 'इंटरव्यु' मे प्रौढ़ कुमारियो सी मिमियाँ-मिमियाँ कर हारमोनियम पर 'गला काट लो जानेमन धीरे-धीरे' गाने के बाद भी नामंजूर हुईं। इसलिए कि तू किसी बार या रेस्तराँ मे बैठकर बियर के हल्के-हल्के सुरूर मे दोस्त की पीठ पर छुरा भोककर दुश्मन के तलुवे नही सहलाता। 'भुक्तभोगी'

कन्या कुमारियो से वफा के नाम पर जफा करते हुए उनसे 'नफा' नही कमाता। आदान-प्रदान के इस निपट स्वार्थधर्मी युग मे सौदेबाजी भी नहीं करता कि 'कबहुंक भाय अवसर पाय, मेरियो कीजियो चर्चा कछु प्रसग चलाय।' प्रियवर ! इस शुभेच्छु के पास न तो कोई ऐसा हुनर है कि तू मुझे बहुचर्चित करे और न मुझे युग-प्रवर्तक सिद्ध करूँ। भले तुझे कोल्ड काफी घूँट-घूँट कर गालो ही क्यो न दूँ ? चर्चा तो होगी ही। आजकल किसी को नेस्तनाबूद करने का घरेलू नुस्खा यही है प्यारे कि जानने-मानने होने पर भी पान के बीड़े चुभलाते हुए 'हूँ' करके बस चुप लगा जाओ, बन्धुवर अपने आप दफ़न हो जायगा।

बलिहारी रे समय तेरी, जहाँ दोस्त की दोस्ती या दुश्मन की दुश्मनी तक का इतबार नही रह गया है। वे दिन लद गये जब मिया खलील खाँ फाख्ता उडाते हुये गाया करते थे : दुश्मन को न देखो नफरत से, शायद वो मुहब्बत कर बैठे। आजकल तो ऐसे मुँहलगे; मिठबोले और सिरचढ़े 'दोस्त' देखे, इस नन्हीं उमर के दायरे में खूब-खूब देखे। गलबहियाँ डालकर इसरार करने वाले, संवेदना और सहानुभूति का शोषण करने वाले, पैसे-कौड़ी के मामले में बिल्कुल लापरवाह, बाहर से बड़े भोले लेकिन भीतर से पक्के हिसाबी-किताबी, विश्वास और ईमान की 'गठरी' पर डाका डालने वाले चार सौ बीसिये, गलाकाटू, दग़ाबाज कल्मषी।

चलो जी, डेढ दो रुपये ख़ून करने पर एक लम्बी कविता तो छपी, बीस-पचीस तो मिलना ही चाहिये। चाहिये। लेकिन मिला कितना ? फ़कत दस रुपल्ली और वह भी दो महीने बाद। हाय री दुनिया, हाय रे ज़माने, कितने हैं दिलकश तेरे फ़साने ! 'फोरट्वन्टी' एक अमृतसरी विज्ञापन की छपवाई लो तीस बत्तीस रुपये और उससे दूनी जगह घेरने वाली कविता (कूड़ा, कविता का 'स्वर्णयुग' तो कभी

का बीत गया राजकवि, अब तो चौदह कैरेट का ज़माना है) का मात्र दस कलदारम् : पत्रम् पुष्पम्। क्यो नही यार इसी मे एक सिफर बढ़ाकर भाई-बधुओ को कुढाता। सिफर की बिसात ही कितनी ? शून्यवादी सम्पादक जी ने कृपा करके एक 'शून्य' दे दिया अब इसी मे चढकर उन्मुक्त विहार कर। चाहे चन्द्रलोक जा चाहे चूल्हे मे।

इस प्रकार श्री श्री श्री श्रीमान् पूनम जी कविराज रात को कविताएँ लिख-लिख डाक से भिजवावते और दिन भर सरग-नसेनी पर सवार पोस्टर ऊपर पोस्टर चिपकावते। 'तरे-तरे' के नुस्खे बँटवावते। एक दिन फिर क्या हुआ टुक ध्यान देकर के सुनो ! पूरन 'स्साले' पोस्टर चिपकाकर अभी मोड तक गये नही कि दूसरा 'हरामी का पिल्ला' कूँ कूँ करता आ धमका और 'स्साले' के सीने पर अपना झण्डा गाड दिया : सपट लोशन दाद खाज खुजली के लिए। इन सब ख़ुराफातो की वजह से सर फुटौव्वल और चक्कूबाजी तक की नौबत आ जाती। ख़ैरसल्ला हमारे पूरन भाई लौटे, दो चार पटखनी खाई, खिलाई और फिर जेब मे पड़ो कघी से ज़ुल्फो को बटोरकर अपना रास्ता नापा। सितारे अपनी चाल से चलते रहे। कोई नही कह सकता कि कब किसका सितारा दोज़ख की गुमशुदा गहराइयो से उछलकर जन्नत की बुर्जियो पर पहुँच जाय। भाई लोग इन्ही तारो की करामात से तो रातो रात फ्लैट से फुटपाथ और फुटपाथ से फ्लैट पर पहुँच जाते है। बहरहाल, रात-दिन गर्दिश मे हैं सात आस्माँ, हो रहेगा कुछ न कुछ घबरायें क्या।

अपने इस नामाकूल काम से बेहद झल्लाये, चपतियाये पूरन साहब एक शाम तीसरे महीने की इकतीसवी तारीख को यह सोचते-सोचते घर लौट रहे थे कि अगर यही खुशगवार रवैया ईमानदारी के साथ बदस्तूर जारी रहा तो ऐ मेरे बर-खुरदार एक दिन 'फुदकती मैना' का भी पोस्टर तुझी को चिपकाना पडेगा कि इतने मे चन्द्रकान्ता के ऐयार डोर-लोटा और बटुये से पूरे लैस तेजसिंह की तरह नाली के मोड़ पर

विराजे सिलेट-बत्ती से खटाखट गुणा-भागकर किस्मत बताने वाले पोथी-पत्राधारी एक ज्योतिषी जी के दर्शन हो गये। ज्योतिषी जी के बगल में चिमटा गाड़े भक्तो के कल्याणार्थं हिमालय की कंदरा से सीधे उठकर 'परगट' हो जाने वाले एक महात्मा जी चादर मे शुद्ध शिलाजीत फैलाये जोर-शोर से चिल्लाते हुए वीर्य स्तम्भन और नपुंसकता के नुस्खे बेंच रहे थे। दायें बगल के दड़बो से निकली मुर्गियो सी कुड़बुडाती, कान में उड़सी अद्धी बीड़ी की जलेबियाँ बनाती छिटकी किलकों की भीड़ चिमटे की ओर तेज़ी से बढी। भलेमानुसों की इस मटियामेट हालत और मुर्गियो की किस्मत पर तरस खाते हुए ज्योतिषी जी चिमटे की खड़-खड़ाहट पर खीझकर अनाप-शनाप बकने लगे। चिमटा अपने असामियो का बल पाकर और जोर-जोर से चिग्घाडने लगा। बाईं ओर से रात की ड्यूटी डिस्चार्ज करने वाले, कन्धे पर सफेद कोट टाँगे, चुटकियो पर चुटकियाँ बजाकर जम्हाइयाँ तोड़ते रेलवई के बाबुओ का दल आया और ज्योतिषी जी को घेरकर अपनी खुरदुरी हथेलियाँ दिखाने लगा। हाथ की रेखायें बचवाने की दक्षिणा दू आने और बरम्हा जी की घसीट 'रैटिंग' की पढवाई फ़क़त चार आने। दुअन्नो-चवन्नी लिये कई हथेलियाँ एक साथ आगे पिल पड़ी। भीड़ का एक गोला उभरता देखकर चिमटे वाली भीड़ भी इधर खिसकने लगी। रमलाचार्य ज्योतिषी झाँसानन्दजी महाराज कामरूप कमच्छा वाले बड़ी बेचैनी से अपनी दाढी सुलझाते हुए पोथी-पत्रा और होडा-चक्र उलट-पुलट कर पोरों पर अँगूठे को तेजी से फिराते लम्बी-चौडी संख्याओ का जोड़-बाकी गुणा-भाग कर रहे थे। क्या नही कर रहे थे ? सामने बैठे एक निहायत मरियल जवान ने धीरे से फुसफुसा कर पूछा : 'बाबा जी कोई बच्चा बच्चा।'

'हाँ हाँ दिखाओ', दुअन्नी गोलक मे डालकर हथेली पर 'आई-ग्लास' रखते झाँसानन्द जी झाँसा देते हुए बोले : 'पुत्तर देखो, देख रहे हो न, अगर शुक्कर और चन्दर पहाड़ो से आने वाली तिरछी-तिरछी दो

लाइनें मिलाकर शनिच्चर की 'लैन' को 'किरास' कर जायें तो बच्चा जरूर-जरूर होगा बच्चा !'

'कैसे क्रास करेंगी बाबा ?'

'इसके लिए दिल की दूरबीन से 'घसीट्ट रैटिंग' पढनी पड़ेगी बच्चा, निकालो एक चुवन्नी और !'

चवन्नी निकालने मे देर लगती देखकर पीछे से किसी मसखरे ने कहा—'अरे काहे यार चवन्नी फोकट में खर्च कर रहा है, चिमटा वाले से दुअन्नी का शुद्ध शिलाजीत लेकर क्यो नही सुबू-शाम भैस के दूध मे फेंट-फेंट कर पीता ?'

नौकरी मे बढोतरी, शादी, जायदाद, मुकदमे की हारजीत वगैरह-वगैरह के सवालात पूछे गये। फ़ी सवाल एक दुअन्नी 'रैटिंग' की पढ़वाई फ़क़त एक चुवन्नी। एक घण्टे मे सारी भीड़ ख़तम हो गई। स्वामी झाँसानन्द जी रेजकारी बटोर कर चौकन्ने से उचक-उचक कर अलग-अलग गड्डियो मे रखते हुए हिसाब लगा रहे थे। कुल आमदनी उन्नीस रुपये आठ आने। एक घण्टे की बैठकबाजी उन्नीस रुपये आठ आने और दिन भर को जाँगरतोड़ पोस्टर चिपकाने की : कमाई सिर्फ तीन रुपया, वह भी हर पन्द्रह दिन के बाद खल्लास। घर लौटते हुए पूरन का दिमाग़ बडी तेज़ी से चक्कर काटता हुआ इस नये मसौदे पर ग़ौर कर रहा था।

अनागत के प्रति कौतूहल पूर्ण जिज्ञासा हर व्यक्ति की कमजोरी है। यह उसका सबसे नाज़ुक ठौर है, जहाँ पर लक्ष्य संधान करके उसे भरपूर मूड़ा जा सकता है। चाहे व्यक्ति कितना ही वैज्ञानिक, बौद्धिक, तार्किक और जागरूक क्यो न हो, जोबन के जादू की तरह ज्योतिष का जादू भी सर पर चढ़कर बोलने लगता है और जो व्यक्ति जितने ऊँचे पर है वह इन सब मामलो मे उतने ही गहरे गिरता है। तो क्यो न आधुनिक साज-सज्जा से युक्त उच्चस्तर पर एक ज्योतिष-संस्थान की स्थापना की जाय। दही चाटकर किसी काम के लिए रवाना होने वाले सेठ

श्यामल-श्यामल बरन, नारियल फोडने वाले छगन मगन और चूंसक मूषक मुन्शी सब के सब सर के बल दौडे-दौडे आयेंगे और सौ बार चौखट पर, चरण पादुकाओ पर नाक रगडेंगे। नारियल फोड फोडकर दही चाटेंगे। किस्सा कोताह। गल्ली-गल्ली पोस्टर चिपकाने वाला कल का तीन रुपये का मजदूर पूरन रात बीतते-बीतते ब्रह्म बेला में कैलासवासी त्रिकालज्ञदर्शी जगद्गुरू श्री श्री १०८ स्वामी पूरनानन्द जी महाराज आई० जे० के० एल० एम० (इन्डिया) बन गया। कहाँ पर सस्थान की स्थापना की जाय ? कैसे जिज्ञासुओ पर आध्यात्मिक प्रभाव डालने वाला नोलमवर्णी परिवेश पैदा किया जाय। सेट्ठ्सो की बस्ती कालबा देवी इस दृष्टि से उचित स्थान जान पडा। स्वामी जी ने अपनी छोटी-मोटी गृहस्थी औने-पौने बेंच-खोंचकर हस्तरेखा विज्ञान, होड़ा-चक्र, सामुद्रिक-शास्त्र आदि सामग्री इकट्ठा कर ली और रात-दिन उसी दुनिया में दफ़न होकर गलमुच्छी दाढ़ी बढ़ा-बढ़ा कर घनघोर अध्ययन करने लगे। स्वामी पूरनानन्द जी बम्बइया पानी में पलने के कारण तरह-तरह के व्यक्तियो के मनोविज्ञान से भली भाँति परिचित हो चुके थे। किसकी कौन सी कमजोर नस है, किस नस को दबाने से कौन सा सुर निकलेगा, इसकी जानकारी भी उनको अच्छी खासी हो गई थी। सो पक्की सूझ-बूझ से सज-सँवर कर स्वामी पूरनानन्द जी एक दिन सधुक्कडी वेश-भूषा धारण किये पौडर मिश्रित भभूती रमाये महालक्ष्मी रेस के मैदान मे देश के कल्याणार्थ स्वतः अवतरित हो गये। बहुत देर तक घूम-घामकर परिस्थिति और मन-स्थिति का अध्ययन करते रहे फिर एक लतियल सट्टाखोर पग्गडबाज के कन्धे पर भरपूर मुक्का मारकर 'जय शिव बम् भोले' का नारा बुलन्द किया। हींग का थोक व्यौपारी पग्गडबाज पोपटलाल चोपटलाल भी पक्का खुर्राट था। पूरनानन्द जी को कुहनी से धकिया कर बोला—'स्साला हलकट, हमे चराता है, चल हट्ट, नईं अबी तुमको हवलदार

के हवाले कर दूँगा, बहुत देखे है तुम जैसे शिव बंभोले, निठल्ले, छिनरे, संड मुसंड ।'

'शान्ती भगत शान्ती, क्रोध पाप कर मूल हैगा, लो असली बरफ छाप भभूती, फकी लगा जाओ चुपके से, आज तुम्हारा ही मुश्की रग वाला अश्व फस्ट किलास आयेगा, दिव्य-दृष्टि से देख रहे हैंगे। लेकिन अटेन्शन, इसकी चर्चा किसी सूँ करियो मती ।'

और जब 'घुडदौड' मे सचमुच मुश्की रग वाले ने ही पचीस हजार का मैदान मार लिया तब तो श्रीमान् पोपटलाल जीत मे भी बदहवास से हाँफते-हाँफते असली बरफ छाप भभूती देने वाले स्वामी जी की रिसर्च करने लगे। भविष्य-द्रष्टा स्वामी जी भीड से हटकर 'सप्तताल' के नीचे पद्मासन-बद्ध चर्मचक्षु मुलमुलाते एक बेंच पर आसीन थे। कनखियो से पोपट को अपनी ओर आता देखकर झट झरोखे बन्द कर लिये और खेचरी मुद्रा साधते हुए समाधिस्थ हो गये। दस मिनट,...पन्द्रह मिनट, ..बीस मिनट बाद स्वतः मुखरित हुए :

'ॐ नमः शिवाय, बीरभद्दर बूटी लाओ ।'

'.........'

'बीरभद्र बूटी ला रिया कि ना'—एक कड़कती आवाज़ आई।

'सेठ लटपटाते हुए बोला : 'मैं ऽऽ मैं महराज, पोपटलाल चोपट लाल हीग का थोक मर्चन्ट ।'

'तो इस समय हम कहाँ है बच्चा पोपटलाल ?'

'घुडदौड के मैदान मे महाराज !'

'और तुम कहाँ हो बछड़े ?'

'मैंऽऽमैं आपके सामने महराज !'

'तो हम-तुम दोनों कहाँ है राम जी ?'

'एक दूसरे के सामने महाराज !'

'अच्छा तो शिघ्र अन्तर्ध्यान हो जाओ यहाँ से, तुम हमे कैलास से क्यों लाये, हम तुम्हे 'स्राप' से भस्म कर देते हैंगे ।'

'हिंगलाज' की असली हींग बेंचने वाला पोपट लाल वल्द चोपट लाल अच्छी तरह जानता था कि ये महज इन लोगों के लटके है, भस्म-वस्म कोई किसी को नही करता और न कोई होता फिर भी वह सुनी-अनसुनी कर गया और स्वामी जी के चरन पकड कर 'कमोड' की सी बैठक में बैठ गया। थोडी देर में दयानिधान स्वतः द्रवित होकर वह चले :

'तो तूँ क्या चाहे है बछडे !'

'बस महाराज इन चरणो की छाया, जनम-जनम भर के लिए।'

'भाग्यवान् ! बड़ी कठिन साधना हैगी, सेवा धम्मो परम गहनो, बोल चलेगा हमारे साथ कैलाश पुरी को।'

'अन्नदाता ! मैं आपके साथ कैलासपुरी क्या यमपुरी तक चलने को तैयार हूँ।' 'धन्नभाग बछड़े ! तू फस्ट किलास पास हुआ, मैं तो तेरी 'प्रीक्षा' ले रिया था। हम तो अपने भगतन के लिए हैगे, जित्ते हमें भगत पियारे है उत्ती लक्ष्मी और पारबती भी नही, ऐसा गीता में क्रिसन चन्दर ने कहा है। पर देख रे, तेरी इस मिठिया-मिठिया कर बोलने वाली बेशी विनम्रता मे मुझे घासलेट की बू आली हैगी।'

'तो महाराज ! चलकर श्री चरण कमल रज से इस चरन दास की कुटिया यानी 'पोपट-निवास' को पवित्र कीजें प्रभू !'

'तथास्तु, लेकिन वत्स ! हम विरक्त लोग महलन में निवास नही कर सकते हैगे। हमने जावत् भोग-भोगकर अब राजसी भोग-रागों का तियाग कर दिया हैगा, अब तो हम केवल फल-फूल ही गृहण करते हैंगे और वह भी खाते नही केवल देखकर ही तृप्त हो जाते हैंगे।'

'महाप्रभू ! मोजैक की फर्श पर घास-फूस बिछाकर कुटिया बन जायगी और खाने-पीने के लिए कदली फल, द्राक्षा, जम्बु, आम्र आदि जो इच्छा हो प्रभु ! स्वीकार कीजैगा।'

'तो चलो वत्स।'

स्वामी पूरनानन्द जी दिनभर तो 'पोपट-निवास' मे रहते और

संध्यकाल वरुणदेव जी के दर्शन के बहाने एक 'ट्रिप' दादर का मार आते। चुग्गी दाढी वाली अस्वाभाविक मुद्रा और वेश-भूषा मे रूबी और शकुन्त यह सब देखकर आश्चर्य चकित थी। लेकिन उन्होंने समझा दिया था कि आजकल वे 'राजा भरथरी' मे एक संन्यासी की भूमिका मे काम कर रहे है। पोपटलाल ने दूसरी मजिल वाला अपना वातानुकूलित कक्ष स्वामी जी के लिए खाली कर दिया। डनलपिलो के लचकीले गद्दो पर घास-फूस बिछाकर एक आसन तैयार कर दिया गया। आसन से हटकर बायें जगद्गुरु ने पोपट से कहके स्वर्ण रौप्य निर्मित एक लघु आकार वाले मदिर मे मातेश्वरी मन्नपूर्णा देवी की 'प्रतिष्ठा' करवा ली। साधना-कक्ष चौबीस घण्टे धूप, दीप, अगर से सुवासित और नीली नीली हल्की जुगजुगाहट फेंकने वाले वल्वो से प्रकाशित रहता। स्वामी जी की सेवा पोपट लाल बडे स्वार्थ-परमार्थ भाव से करता था फिर भी बिना नागा सुबह-शाम वे भगत को चेतावनी अवश्य दे देते कि 'देख रे, भभूती की चर्चा कभी किसी सूँ करियो मती।' इतना गोपनीय रखे जाने पर भी कुछ दिनो बाद प्रायः सभी स्थानीय दैनिक पत्रो में भव्य-दिव्य चौखटे के बीच स्वामी जी के सचित्र आविर्भाव की सूचना यो विज्ञापित होने लगो। कैसे?······कहि न जाइ का कहिये।

अवतरित हो गये। अवतरित हो गये।।

कहाँ? कौन??

कालबा देवी मे श्री श्री १०८ त्रिकालदर्शी कैलासवासी जगद्गुरु पूरनानन्द जी महाराज आई० जे० के० एल० एम० (इंडिया)।

बाबा चोमत्कार! 'पोपट-निवास' मे अब सट्टेबाज सेठ और सूनी-कोख सेठानियो की भीड जुटने लगी। कारो की कतारें लगने लगीं। जैसे-जैसे भीड़ बढती गई, वैसे-वैसे जूट, काटन और आयरन के शेयरों की गरमाई के साथ स्वामी जी की इज्जत अफ़जाई का हौसला भी बढ़ता गया। उनके जागरण, अर्चन, समाधि, साक्षात्कार और भव-रोगों से छुटकारा दिलाने के 'डाक्टरी मुआयने' के सारे कार्य पृथक्-

पृथक् बँट गये । सबसे महत्वपूर्ण समय उनका उस समय होता था, जब वे फल-फूल ग्रहण करने के बाद ठीक दोपहरी मे समाधिस्थ होकर 'आफिस' करते थे । उस समय पूर्व निश्चित साक्षात्कार के अतिरिक्त कोई उनसे नही मिल सकता था । 'डाक्टरी मुआयने' का कार्यक्रम जिसमे वे नक्षत्रो की पथभ्रष्ट दिशा दुरुस्त कर किस्मत की 'ओवर हालिंग' करते, आमतौर से शाम को निश्चित था । उस समय भव-रोग-नाशक महाप्रभु का द्वार सब के लिए समान रूप से खुला रहता था। स्थानाभाव के कारण देवियो के लिए सध्या से पूर्व और दोपहर के पश्चात् का समय नियत था । सध्या काल का समय प्रायः सागर-दर्शन या कभी-कदा किसी बहुत पहुचे प्राइवेट भक्त के कल्याणार्थ उसके भवन मे पधारकर उद्धार करने के लिए सुरक्षित था ।

जुहू की सुगंधित चाँदनी जैसे उजले-उजले वस्त्र, विपुल वासनावती निठल्ली 'बाइयो' के हृदय रूपी श्रृङ्गार-दर्पण मे गहरे धँसकर मरोर पैदा करने वाले 'बालकृष्ण' छाप घुँघराले बाल, व्यक्तित्व को गुरुता-गंभीरता प्रदान करती श्मश्रु-छटा, सोने की पतली कमानी का खूबसूरत चश्मा और श्री चरणारविन्देषु : गोरक्षक पदत्राण बस यही स्वामी जी की वेश-भूषा थी । वे ब्रह्म बेला मे नरसिंघा बजाते जागृत होते ।

'माइक' पर विज्ञापित श्लोको की आवृत्तियाँ, उमडती-घुमडती कालबा देवी की अट्टालिकाओ में रात देर से सोई अतृप्त कुल-वधुओ की करवटों से टकराकर खीझ पैदा कर देती । अन्य आवश्यक कार्यों के पश्चात् मन्नपूर्णा देवी का अर्चन करते-करते दस ग्यारह बज जाता, फिर कुछ पोथी-पत्रा और कुडलियाँ आदि देखते । बारह बजते-बजते फल-फूल ग्रहण कर समाधिस्थ हो जाते । समाधि की अवस्था मे ही 'आफिस' करते । उनके अत्यत महत्वपूर्ण कार्य प्रायः 'आफिस टाइम' मे ही पूरे किये जाते । 'आफिस' के पश्चात् भग वृतियों को सम्बोधित करते । एक दिन ग्रीष्म की उत्तप्त संध्या-वेला में स्वामी जी भवताप से तापित रोगियों का 'डाक्टरी मुआयना' कर रहे थे कि गंजे सिर में गोल रेशमी कढी हुई टोपी लगाये, और बेडौल काली अंगुलियों में

समुद्र मंथन से प्राप्त सारे रत्नो को अँगूठियो मे जडाये एक सेठ ने अपनी भद्दी हथेली सामने के संगमर्मरी पीढे पर टिका दी। दिव्य-दर्शी महाराज हाथ मे एक फुट वाली पेंसिल लिए कटी-फटी रेखाओ को पढते धीरे-धीरे प्रस्फुटित हुए :

'भक्तराज ! तुम पर तो शनि यानी सेटर्न का प्रभाव छः महीने से चलता आ रहा हैगा, यह बडा घातक होता हैगा, हाँ 'शातीजाप' से यह 'विघन' कट सकता हैगा। मध्यमा, शनि की अँगुली हैगी और आधार पर स्थित पर्वत, शनि का पर्वत कहलावे है, इसी के प्रभाव से रामजी का स्वभाव चिडचिडा होता जा रहा हैगा। आप अपने ताने-बाने मे हर समय डूबे रहते हैंगे। शक्की और झक्की इतने कि अपनी भगवती तक का विश्वास नही करते हैगे। क्यो, क्या हम मिथ्या भाखते हैगे वत्स ?'

'हाँ हाँ महाराज, ऐसी ही गिरह-दशा मेरी छः महीने से चली आ रही है।' आस पास बैठे पग्गडधारी चडूल श्रद्धाभिभूत होकर अपनी-अपनी हथेलियाँ खुजलाने लगे।

सेठ ने सौ का नोट निकाल स्वामी जी के चरणो मे अर्पित करने के लिए बढाया कि जैसे बिजली का तार छू गया हो : 'भक्तराज ! सावधान, कचन-कामिनी से हम सख्त परहेज करते हैगे। चढाना चाहो तो जाओ, श्रद्धा-भाव से मातेसुरी के चरणो मे चढा दो।'

शयन से पूर्व मातेश्वरी मन्नपूर्णा देवी जी के कृपा-कोष से स्वामी पूरनानन्द को छः सौ रुपये की पहलौठी चढोत्री प्राप्त हुई। पिछले हफ्ते तक तो दिन भर पोस्टर चिपकाने के बाद हाड़-निचोड तीन रुपल्ली लेकर लौटते, गीत-वीत गोदते और फिर रूखा-सूखा खाकर ढीली खाट पर मुर्दा जैसे सो रहते लेकिन आज, स्प्रिंग वाले फरदार बिछौने पर भी नीद नही आई। धीरे-धीरे स्वामी जी ख्याति के क्षेत्र मे बृहताकार होते गये। फल-फूल का सूक्ष्म भोग करने के कारण उनकी नश्वर काया दिन-दिन सूक्ष्म होकर ब्रह्म मे लीन होती जा रही थी। भक्तो को

चिन्ता व्यापी। जब सामूहिक-वंदन पर बडे-बड़े देवी-देवता और जन-नायक वश मे हो जाते हैं तब फिर शिवभक्त स्वामी पूरनानन्द क्यों न पिघलते ? अतः 'आफिस के टैम' पर जो कुछ भी प्राप्त हो जाय, वही पा लेंगे—ऐसी सार्वजनिक घोषणा उन्होने कर दी। भक्त लोग प्रसन्न-वदन अपने अपने यानो पर चढ कर निज निज धाम लौट गये। पेश्तर बताया है न कि 'आफिम टैम' पर स्वामी जी किसी एक 'भगवती' से ही साक्षात्कार करते। स्वाद की भावना का मूलोच्छेदन करने के लिए सारे सुस्वादु पदार्थ एक मे ही मिलवा लेते और बाल-गोपाल बनकर भगवती के ही हाथ से दो चार कौर खा लेते पश्चात् फलाहार कर पूर्ण तृप्त हो जाते और अन्त मे उसी के आँचल मे अपना मुखारविन्द पोछ लेते, तत्पश्चात् 'आफिस' के काम मे लग जाते। बहुत आग्रह-निवेदन करने पर जब किसी पहुँचे हुए भक्त के धाम पहुंचते तो जो वस्त्र धारण किये रहते उसे स्नान करने के बाद ज्यो का त्यो वही उतार देते और जो कुछ भी सामने मिलता, चाहे वह पेटीकोट हो या पैन्ट, उसे धारण कर लेते।

मध्याह्नोत्तर 'आफिस' समाप्त होने के बाद भगवतियो की मंडली आ जुटती। कसीले-रसीले आँचल और बुभुक्षिता सूनी कोख वालियाँ अपनी नाजुक कलाइयाँ उन्हे यो सौप देती जैसे वे अपना अछूता कौमार्यत्व पहली बार किसी पुरुष को प्रदान कर रही हो।

'हाँ भगवती ! रेखायें बताती हैगी कि तुम पर शुक्र यानी वीनस का प्रभाव है। वीनस कला प्रेम और भावना की देवी कही जाती हैगी। शुक्र का विकास चरित्र मे स्फूर्ति, उत्साह और स्वछंदता लाता हैगा। जिस हथेली पर शुक्र-चरित्र का शासक हो, वह विपरीत योनि के प्रति अस्वाभाविक तीव्र आकर्षण रखता हैगा। उसके विचार अच्छे नही होते हैंगे भगवती !

धीरे धीरे स्वामी जी के चमत्कार की चर्चा अन्धविश्वासों की अन्धेर नगरी फिल्मस्तानों मे भी पहुँची। हर 'शाट' पर शान के साथ

'नारियल फोड़ू परम्परा' का निर्वाह करने वाले सेठ छगन मगन लाल और श्यामल श्यामल बरन जैसे सेठ पधारने लगे और काले बाजार की गाढी कमाई का कुछ प्रतिशत स्वामी जी को श्रद्धा भाव से समर्पित करने लगे। एक परमार्थी भेंट-अर्पित करके जाता और चार से चमत्कारो की चर्चा करता। सितारो की तेज रफ्तार के साथ स्वामी जी का 'हर्र लगे न फिटकरी' वाला असली बरफ छाप भभूती का गोरखधन्धा दूना-चौगुना बढने लगा। प्रातः काल जैसे ही 'माइक' से श्लोको की आवृत्तियाँ समाप्त कर स्वामी जी लौटे, उनके टेलीफोन की घटी घनघना उठी और पल्ली पार से बडे प्यारे मिट्ठ्ठुल बयन सुनाई पडे :

शुँ स्वामी पूरनानन्द महाराज छे '[1]

'कौन बोलता हैगा?'

'हुँ इन्दु बेन, महाराज! हुँ तम्हारी सेवा माँ उपस्थित थइनें दर्शन करवा मागूँ छूँ, ज्यारे गर्दी न होय।'[2]

'अन्नपूर्णा देवी के द्वार पर तो सदा भगतन की भीड-भाड लगी रहती हैगी भगवती! हाँ 'आफिस टैम' पर हम किसी सूँ नही मिलते हैगे।'

'आफिस टैम शु महाराज, कोण आफिस, शुँ तम्हारा जेवा पहुँचेला महात्मा पण आफिस जाय छे।'[3]

'मध्याह्नोत्तर बारह से तीन बजे वाला आफिस इन सब आफिसों से अलहदा हैगा भगवती। 'आफिस टैम' में ही हम ध्यान-धारणा करके अपने भगत लोगन का मनपूरन काम सम्पन्न करते हैंगे, दिव्य दृष्टि से देखकर।'

---

१ क्या स्वामी पूरनानन्द महाराज हैं?

२ मैं इन्दु बेन, महाराज! मैं आपकी सेवा मे उपस्थित होकर दर्शन करना चाहती हूँ, जब भीड़-भाड न हो।

३ आफिस टैम क्या महाराज? कौन सा आफिस, क्या आप ऐसे पहुँचे महात्मा भी आफिस जाते हैं।

'तो महाराज ! एख समये आत्री जऊँ ।'[४]

'जैसी तुम्हारी इच्छा भगवतो !'

फरवरी की अलस कचनारी दोपहरी । शैम्पेन सी बन्द बोतल में खदबदाती, अबीर-गुलाल, आम के कच्चे बौरों और महुये की तुर्श घुमडन सी तीखी दोपहरी । देह की शोख साँकल हिलाकर सनातन तृषा को जगाने वाली ऐसी ही एक दोपहरी मे रेफ्रिजरेटर में बन्द करके रखी जाने वाली तीस-बत्तीस की इन्दु बेन जूडे मे गुँथी बेले के अठलडिया गजरो वाली घुँघराली लपटें छितराती टैक्सी से 'पोपट-निवास' आ पहुँची । बगुले के पॉख जैसी उजली-उजली कोमल रोमिल मसृण साडी मे लिपटी कनक छरी सी, कसे ब्लाउज से लथ-पथ बगलो वाली युवा शरीर की मादक गन्ध बिखेरती इन्दु अब हाँफते-हाँफते मन्नपूर्णा देवी के मन्दिर की सीढियॉ चढ रही थी । पानी की सतह पर तैरती, पत्तियो के झुरमुटो को चीरकर झाँकती उझकती नील कमल को दो कलियाँ वक्ष मे टाँके सहगल के गीतो सी थरथराहट लिये, बिस्मिल्ला की शहनाई की डूबती धुन सी बहुत गहरे, बहुत गहरे उतार ले जानी वाली तासीर सरीखी । स्वामी जी उस समय प्रभाव डालने के लिए चारों ओर कुंडलियाँ फैलाये भाग्य की आडी-तिरछी रेखाओ को काट-कूटकर एक हमवार सड़क के श्रमदान मे लगे थे । सम्पूर्ण परिवेश सन्दली सुगन्धियो से भरा हुआ था । भूलेश्वर की इन्दु बेन ने बडी शालीनता और गार्हस्थिक लजाधुर विनम्रता से महाराज जी के चरण छुये । स्वामी जी ने शैम्पू से धोये भुरभुरे केश वाली सीमन्त के पिघलते प्रवाल द्वीप पर धीरे से वरद्-हस्त की ऊष्मा रखकर 'सौभाग्यवती भव, पुत्रवती भव' का आशीर्वाद दिया । साड़ी के फरफराते घुमाव को हौले से समेट कर इन्दु बेन कुछ दूरी पर बैठ गई और पूरे आध घण्टे तक ऊबी-डूबी बैठी रही ।

'भो भगवती ! कहाँ से शुभागमन हुआ ?'

---

४. तो महाराज, उसी समय आ जाऊँ ।

'हूँ इन्दु बेन महाराज !'

'अच्छा अच्छा, बड़े भोर तुम्हारा ही फोन आया रहा हैगा।'

'जी महाराज !'

महाराज जी ने घडी देखी, एक निश्चित जम्हाई ली। साढे बारह। अरे 'आफिस टैम' हो गया।

इन्दु बेन अपनी सहेलियो से स्वामी जी के खान-पान के विषय मे सुन चुकी थी, अतः साथ मे विविध प्रकार के स्वादिष्ट व्यजन : ढोकणा, श्रीखड, कसार और अगूर आदि ले आई थी। उसने बडी श्रद्धा से अपने हाथ से स्वामी जी को जिवाया। तृप्त-तुष्ट स्वामी जी ने 'देह धरे के भार' का दायित्व निभाकर इन्दु के आँचल मे अपना मुखार-विन्द पोछ लिया। आँचल के नीचे अछूते अमृत की पयस्विनी उफन रही थी।

'भो भगवती ! अपनी कुन्डली लाई हो।'

'ना महाराज, कहकर चार-चार सोने की चूड़ियो के बीच बँधी रिस्टवाच वाली अपनी बाई कलाई बढा दो।

'जनवरी का जनम हैगा तुम्हारा भगवती—दो सिर वाले यानी दोनो तरफ आगे पीछे देखकर काम करने वाले जेनस का महीना। साल का सरदार। इस माह पैदा हुए लोग बडे आशावादी होते हैंगे भगवती ! अपने लक्ष्य की सफलता के लिए वे उचित-अनुचित की परवाह न करके अपना सर्वस्व भी न्यौछावर कर सकती हैंगे। हाँ ज़रा और उठाओ भगवती ! अनामिका की रेखायें क्या कहती हैगी ? तू बड़ी स्नेहमयी, त्यागशीला सुगृहिणी हैगी इन्दू, तेरा प्यार भी बडा गहरा और आवेग पूर्ण होता हैगा। मूनस्टोन जरूर धारण करो भगवती ! सप्ताह मे शुक्र और शनिवार तुम्हारे लिए सर्वोत्तम दिवस हैंगे, कोई भी अत्यावश्यक कार्य इन्ही दिनो मे किया करो भगवती ! मध्य अप्रैल से लेकर पद्रह अक्टूबर तक का समय तुम्हारी मनोवाछित कामनाओं की पूर्ति करने वाला हैगा भगवती ! आज कौन सा दिन हैगा ?'

'शुक्रवार महाराज !'

'बडे शुभ 'टैम' में पधारी हौ भगवती !' शिव शिव शिव शिव पुत्र-योग तो नाही दीखे भगवती !'

'हाँ महाराज, बस हवे एक मात्र आज इच्छा शेष छ। आटलो मोटो कारबार, म्हेल, जायदाद, नौकर चाकर पण एक लाल ना बिना वधू निस्सार, कुणदीपक ना बिना आखू घर सूनूँ, धणी थी तो कसू थाय नहि। मने एक पुत्र आपो महराज, केबी रीते पण आपो, बस एक पुत्र, कुणदीपक ! क्यारथी हुँ माँ बनवा माटे तरसी रही हुँ महाराज !'[1]

और इतना कहकर इन्दु बेन निढाल होकर छिन्न कदली पात सी स्वामी पूरनानन्द जी के चरणो मे निश्शेष भाव से समर्पित हो गई। साँसो की फेनिल पर्तों पर नील कमल की कोढियाँ काँपने लगी।

'तो इसके लिए 'पुत्रेष्टि यज्ञ' सम्पन्न करना होगा भगवती !'

'हुँ आनामाटे सर्वां ग रूपेण प्रस्तुत छुँ महाराज ! यज्ञ नामारे शुँ दक्षिणा देबी पणशे, आज्ञा करो।'[2]

'मात्र एक हजार एक रुपये, विशुद्ध जनतान्त्रिक पद्धति से 'पुत्रेष्टि-यज्ञ' सम्पन्न करना पड़ेगा भगवती, बज्रोली के द्वारा अमरोली साधते हुए कठिन योनि मुद्रा की विधि से पुत्र योग लाना होगा देवि ! तुम्हारा पुत्र इस जनतान्त्रिक युग का प्रसिद्ध जननायक होगा भगवती !'

---

१. हाँ महाराज ! बस अब एक मात्र यही इच्छा शेष है। इतना बड़ा कारबार, कोठियाँ, जायदाद, नौकर-चाकर लेकिन एक लाल के बिना सब निस्सार, कुल-दीपक के बिना सब घर सूना, धणी से तो कुछ होवे जाय ना। मुझे एक पुत्र दीजिये महाराज ! कैसे भी दीजिये, किसी भी तरह दीजिये, बस एक पुत्र, एक कुल-दीपक। कब से मैं माँ बनने को तरस रही हूँ महाराज।

२. मैं इसके लिए सर्वांग रूपेण प्रस्तुत हूँ महाराज ! यज्ञ के लिए क्या दक्षिणा देनी होगी, आज्ञा करें।

'तो' आनामाटे केवो दिवस शुभ रहसें महाराज, हुं तो दक्षिणा साथे लेती आवी छुं । स्वीकार करो ।'[१]

'ना रे ना इन्दू, हम तो अनासक्त, स्थितप्रज्ञ सूक्षम आत्मा, साधु-संन्यासी ठहरे, कंचन-कामिनी से परहोज करते हैगें फिर भी अपने भक्तो के 'परित्राणाय' स्थूल शरीर धारण कर समय-समय पर 'धर्म-सस्थापनार्थाय' मृत्युलोक मे अवतरित होते हैगे । जा, अन्नपूर्णा देवी को शुद्ध भाव से दक्षिणा अर्पित कर आ, तत्पश्चात् 'पुत्रेष्टि-यज्ञ' सम्पन्न करना होगा भगवती !'

इन्दु बेन कुलकती हुई हस्त कौशल से बने कीमती वैनिटी बैग से एक हजार एक रुपये की दक्षिणा निकालकर अन्नपूर्णा देवी की ओर गई । वह अभी शुद्ध भाव से दक्षिणा अर्पित कर ही रही थी कि स्वामी जी ने उसे संकेत से मदिर के बगल वाले 'सहेट स्थल' मे बुला लिया । कटीली-केवडई ऊँचाइयो पर स्वामी जी के श्मश्रु-जाल का बन्दनवार तना हुआ था और इन्दु बेन की गहगही सिसकियो से 'पुत्रेष्टि यज्ञ' सविधि सम्पन्न हो रहा था । इन्दु सोच रही थी कि 'मध्य अप्रैल से लेकर पद्रह अक्टूबर तक का समय' सचमुच मनोकामनाओ की पूर्ति करने वाला होगा ।

'आफिस' करने मे 'बेशी टैम' लग जाने के कारण आज स्वामी जी मध्याह्नोत्तर आई अन्य भगवतियो को सम्बोधित नही कर सके । सेठ छगन मगन लाल की चर्चा से प्रभावित होकर शाम को तजेबी धोती भाँजता हुआ दाँतो का नकली सेट लगाये वेदान्ती मुन्शी मनसुख-लाल ओफ-ओफ करता 'कछु मारे कछु जाय पुकारे' की गति से स्वामी जी की सेवा मे अमित-श्रद्धाभाव से उपस्थित हुआ । उसके निचुडे चेहरे पर एक अजीब किस्म की चिन्ताकुल हवाइयाँ उड रही थीं । नियमित रूप से समाचार पत्रो का अवलोकन करने वाले स्वामी जी ने

---

१. तो इसके लिए कौन सा दिन शुभ होगा महाराज, मैं तो दक्षिणा साथ लेती आई हू । स्वीकार कीजिये ।

आज प्रात.काल 'आपत्ति पर आपत्ति' शीर्षक से यह समाचार पढा था कि जगत-प्रसिद्ध सिने-संवाद लेखक मुन्शी मनसुख लाल विश्वकर्मा के साढे चार वर्षीय सुपुत्र का परसों तीन दिन के साधारण ज्वर से देहावसान हो गया और कल शाम एक्सीडेण्ट से मुन्शी जी बाल-बाल बचे।' मुन्शी जी आते ही बदहवास से स्वामी जी के चरणो मे लकुटवत् लोट गये। स्वामी जी ने चश्मे के नीचे दबी कनखियो से मुन्शी को पहचान कर पुलकित चित्त से आशीर्वाद दिया। अभी तक इक्के-दुक्के भगत लोग ही आ सके थे। सक्षिप्त परिचय के अनतर मुन्शी ने अपनी हथेली सगमर्मर के पीढे पर टिका दी।

स्वामी जी छूटते ही बोले: 'घनघोर कलियुग, मारकयोग चल रहा है तेरे पै बछडे। बदलती रेखायें नरियाती हैगी कि अभी-अभी तूने अपना-पुत्तर खोया हैगा, मरने से तू ख़ुद बाल-बाल बचा हैगा।'

'हाँ दीनानाथ! परसो मेरा बेटा जाता रहा और कल एक सीरियस एक्सीडेण्ट होते-होते बचा।'

'अरे बछडे! अभी तो श्रीगणेश हैगा, ला नेक बाईं हथेली दिखा। तेरी राशि का स्वामी बुध यानी मरकरी है। भगत तेरी रेखायें बड़ी काइयाँ, चालबाज दीखती हैगी। भले-बुरे किसी भी तरीके से तेरी रुचि पैसा कमाने मे रहती हैगी, पैसे के खातिर तू किसी का गला तक घोंट सकता हैगा बछड़े, तुझे मानवीय-मनोविज्ञान का नैसर्गिक रूप से अच्छा अनुभव हैगा, इस्से तू महान लेखक या सफल व्यापारी भी बन सकता हैगा। छिः छिः छि. यौन सम्बन्धो मे तू दूसरी योनि के प्रति जबरदस्त आकर्षण रखता हैगा। चटक-चोखी निम्नवर्गीया महिलायें तुझे विशेष प्रिय हैगी, रसिक नटनागर।............

हाँ बछडे, यह जो तू उदय होती हुई कटी-फटी रेखा देख रहा हैगा, यह दुर्भाग्यनीता भाग्य-रेखा आगामी कष्टदायक जीवन की सूचिका हैगी, यह विसूचिका भी ला सकती हैगी। इस पर उपस्थित द्वीप, भाग्य की रुकावट या किसी असंभावित आपत्ति के विधायक हैगे।

जीवन रेखा के अन्दर से अतिक्रमण करती हुई शनि रेखा को छूने वाली रेखायें भाग्योदय में पड़ने वाली कठिनाइयों एवं अनिष्टकारी मारक योग की सूचना देती हैंगी । लहरोली शनि देखा हर क्षण बदलती हुई जीवन-दिशा की संकेतिका हैगी ।'

त्रिकालज्ञ दर्शी स्वामी जी से मारक योग की अशुभ सूचना सुनकर मुन्शी को जैसे साँप सूँघ गया। वह अपने पुत्र की मृत्यु और स्वयं के एक्सीडेण्ट का दिव्यदृष्टि-दर्शी हाल सुनकर स्वामी जी के प्रति प्रगाढ़ आस्थाशील हो चुका था अतः बड़ी दयनीयता से घिघियाता हुआ चरणो पर न्यौछावर हो गया और बोला : 'तो इस मारक योग को काटने के लिए कोई उपाय भी बताइये दीनबन्धु गरीब निवाज !'

'बछडे ऐसा-वैसा मारक योग नही, बडा 'प्राक्रमी' है, गृहस्वामी के प्राणो पर झूलेगा ।'

'(बाप रे, मैं तो बेमौत मरा)'

'हाँ बछड़े; इसके लिए तुझे पक्के इक्कीस दिन तक एक सौ श्रोत्रिय शुचि ब्राह्मणों द्वारा मृत्युंजय जाप सम्पन्न करवाना होगा फिर पाँच सौ मूर्तियो को वृहत् भडारा देना होगा, साथ ही एक लोटा, एक थाली और एक रेशमी दुकूल दक्षिणा के रूप मे अर्पित करना पड़ेगा; तब कही जाकर तेरा मारक योग नष्ट होगा अन्यथा शिव शिव शिव .....।'

स्वामी जी की बात समाप्त होने के पूर्व ही मुन्शी ने जबानी हिसाब-किताब लगा लिया था कि दढियल ने बारह-तेरह हजार की चपत बैठे बिठाये लगा दी अतः चरण चापन कर बोला : 'इससे कम मे कोई दूसरा तरीका नही है प्रभु !'

स्वामी जी अद्वितीय शैली मे बमक उठे : 'जैसे तू काइयाँ चाल-बाज है, वैसा ही सारी सृष्टी को देखता हैगा। धर्म कर्म के क्षेत्र मे भी तू 'शार्टकट समाधान' चाहता हैगा बछडे; पैसे कौडी के पीछे तू अपने अमूल्य प्राणो का भी मोह छोड बैठा रे ।'

'महाराज ! कुछ कम में निपटे तो निपटा दीजिये, वैसे ही स्साली फिल्म इंडस्ट्री की बधिया बैठती जा रही है ।'

'बछडे ! अब कौन तेरी नई कहानी वाली तस्वीर आ रही हैगी, हम तो ऐसी छिछोरी दृश्यावली गीतावली देखै नाहिं, एक बार अवश्य 'पूरन भगत' देखिबे को अपने शिष्य श्यामल श्यामल बरन के आग्रह से चले जाते रहे हैगे ।'

'महाराज ! 'फुदकती मैना ।'

'धन्न है रे बछडे ! कितने गत्यात्मक सौंदर्य की सूझ-बूझ से नाम-करण संस्कार किया हैगा ।'

'हाँ महाराज ! कुछ कम मे ।'

'क्या 'कम कम' की रट लगाये हैगा बछडे : आयेगा आने वाला : कौन ? मारक योग, और अगर चालबाजी से 'शार्टकट' पकडा तो तुझे छोडकर मारक योग तेरी भगवती पर चढ़ बैठेगा । समझे ।'

'तो फिर कुल कितने का 'हवन' करना पड़ेगा प्रभुवर !'

'हाँ, ऐसी आस्तिक शब्दावली बोल, स्वय जोड़ ले वत्स, इन सब कामो मे तो तू पूर्ण परिपूर्ण है, रेखायें कहती हैगी ।'

'महाराज ! कुल साढे तेरह हजार के आस-पास, लेकिन इतना सारा कैसे…?'

'तो किश्तो मे अदा कर देना बछडे, आजकल सब जगह किश्तबाजी ही तो चलती हैगी, देख कल क्या नाम से शनिच्चर हैगा । कल से तेरे नाम के जप का श्रीगणेश हो जाना चाहिये । कुल बीसेक किश्तें हुईं, क्यो न भक्तराज ? कल प्रातः काल भूसुरों को बुलवाना पडेगा । तू सपत्नीक सदेह उपस्थित होके अन्नपूर्णा जी के चरणो मे पहली किश्त चढा जइयो । हम साधू-संन्यासी कंचन-कामिनी से परहेज करते हैंगे ।'

इस प्रकार सितारो के चक्कर से कैलासधाम-निवासी स्वामी पूरनानन्द उर्फ गीतकार पूनम ने मुन्शी मनसुखलाल विश्वकर्मा से

'फुदकती मैना' के दस सहस्र रुपये मय चक्रवृद्धि-ब्याज से पाई-पाई भुगतान करवा लिया और कनफटी मुन्शियाइन सहित मुंशी द्वारा इक्कीस दिन तक बडे नेम-प्रेम से की गई चरण-चम्पी फोकट मे।

'मृत्युजय जाप' सविधि सकुशल समाप्त हुआ। भुक्खड़ भूसुरों और फुटपाथी फटीचरो द्वारा की गई स्वामी जी की जय जयकार से कालबा देवी का कोलाहल कुछ दिनो को दब सा गया। तीसवें दिन स्वामी जी ने परम अर्थ खाते मे जमा होने वाली सुश्री अन्नपूर्णा देवी द्वारा प्रदत्त धर्मादा सम्पत्ति का रोकड मिलाया : पूरे तैंतालीस हजार। इनमे दस हजार 'फुदकती मैना' को स्क्रिप्ट के बिल्कुल 'अछूते' थे, अव्यय-साध्य, हलाल के। तीन हजार जय जयकार खरोदने मे खर्च हुए। कितने बचे ? नेट इनकम तीस हजार यानी एक हजार डेली, इसमे भोगराग, द्राक्षारस-पान, और आँचल-प्रक्षालन आदि की अतिरिक्त आय नही जोड़ी गई, इसको मद्दे नज़र रखेंगे। और दूसरी तरफ आधे सरग में टँग-कर पूरे आठ दस घण्टे पोस्टर चिपकाने के बाद पूरे महीने मे पद्रह दिन का 'बोनस' काटकर महज पैतालिस रुपये। स्साला, हरामी का पिल्ला की मुफ्ती डिग्री और सरफुटौव्वल चक्कूबाजी के तमगे अलग से। धत्तेरे मेहनत मशक्कत की।

इस प्रकार तीस दिन तक मुम्बई की रंगभीनी अट्टालिकाओं में धर्म की ध्वजा फहराकर कैलासवासी स्वामी पूरनानन्द जी अपने पुश्तैनी भगत श्री पोपट लाल चोपट लाल से बोले : 'भो वत्स ! कल ब्रह्म महूरत मे हम 'सूक्षम' शरीर से कैलासपुरी को 'फलाई' करेंगे। कल रात सपन मे वीरभद्दर बुलाने आया था, बम्भोले के नवजात पुत्तर का जलसा हैगा। लो, असली बरफ छाप भभूती ताबीज मे भरकर घर भर के गले मे लटकवा देना। अला-बला, सी० आई० डी० और इनकम टिक्कस वालों की कातिल-निगाहों से सारी जिन्दगी बेदाग़ बचे रहोगे और यह रही नकली—असली से भी उजली, चमकदार और देखने में अपटूडेट असरदार। चाहो तो वक्त ज़रूरत पर 'न नर्स हूँ न डाक्टर'

का अलानियाँ एलान करते हुए भी अपनी परम पियारी बहनों का भला कर सकते हो सिरफ सात रुपये चौदह आने का पैकेट वी० पी० से भेजकर। बछड़े! दवा तेरी दुआ मेरी। ''अच्छा, अब हमारा पुष्पक 'फलाई' करने वाला है। जियो!'

दूसरे दिन अलार्म के ज़रिये ठीक टाइम पर जगकर पूरन-भगत पोपट लाल चोपट लाल ने देखा कि अन्नपूर्णा देवी के गोल्डेन टेम्पुल को फोल्ड कर होल्डाल में चुपके से डाल स्वामी पूरनानन्द जी महाराज आई० जे० के० एल० एम० (इंडिया) 'सूक्षम' शरीर से 'फलाई' कर गये हैं।

●●●

●● ये जाम छलके छलके

वी० टी० पहुँचकर स्वामी जी ने सबसे पहले अमेरिकन बाब्ड हेयर कटिंग सैलून में अपनी भवरोगनाशिनी गलमुच्छी दाढ़ी मुडवा डाली और घुँघराले बालो को छँटवा दिया। फिर 'चाइनीज मसाज एण्ड बाथ विला' में घुसकर ठिगनी ठस छोकरी से हल्की-हल्की उत्तेजक मुक्कियाँ लगवाईं, मालिश करवाई, फुहारे के नीचे बैठकर टब-बाथ लिया और बन-सँवरकर बतौर मालिश के मेहनताने के दस-दस के दो नोट हवा मे उछालते, टा टा के साथ साथ टैक्सी वाले को पुकारते, टकराते सड़क पर आ छलके और 'लन्दन लकी स्टोर' पहुँचे। एक साँस मे आधी दर्जन बोस्की और टैरलिन की कमीजें, चार अदद शार्कस्किन के सूट, तीन चार मनीला बुश्शर्ट, आधी दर्जन गोल्डन-सिल्वर ब्रोकेड की कीमती फ्रॉकें, अनगिनत साड़ियाँ, ब्लाउज, छरहरी टाइयाँ, जुर्राबें, स्कॉर्फ, सेंडिल, जूते और देशी-विदेशी शराब के पैकेट बँधवाये। लेडीज कॉरनर मे जाकर बेसिक ब्यू, ब्लूम, फ्लेटर ग्लो, हेयर शम्पू,

मैटरकल पाउडर, क्लीन्सिंग क्रीम, स्किन टॉनिक, एसट्रिन्जेंट लोशन, लैकर स्प्रे, पिंकी ड्राई रूज, फायर एन्ड फ्रास्टेड ग्रारेंज लिपस्टिक, ग्राइ-ब्रो पेंसिल, मसकारा और दर्जनो तेल-तर्रार विदेशी सेण्ट और अल्लम-गल्लम की चीजें खरीदी। तत्पश्चात् प्राइवेट रूम मे श्री श्री १०८ स्वामी पूरनानन्द जी को पंचतत्व मे मिक्स्ड कर के सूटेड-बूटेड झूमते-अकडते बाहर निकले। कर-कमलो मे मार्कोपोलो का चमकदार टिन चमक रहा था। सिग्रेट होल्डर को बडी लापरवाही से दाँतो की उपान्त-रेखा के समानान्तर अधरोष्ठो मे भीचे कैशियर के मुँह पर छल्लो के गुबार छोडते श्रीमान् जी ने दो हजार पाँच रुपये दो नये पैसे का कैशमीमो लिया। दो हजार दस रुपये निकाले और बाकी लौटाये गये खुदरे स्टोर के सर्वेन्ट को शान के साथ टिप किये। टैक्सी पर उससे सारे पैकेट रखवाये और तरबतर दादर पहुँचे। सारा समान पटककर उन्ही कदमो तूफानी रफ्तार से मैरीन ड्राइव को रवाना हो गये। सेठ छावड़ी-वाला कॉरीडोर पर बैठा अपने मुनीमो से घपले वाला हिसाब-किताब समझ रहा था। कोठी पर एक अजीब सूनापन पतझर की अन्तहीन शाम के घुँधलके सा छाया हुआ था। जैसे सुलोचना की अतृप्त आत्मा पूरे माहौल पर मँडरा रही हो। सेठ कुछ ऊँचा-नीचा देखने के कारण पूनम को पहले न पहचान सका लेकिन उन्होने स्वय पिछले संदर्भ-सूत्रों को जोड़कर अपनी वर्तमान गतिविधि बतला दी कि फिलहाल मेरा इरादा तो 'जिस देश की धरती सोना है' फिल्म बनाने का है। टैक्सी, कीमती कपड़े, हाथ मे मार्कोपोलो का टिन, सेन्ट की झकझोरती लपटें इन सबने साजिश करके सेठ की खुर्राटी अकल को बरगला दिया। छावडीवाला लटपटाते हुए रुँधे कंठ से बोला :

'मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूँ? आज्ञा दीजै श्रीमान्!'

'आज्ञा नही, गुजारिश है गरीबपरवर!'

'बोलिये, बोलिये ना सरकार!'

'हुजूर ! इस वक्त मै दादर मे रह रहा हूँ लेकिन जगह की बडी किल्लत है अगर······'

'हाँ, हाँ शौक से आइये कृपानिधान, इसमें पूछने की क्या बात है ?'

'तो तो अगर इसका रेण्ट बता दें तो बड़ी दया होगी दयानिधान !'

'अरे एडीटर साब, जो अपन मर्जी में आवै दे दीजियेगा, आपको जब देखता हूँ तो मुझे मेरी सल्लो याद आ जाती है।'

'अब उनकी चर्चा न कीजिये मेहरबान, हाँ ये लीजिये एडवास चार सौ, ठीक है न ?'

'अरे रे इतनी जल्दी क्या है ?'

'देना तो है ही, मेरे पास न सही आप के ही पास पडे रहेगे। देखिये, कल सुबह तक आऊँगा, फ्लैट जरा खुलवा दीजियेगा।'

'आवश्यम् आवश्यम्।'

पूनम जी उसी टैक्सी से उल्टे पैर दादर लौट आये। उतरे। टैक्सी काफी देर से थी। ड्राइवर ने मीटर देखा।

'सेठ ! सिरफ अड़तीस रुपये।'

धन्नासेठ दस-दस के चार नोट बढाकर ऊपर चढ गये। बाद मे ड्राइवर सलाम के साथ दो रुपये लौटाकर लौट आया। घर क्या बन गया था—फैशन ब्युटी परेड का ग्रीन रूम। शकुन्त बडी-बडी आँखो से कमरे मे बिखरी ढेर सारी चीजें देख रही थी जैसे कह रही हो कि इत्ता सारा सुख मै अकेले कैसे झेल सकूँगी ! रूबी बच्चो की तरह कुलक-कुलक कर पूनम जी के सूट और शर्ट वार्डरोब मे टाँग रही थी। शाम का स्पेशल खाना 'अन्नपूर्णा' से मँगवा लिया गया। खा पी चुकने के बाद पूनम जी ने कल सुबह मैरीन ड्राइव शिफ्ट करने की बात दोनो के सामने रखी। लेकिन रूबी किसी तरह से भी बीस साल पुराने बाप-दादो के जमाने वाले इस मकान को छोड़ने के लिए राजी

सीधा समझाकर पूनम ने मैरिन ड्राइव शिफ्ट करने के लिए तैयार कर लिया। सुबह ट्रक आया और सारा सामान लादकर ले गया। टैक्सी से तीनो नये घर पहुँच गये।

इधर पूनम जी न कुछ करते हुये भी अब काफी व्यस्त रहने लगे थे। कम से कम चाल-ढाल और अन्तराल देकर बोली जाने वाली बात-चीत से तो ऐसा ही जाहिर होता था। नहा-धोकर सुबह-सुबह घर से निकल कर टैक्सी ले लेते। ब्रेकफास्ट 'मिनर्वा' मे तो लंच 'ताज' मे और डिनर 'क्वालिटी' या 'अन्नपूर्णा' मे। बडी शान से 'अमेरिकन-फ्री लाइफ' बिता रहे थे। दूसरों पर अपनी सम्पन्नता का सिक्का जमाने के लिए इस नकली जमाने मे कनखियाँ मारती एक कार का होना निहायत जरूरी है। कार के बिना सब कुछ बेकार। डाज या शेवरले न सही, चौदह-पंद्रह हजार मे एक अम्बेसडर तो मजे. मे खरीदी ही जा सकती है। देअरफोर पूनम जी ने बिना सोचे-बिचारे पंद्रह हजार का चेक काटकर एक कुँवारी अम्बेसडर रातो रात खरीद डाली। और बिना किसी जरूरत के यहाँ-वहाँ होटलों, बारहाउसो और स्विमिंग-पूलों पर 'दिल फेंक' पार्ट प्ले करते हुए तफरियाते फिरे।

एक दिन 'ताज' मे लंच लेते-लेते अचानक यह ख़्याल आया कि अपने बीते हुए को महज थोडी देर के लिए वर्तमान पर खीच लाना क्या बुरा है? सिरफ इसी भावुकता के कच्चे धागे मे बँधकर पूनम जी पूरे पाच हजार डालकर सेठ पोपट लाल के कलित क्रीड़ाक्षेत्र मे पहुँच गये। वहाँ बहुत से 'पोपट लाल' जमा थे और रोज की तरह सब काम धंधा बदस्तूर चल रहा था। आखिर एक वर्ग विशेष का एकलौता धंधा जो ठहरा। पूनम जी ने नई कार की चमचमाहट से चौंधिया कर झोंक में एक साथ पाँच हजार 'सुग्रीव' नाम के घोड़े पर लगा दिया और घण्टे भर में पक्के पाँच हजार फूँक-तापकर चरणदास के चेले बनकर घर लौटे। तेरी कमाई कि तेरे बाप की कमाई। (बहरहाल अब साले कभी इधर न आना) उन्होंने एकान्त में जाकर अपने ही हाथ से

अपने गालो पर झनझना देने वाले करारे पाँच जोड़ी तमाचे लगाये। सौ तक गिनती गिनते हुए 'सप्तताल' के नीचे जहाँ कभी पद्मासन लगाया था, ऊठक-बैठक की। फिर धर्मराज से अपनी तुलना करते हुये शकुन्त के बारे मे सोचते तनिक-तनिक खुश बहुत-बहुत ग़मगीन घर लौटे।

सुबह नये सिरे से पूनम जी उठे। ज़माने की गर्दिश को देखते हुये प्लान बनाकर खर्च करने की सोचते-सोचते 'रगवाणी' पहुँचे। 'फुदकती मैना' की भागमभाग शूटिंग चल रही थी। काजीवरम् और शलवार को एक्स्ट्रा छोकरियो के गोल से हटाकर एक टिकने वाला रोल दे दिया गया था। पूनम जी शार्कस्किन के सूट मे लहराते मार्को-पोलो का टिन दबाये सेट पर दाखिल हुए। मुन्शी जी के 'मदन-सदन' वाली शलवार आज भी पूनम जी की ओर बडे इतमीनान से अपनी कटावदार बडरी अँखडियों से भूखी-भूखी ताक रही थी।

'कौन जाने 'य तबस्सुम य तकल्लुफ़ तेरी आदत ही न हो' पर यार है मुई बडी जोरदार।'

मुन्शी अपने खुतरी जिल्द वाले तिकोनियाँ चेहरे पर मनहूमियत पोते एक सोफे पर बैठा जम्हाइयो पर जम्हाइयाँ तोड़ रहा था और एक टेढी गर्दन वाला गन्दी अंडरवियर बनियाइन पहने खुस्कैट छोकरा उसकी चाँद की साइंटिफिक मरम्मत करते हुए जोरशोर से जानीवाकरी स्टाइल मे तबलिया रहा था। पूनम जी को इस बन्नक में देखकर गीत-कार साजन बालूशाही और नचनियाँ चम्पा लाल गोश्त पर चील्ह जैसे झपटे और टिन खीचकर कश खीचने लगे। डाइरेक्टर विजय सितारिया और रवि जी जैसे के तैसे बैठे रहे। थोड़ी देर के लिए शूटिंग रुक सी गई। पूनम ने रवि जी के पास पहुँचकर विनम्रता से नमस्कार किया। रवि जी पूनम के चिकने कन्धे पर हाथ फिराते हुये बोले : "कहो भाई! मजे में हो! कहाँ रहे इधर, मिले नही?'

'जी अपने देश चला गया था। दा, वहाँ एक लाटरी जीती मैने पूरे चालिस हजार की।'

'पूरें चालीस हजार' की भनक कान मे पडते ही मुन्शी जम्हातें-जम्हातें पूनम के पास खिसक आये और विजय सितारिया चुटकी पर चुटकी बजाते हुए अपना गम गलत करने लगे। गीतकार पूनम हिप हिप हुर्रे, हिप हिप हुर्रँ, हिप हि···प···। पूनम जी ने लडकियो के झुंड की ओर नज़र फेकी। शलवार अब भी उसी तरह से ताक रही थी। गीतकार ने 'फुदकती मैना' की पूरी यूनिट को अपने निवास स्थान मैरिन ड्राइव पर शाम को डिनर के लिए इनवाइट किया। मुन्शी मनसुखलाल विश्वकर्मा पूनम जी से अकेलें मे मिलने की तमन्ना लिए टहलतें रहे लेकिन आज उन्हे कत्तई लिफ्ट नही मिली। पूनम जाते-जातें शलवार के कन्धे को थपकिया कर अगिया बैताल मुन्शी को कुढातें अम्बेसडर से एक दो तीन हो गये। शलवार के इर्द-गिर्द की साडियाँ फरफराकर पल्लू ढलकाती उसे ठुनकियाने लगी।

मेजो पर उम्दा चीजें बेहतरीन तरीके से सजी हुई थी। 'मेनू' बडा तगडा था। सब लोगो ने कैटरर 'क्वालिटी' को मन ही मन तारीफ करते हुए एपीटाइजर घूँटकर नैपकिन खीचा और चुहल करते हुए खूब छककर खाया। आइसक्रीम तो सचमूच शिमले की बर्फ थी। रूबी इठला-इठलाकर 'सर्व' करने की ताकीद कर रही थी। मान-मनुहार से इसरार करते हुए लोगो को खिला-पिला रही थी। विजय सितारिया पर उसकी खास नज़र थी। उसने आँखो-आँखों मे उस दिन की गुस्ताखी के लिए मुआफी भी माँग ली और इसी बात पर सितारिया ने रूबी को आज लगे हाथ 'अजन्ता' मे होने वाले 'टैंगा' डास का एक इनविटेशन भी दे डाला। ओक्के डाइरेक्टर। उस दिन मुंशी का ब्लड प्रेशर अचानक बढ गया था इसीलिए वह इस शुभ अवसर पर नदारत था। किसी ने खास नोटिस भी नही ली। डिनर खतम होते-होते एक बेयरा शलवार के कान में चुपके से कह गया—मेम साब, साब रुकना बोलता।

चम्पा लाल को पूनम ने पहले से हीं रुकने को बोल दिया था। शलवार के कूल्हे पर ठोका मारती, शरारत भरी मुस्कानो का फेन चुम्राती उसके साथ की सारी सहेलरियाँ ग्रौर यूनिट के लोग पूनम जी की तारीफ के 'डैम' बनाती रुखसत हो गये। सब के जाने के बाद प्रोड्यूसर पूनम डास-डाइरेक्टर चम्पालाल ग्रौर शलवार को समेट कर लान के दूबिया गलीचे पर बैठ गये। धुँधलका गहराने लगा था। ग्राकृतियो की रेखायें गड्ड मड्ड होने लगी थी। कॉरीडोर मे लगे दूधिया ट्यूब से उफन-उफन कर बहता प्रकाश दूब की नोको पर टिके जल-बिन्दुग्रो पर एक खुशनुमा फोकश डाल रहा था।

'क्यो जी, क्या नाम है तुम्हारा ?'

शलवार के होठो की हरकत से पेश्तर ही नचनिया चम्पालाल थिरकते हुए बोला : येश् बॉस गुड्डो सेठ। डास मे ग्रपन-गुड्डी चागला इनटेलिजेण्ट छोकरी हाय। कोबरा मे तो इसका ज्वाब नही। कूल्हे की एक एक थिरकन मीन्स हजार हजार तालियो की गडगडाहट, व्हिसिल, ग्रौर बल्लो बल्लो।

बस्ताद चम्पालाल इस बाजू गुड्डी के कूल्हो की एक्टिंग दिखा-दिखाकर डास को 'हिटिया' रहा था ग्रौर उस बाजू गीतकार पूनम ग्रपनी भूलो-बिसरी कडियो मे फ़िराक साहब को दुहराता हुग्रा सिर-चढ़ी 'संगत' से साठ-गाँठ कर रहा था :

> कानों की लवो का थरथराना कम कम
> चेहरे के तिल का जगमगाना है ! है !

ग्राज सचमुच बहुत दिनो बाद पूनम को उफनाने का मौका मिला था। ग्राज उसे रह-रहकर बुरी तरह से सुलोचना याद ग्रा रही थी। सामने जब चुलबुली चहेती के चेहरे का तिल टिमक रहा हो, जेब मे खनखनाहट खदबदा रही हो (क्योंकि मित्र; सारे विरह गीत भरपूर 'तरी' म ही लिखे जाते हैं।) तब उमड़ते सैलाब को कौन रोक

सकता है ? वस्ताद चम्पा लाल के 'गुरू' फिर नकियाते हुए शलवार से 'सत्संग' करने लगे :

दिन भर तो रहे हो फूल बन के मेरे साथ
अब बन के चिराग जगमगाओ ऐ दोस्त

आखिरी लाइन सुनकर जब चम्पालाल चिराग़अली की स्टाइल मे एक फूहड पोज दिखाने लगा तब पूनम जो भी शर्मो-हया को पर्स मे रखकर कूक पडे :

बहुत ही ख़ूब है दोशीज़ा हुस्न का आलम
अब आ गये हो तो आओ, तुम्हे खराब करें

वल्लाह, क्या नेक तबीयत पाई है उस्ताद ने। इसे कहते है शायरी चम्पा। चम्पालाल ने शायरी से ज्यादा प्रोड्यूसर पूनम की तारीफ की। शलवार की कटावदार झील मे भी पुरलुत्फ तारीफ के लज़ीज़ लच्छे छलकते नज़र आये। शेरो-शायरी के बाद काम-काज की बातों का सिलसिला चला :

'यार चम्पा ! तो तू फिर बनायेंगा फिलम।'

'व्हाई नाट बॉस, हमारा बॉस क़िहानी-गीत लिखेंगा, डाइरेक्ट करेंगा, रवि दा धुन देंगा और हम डॉस डाइरेक्ट करेंगा।'—जैसे बॉस के दिल की बात छीनकर चम्पालाल बोला।

'लेकिन नवा-नवा हीरो-हीरोइन कदी सूं आई गा।'

'येश् बॉस, इस बाजू ने अपन अबी सोचा नई, ये अपन गुड्डी कईसा रहिंगा बॉस।'—गंजी खोपडी खुजलाते चम्पालाल बोला।

'यार, अकेला गुड्डी से किया होई गा, इसे तो हम एक तगड़ा रोल देंगा पर और भी चाहिये न ताजे नमकीन चेहरे।'

'तो तां बॉस शमीम से बात करिंगे या विनाका माला से।'

'यार, मैं तो सोच रहा हूँ कि क्यो न एक आल इंडिया ट्रिप लगाई जाय, बाडी टेस्ट बी हो जाई ंगा और न्यू सर्च भी।'

'वंडरफूल ग्राइडिया बॉस'—कहकर चम्पा पूनम के पैरो पर गुडी-मुड़ी लुढक गया।

'तो फिर कल 'जिस देश की धरती सोना है' के लिए 'नये चेहरे चाहिये' का एडवरटीजमेट तमाम अखबारो मे दे दिया जाय ?'

'ह्वाई नाट बॉस ?'

'वेल, गुडनाइट मिस्टर चम्पालाल !'

'हे हे गुडनाइट बॉस, येश् गुड्डी कम ग्रान।'

'ग्रबी गुड्डी रुकेंगा डियर चम्पा लाल !'

'सत बचन बॉस ! बाय बाय !!

'यार गुड्डी ! तुमने तो कुछ भी अपनी राय दी नहीं, चाकलेट चूस रही थी क्या ?'

'मैं क्या देती जी, मेरे पास देने लायक है ही क्या जी ?'

'नईं नईं यू ग्रार भेरी भेरी इनटेलिझेण्ट गिर्ल, ग्राई रिकग्नाइज़ यू।'

'जी शुक्रिया।'

'तो इस ख़ुशी के चन्द लमहे चलो ग्राज 'अजन्ता' मे गुजारें गुड्डी !'

'अजन्ता' मे ग्राज 'टैगा' डास की रगारंग धूम थी। बहुत सारी रंग-बिरगी दूकानें, जिन, रम, ह्विस्की, लेमन, कोकाकोला की कतारें। चारो ग्रोर लकदक करती एक अच्छी खासी फैशन परेड। हाल के एक किनारे साढे चार फीट ऊँचे डायस पर ग्रारकेस्ट्रा वादकों का एक झुण्ड टिनोपाली झलकियाँ फेंक रहा था ग्रौर काली 'बो' लगाये एक भरापूरा ग्रमेरिकन जवान क्लैरनेट पर बाब मेरिल का 'चीकी चीकी हूपला हूप हूप हूप' की मासल धुन बजाता हुग्रा जोडो' को गाइड कर रहा था। डास मे हिस्सा लेने वाले शौकीनो द्वारा टिकटो की बिक्री जोर-शोर से हो रही थी। पूनम ने भी एक एक रुपये के पचास टिकट ख़रीद लिये। क्लैरेनेट की तीखी-बलखाती उर्मियो के साथ चुस्त-लम्बी फ्राकों

में कसी क्रैपसोल वाली कसीली-गोरी पिडलियाँ और संदली बाँहे थिरकने लगी। विदेशी गन्ध का विस्फोट करते, स्वर और लय की गति मे बहते हुए बेझिझक जोडे एक अजीब समाँ पैदा कर रहे थे। लोमश वक्षो के दबाव से छतनार गुलाब और कचनारी देहे दहक-दहक उठती थी। हर नाचने वाला एक को छोडकर अपनी पसन्द के दूसरे 'पार्टनर' की तलाश मे था ; उबलते जिस्म मे शबनमी तरावट पाने के लिए, जलते-झुलसे होठो की छटपटाती आँच को आबेज़मज़म का सुकून देने के लिए। हर हसीन रक्काशा ज्यादा से ज्यादा टिकटें बटोरकर अव्वल आने के लिए ख़्वाहिशमन्द थी। इसलिए जब कोई मेल पार्टनर के कन्धे पर हौले से हाथ रख देता तो नये पार्टनर से टिकट पाने की लालच से नाचने वाली को मन या बेमन से हटना पड़ता। पूनम ने गुड्डी को कितनी बार पाया, कितनो बार खोया और न जाने कितनी गुदगुदी-छरहरी बाँहो और रूखे-चिकने बालो से निथरती हुई किसिम-किसिम की ढीठ गुमसुम ख़ुशबुओ को भरपूर पिया। हल्की लिपस्टिक लगाये पालिश्ड मुस्कराहटो की पखुडियाँ भरपूर चूमी। यह भी एक अजब इत्तिफाक था कि 'टैंगा' डास की कशिश से खिचकर आये हुये बहुत से जाने-पहिचाने चेहरे उसे यहाँ दिखाई पडे। रूबी को बाँहों की गिरफ्त मे कसे हुये विजय सितारिया, दरवाजे का पर्दा हटाकर उबलते मुहासो वाली दिल फरेब छोकरी के साथ केबिन में दाखिल होता हुआ लड़खडाता रुस्तम चन्दानी और 'डेलिकेट स्टैपिंग' करने वाली नाज़ुक गुडिया के साथ एक 'नीग्रो'। थोडी देर के लिए सैलाब थमता, छलकते जाम टकराते और फिर दूनी तेजी के साथ फर्श पर 'सोल-संगीत' मचलने लगता। एक संड-मुसड रिछैले हाथ ने सितारिया के कन्धे को थपथपाया और रूबी अब उसके आगोश मे इठलाने लगी। थोड़ी देर मे एक दूसरा पेयर आया और उसने अपने हमदम का साथ छोड़कर अकेली खड़ी गुड़िया को बाँहो में भीच लिया। रिछैली बाँहो की गुंजलक में घुटती सी रूबी के पास से अपने मेल पार्टनर के साथ 'क्लैश'

करती गुडिया गुजरी। यादो के दायरे सिमटे। याददाश्त की परछाइयों की धुन्ध साफ होती गई। रूबी बाँहो की गिरफ्त से छटपटाती निकली और गुडिया से लिपट गई। बहुत दिनो की बिछुरी दो फाख्तायें एक दूसरे से गुँथकर गुफ्तगू करने लगी।

'ओ माई स्वीटी! कौन उडा ले गया था तुझे—' रूबी ने पूछा।

'चुप चुप डार्लिङ्ग, देखती नही मकसूद साब खडे है।'

'कौन मकसूद री खिलन्दडी!'

'मेरे खाविन्द, हाय अल्ला मोहे शरम लागे है री।'

'चल हट्ट मुई।'

और फिर दोनो गुइयाँ एक मखमली सोफे पर धँस गईं। नसीम अपने गुलाबी गालो पर लाज के साये थिरकाते, मकसूद साहब की ओर कनखियो की हिचकियाँ छलकाती सारी कच्ची-पक्की बातें रूबी को सुना गई। पाकिस्तान के एक बहुत बडे कारखाने के इजारेदार। पिछले महीने उसके शौहर ने कहाँ-कहाँ की सैरें नही करवाईं उसे। किस तरह कश्मीर की रंगीन वादियो और पानी पर तैरते सिकारों में नसीम ने अपनी सुहाग रात 'वैराइटी इन्टरटेनमेट' के साथ मनाई। नसीम अपनी बात की धुन मे रूबी से उसके बारे में कुछ पूछना भूल ही गई। मकसूद साहब के बुलाने पर जाते-जाते इतना जरूर बता गई कि अपने खाविन्द के साथ दो चार दिनो में ही वह पाकिस्तान चली जायगी अगर इस बीच इंशाअल्ला मौका मिला तो अपनी प्यारी आया से मिलने वह दादर खुद बखुद चली आयेगी वैसे खत-किताबत के जरिये तो हर हफ्ते अब उससे जरूर-जरूर मिला करेगी। जल्दी-जल्दी मे रूबी उससे यह बताना भूल गई कि मैं अब दादर से मैरिन ड्राइव शिफ्ट कर गई हूँ।

बड़ी रात तक डास चलता रहा। हल्की-हल्की हिलोरो में अनगिनत जिस्मो की हरारत और शरारत बहती रही। दरवाजों के रेशमी पर्दों पर सात समुन्दर पार से आने वाली अछूती हवायें डोरे डालती रहीं

ग्रौर ग्रनजान बाजुग्रो मे कसमसाती नकली सिसकियों में रात गहराती रही। 'चीकी चीकी हूपला हूप हूप' की गाढ़ी गुदगुदाहटों मे 'माई लव' 'डार्लिंङ्ग' की फुसफुसाहटो के छलके-छलके जाम टकराते रहे और बदचलन रात शेम्पेन ग्रौर ह्विस्की की ग्राखिरी तलछट के स्विमिंग-पूल पर लड़खड़ाती बहकती रही, भटकती रही।

●●●

●● बन्दे क़बा कसा कसा

ग्राज़ाद हिन्दोस्तान के हर दैनिक पत्र में 'जिस देश की धरती सोना है' का पूरे पृष्ठ वाला ख्वाबो की खूराक पर जीने वाली कच्ची उमर को चुम्बक की तरह खीचते हुए 'नये चेहरे चाहिये' का एक दिलखींच विज्ञापन निकल गया। 'बराय मेहरबानी जनाबेमन ! ग्रपना कार्ड साइज रंगीन फोटो भेजिये। ग्रगर कभी भूले-भटके नाटक-नौटंकी मे हिस्सा लिया हो तो हुजूर ! तक़लीफ तो होगी, उसका भी ग्रगर हवाला दे दें तो बड़ी 'किरपा' होगी। हाँ, साथ में पन्द्रह रुपये बतौर टेस्टिंग-फी भेजना हरगिज न भूलिये। पता एक बार फिर नोट कर लीजिये : 'जिस देश की धरती सोना है' प्रोडक्शन मैरिन ड्राइव बम्बई।

N. B. हर ग्राम-खास साहबान को इत्तिला दी जाती है कि ग्राप को इन्टरव्यु के लिए बम्बई ग्राने की तकलीफ नही झेलनी पड़ेगी। हमारा 'सिलेक्शन बोर्ड' ग्रगले महीने से ग्राल इन्डिया का टूर करेगा। ग्राप घर बैठे उस वक्त ग्रपने सुभीते से ऐन मौके पर चुनाव सेंटर में तशरीफ ला सकते है। सुनहले मौके से मुफ्त फायदा उठाइये। ऐसे मौके ज़िन्दगी मे बार-बार नहीं ग्राते।'

गजी खोपड़ी वाले ग्रवसर की दाढी को पकडने वाले नवजवान (?) इन सब मामलो मे तो पेट से ही सीखकर ग्राते है सो चार पाँच दिन के

बाद पूनम दादा के टेम्परेरी आफिस मे मुफ्त फायदा उठाने वाली अर्जियो के अम्बार लगने लगे। महज पद्रह रुपये ही तो खून करना था। ज्यादा तादाद कम सिन से कजलाई निगाहो वाली इन्टरमीडियटी मीडियाकर बालिकाओ की थी। अर्जियाँ लेने की आखिरी तारीख खत्म हो जाने पर प्रोड्यूसर पूनम ने डाइरेक्टर चम्पालाल के साथ बन्द कमरे में बैठकर अटक से लेकर कटक और कश्मीर से लेकर केरल तक के भूगोल की पैमाइश कर डाली। चुनिन्दा-चुनिन्दा पाँच छः शहरो को ही चुना : बैंगलोर, हैदराबाद, जयपुर, आगरा और लखनऊ। इस पायेदार पैमाइश मे दक्खिन की सुलोचनाओ का नारिकेल गाछो की तरह झूमता सैलानी सौन्दर्य, हैदराबादी बुर्के से छन-छनकर आती फूलो की महीन खुशबू, संतरे, सफेदे, नमकीन, दालमोट और नागरे सभी कुछ आ गये थे।

'ठीक है न मिस्टर चम्पा लाल! अपन लोग इसी माफिक उत्तर-दक्खन का यूनिटी कायम करने मे हेल्प करेंगा।'

'एक्सलेन्ट आइडिया बॉस।'

× × ×

एक मँहगे होटल का तीन कमरो वाला एयरकंडीशनर विंग : एक आफिस रूम, दूसरा ग्रीन और तीसरा स्टोर रूम। दो शिफ्ट में सिलेक्शन, दस से एक बजे तक मेवानन्द, साजेन्दकुमारों का और शाम भीगे रात के दूधिया ज्वार मे ताला, तायरा, माथा-फाँसा लोगों का और इन्टरव्यु भी बहुत मुख्तसर सा, बिल्कुल चुस्त-दुरुस्त मसलन :

'येश् मिस्टर बाँगडा; योर क्वालिफिकेशन प्लीज़। एनी ऐक्टिंग-एक्सपीरियस, एनी थिंग एल्स। थैंक्यू।'

अगर कोई 'चैप' होता तो इन्टरव्यु के प्रोसेस में थोड़ा इजाफा और हो जाता। नचनियाँ चम्पालाल उसका डार्लिंग बन के झट मर्सराइज्ड रूमाल का घूंघट डालकर कहता :

'कैसे मनाओगे अपनी रूठी चिड़िया को मिस्टर! जरा दिखाओ

तो ।' और शाम की शिफ्ट मे तो चम्पालाल की फितरत का हाल न पूछिये :

बैंगलोर : येश कुमारी सुकुमारी कमिंग। अईसा माफिक एक्टिंग करिंगा जईसा बोलिंगा। समझो, हम तुम्हारा जादूगर सइयाँ और तुम बोलता; बोलो क्या बोलता :.. ...छोड मोरी बइयाँ, हो गइ आदी रात अब घर जाने दे ए ए।

अल्रैट।

हैदराबाद : येश् बेगम अख्तर, ज़रा इसकूँ तमन्नाओ का इजहार करता :

जादूगर कातिल, हाजिर है मेरा दिल।

जयपुर : येश् पद्मिनी बाई ! रेडी। हम तुमेरे से पनघट का सीन फिल्माना माँगता :

मोहे पनघट पै नन्दलाल छेड गयो रे।

आगरा : हल्लो डियर रोजी :

एक दो तीन, आजा मौसम है रंगीन।

बी मुमताज : जाने क्या तूने कही, जाने क्या मैंने सुनी
बात कुछ बन ही गई
सनसनाहट सी हुई, थरथराहट सी हुई
जाग उठे ख्वाब कई।

लखनऊ : येश् लिल्ली कैरी आन :

चम्पालाल : हम आपकी आँखो मे इस दिल को बसा दें तो !

लिल्ली : हम मूँद के पलको को इस दिल को सजा दे तोऽ !

चम्पा : इन जुल्फों मे गूथेंगे हम फूल मोहब्बत के !

लिल्ली : जुल्फों को झटककर हम ये फूल गिरा दें तोऽ।

चम्पा : हम आपके कदमों पै गि गि गिर जाँयगे
गश खाकर !

लिल्ली : इस पर भी न हम अपने आँचल की हवा
दें तोऽओ !

'येश् बॉस, आइटम नम्बर वन खल्लास'

'डिरेक्टर नम्बर टू बिगिन, मोस्ट एशेन्सयल, हरी अप।'

'येश् कुमारी सुकुमारी ! चोली-जम्पर उतारना माँगता। बॉडी-टेस्ट लेइगा। मेडिकल्ली इक्जामिन करिंगा।'

'......................'

'ना ना शरम करिंगा तो फिर चुस्त चोली कईसे फिट आईंगा, हिरोइन कईसे बनिगा।'

'येश् बॉस, नोट डाउन—सैंतीस, बत्तीस'—बिल्कुल पाक खयाल से सीने की गोलाई नापता चम्पालाल बोला।

घटा-बढाकर केरल से कश्मीर तक यही बेहूदगी दोहराई जाती रही। जो हिरोइनें खुशी-खुशी बॉडी टेस्ट कराती उन्हे टेस्ट के मुताबिक वन, टू, थ्री ग्रेड मे से कोई कट्रैक्ट हाथो हाथ दे दिया जाता और जो ऊ हूँ (चाहे वह भी अन्दाज़ दिखाने का एक लज्ज़तदार तरीका रहा हो) करती, उन्हे डाइरेक्टर चम्पा लाल एबाउटर्न कहके लेफ्ट से राइट मुड़ जाने को बोलता। एक दिन की आमदनी मे से होटल का खर्च अस्सी-नब्बे रुपये काटकर दो सौ की एक किश्त पूनम जी के पास जमा कर दी जाती। अब तक बीच-बीच मे मौज से मौज-पानी करते हुए तक-रीबन पचास हीरो और बीस हीरोइनो से कट्रैक्ट किया जा चुका था। लेकिन खल्लास, इतनी थुक्का-फजीहत के बाद भी हीरो-हिरोइन की भूमिका निभाने वाला कोई सूटेबुल पेयर अभी तक न मिल सका था। न जाने किसकी किस्मत से वाजिदअली शाह की नगरी मे—जहाँ लैला की अँगुलियाँ और मजनूँ की पसलियाँ आने मे चार-चार हर गली-कूचे में बिकती हैं, लिल्ली और माशूक अली (तौबा, फिल्मी नाम आगे कोई

'कुमार' जोडकर रख लिया जायगा) मिल गये। लिल्ली के 'लोऽओ' कहने की लखनउवा पतंगबाजो की झटकदार स्टाइल पर और माशूक-अली के नैन-लडाकू मिज़ाज और पैदायशी मजनूँपने के चुस्टदार जल्वे पर आशिक होकर चम्पा लाल ने दोनों को चुन लिया। आज की इस नायाब कामयाबी से गलकर खमीर बने प्रोफ़्यूसर पूनम जी हडबडी मे बिना अटैची लॉक किये बन्दे कबा कसा-कसा का तखमीना जेब मे डाले गुनगुनाते-पगुराते उन वीरान मज़ारों की ओर निकल गये जहाँ ओढनी लथेडती खबीस खालायें नथुनियोदार बछेडियों को डोरियाये सिन्नी शबंत चढाने के बहाने शिकार तलाश करने जाया करती है।

●●●

●● चुटकी भर चाँदनी

भुतहे टीले के उस पार गुलाबी साँझ ताक-झाँक करने वाली चुगलखोर ननद की तरह लाज और रोमांच से लाल-पीली बनी अस्ताचल के बरोठें मे आकुल-व्याकुल मँडरा रही थी। ऐसी बोझिल फ़िज़ा में बेहद उदास पूनम जी नथुनियाँ ठुमकन की चोट खाये 'नदीम, हैदर, साहिर और अंसारी' को लिय-दिये ज़ीस्त का जहर घूँट रहे थे :

मेरा ईमान है रज़ा तेरी, देख किस बेदिली से जीता हूँ

किस क़दर तल्ख़ है शराबे हयात, सब समझता हूँ फिर भी पीता हूँ।

(वल्लाह, इरशाद इरशाद।)

सब सुनकर भी न सुनने की बेवफाई जताते हुए जामुनी होठों में एक जुम्बिश लहराई कि गीतकार प्रोफ़्यूसर को पछाड़कर फिर चहका :

'लीजिए सरकार ! गुलाब जल-बसी गिलौरियाँ'—नथुनी के मोती चमककर असली मोतियो मे मिल गए।

'हूँ !'

'क्या सोच रहे है सरकार ! वहाँ तो आप बडे ख़ुश नजर आ रहे थे। कितनी प्यारी तरन्नुम भरी आवाज़ से गुनगुना रहे थे। जी चाहता था कि सारी जिन्दगी इन्ही तरन्नुम की वादियो मे घूमती रहूँ।'

'हूँ ......!'

'अरी मुई ! सरकार के हुजुर मे अबी गिलौरियाँ नईं पेश की। क्या चटर-चटर बके जाय है, ख़ुदा सेहत सलामत रखे हुजूर की।'

'हूँ......!'

'हुजूर इत्ती देर से क्या सोच रये हैं आप ? गुम-सुम बैठे हुये हैं हाय रो गुलब्बो, गिलौरियाँ सूखी जायँ हैं।'

'मै यह सोच रहा हूँ बडी बी कि तमाम दुनियाँ मे इतने इंकिलाब आये लेकिन तुम मे पहले से क्या फर्क आया ?'

जैसे किसी ने दहकती चिनगारी को कुरेदकर उस पर छाई राख की मोटी परत हटा दी हो। बडी बी के मकडियो के जाले यकायक तन गये और भिची-भिची किचडारी आँखें छलछला आई। जैसे-तैसे थिगली वाले दुपट्टे के छोर से कोरें पोछती हुई शब्द बटोरे : 'किसी तरह से बेहया ज़िन्दगी के दिन पूरे कर रही है हुजूर, हमारी तो बुरी-भली कट गई पर अब इनकी'......नौ दस बरस की दूध के दाँतो वाली बनी-ठनी लाली पोती एक गुडिया की ओर इशारा करते हुये कहा। जब से सरकार ने बंदिश लगाई है तब से गेहूँ के साथ घुन भी पिस रही है सरकार। जब तब रात-बिरात पुलिस आ धमकती है, हम लाख सम-झाती हैं कि हम अठन्नी-चवन्नी में इज्जत बेंचने वाली टकैल नही, गाने-बजाने के ज़रिये इज्ज़त की ज़िन्दगी बसर करने वाली कदीमी कोठे-वालियाँ हैं लेकिन कौन सुनता है सरकार ; पुलिस आती है, नई-नई

छोकरियों को छाँटकर अपने साथ ले जाती है और वहाँ वही करती है जिसके लिए घर-पकड होती है। पास पल्ले जो रुपया-धेली होती है वह भी उनकी भेंट चढ़ जाती है। दो एक दिन बाद नंगी-बुच्ची करके खदेड देती है, कही कोई सुनवाई नही है सरकार! हम चीख्-चीख् कर कह्ती हैं कि हमें मेह्नत-मशक्कत वाला काम दो, रोटी दो, तन ढाकने को कपड़ा दो, सर पर साये के लिए फूस का छप्पर दो, हवेलियाँ न्हीं माँगती सरकार! हम भी अपना एक घर चाह्ती हैं जहाँ सुबह परभाती गा सकें, हमारे बच्चे-बच्चियाँ क़ुरान की आयतें पढ़ें, शाम सँझवातियों में बीते, रात रमाइन-भागवत बाँचें। छोटे-छोटे बच्चे ऊधम मचाते हुए घर-भर में दौड़-दौड़ कर शोरगुल मचायें, कूड़ा-करकट फैलायें। ये उजली चादरें नहीं हैं सरकार, हमारी मय्यत के कफ़न हैं कफ़न। दो चार मनचले छोकरें, छोकरियो का चढाव-उतार देख कर भले शादी के लिए तय्यार हो जायें लेकिन इससे क्या होगा सरकार; चार जाती हैं तो पीछू से चार सौ चली आती हैं, उनका क्या होगा ग़रीबपरवर! सिरफ पत्ती-पत्ती सीचने से कही काम चलेगा सरकार! आप ही बतायें, हम जाहिल जट्ट क्या जानें? पर इतना तो समझती है कि कोई दस-बीस बत्तियाँ बुझा सकता है लेकिन ये जो ठट्ट की ठट्ट बेशुम्मार बत्तियाँ रात के मटमैले मशान में सुलग रही हैं, इन्हें कब कौन बुझायेगा सरकार? जब तक आप लोगों के पग्गड़बाज काका-मामा लम्बी-चौड़ी दहेज की रकमें—चाहे वह नगद ली जायँ या लिस्ट बनाकर गिफ्ट के तौर पर—लेते रहेंगे, निठल्ले नामरद दल्लाल हमलोगों का भेड़ बकरियों की तरह कारोबार करते रहेंगे, बोटी बोटी निचोड़ कर चूसते रहेंगे, घुट-घुट कर मरने भी नहीं देंगे, मर गईं तो उनकी थैलियाँ कौन भरेगा? दुधमुहीं बेवाओं के कान में छू-छू की कीलें ठोंकते हुए उन्हें खराब कर कासी-परियाग में छोड़ते रहेंगे, गुड्डे-गुड्डियों की सुपैली चाई-

माईयाँ होती रहेंगी, धन्ना सेठों की तिजोरियाँ वज्जनाती रहेंगी तब तक भूल-चूक मुआफ सरकार—ये लाल नीली बत्तियाँ सूरज की छाती पर मूँग दलती हुई बाकायदा जलती रहेंगी।

बड़े-बडे टीका चदन वाले पडत बिरहमन कहे है कि इन्हे बना रहने दो; ये हमारे घर की पाकीज़गी की गारंटी हैंगी। ये मुई गर मिटी तो अल्लम-गल्लम तमाम आवारा पसीना-पेशाब हमारी 'जगवेदी' में उफना पडेगा। हमाई वकत का है सरकार; जब जिस छन चाहो, रोटी का कौर तोडते बखत भी खीचकर हमे सेज पै सुला लो। आपका एक इज्ज़तदार आदमी हमारे तलुवे चाटकर भी बेदाग़ अपनी इज्जत वाली (!) बिरादरी में लौट जाय और हम सबसे अलग-थलग कटी, कोल्हू के बैल की तरह इन सडी-गली गलियों मे रूप की दूकान सजायें, चमगादड़ों की तरह छज्जों पर लटकी सारी-सारी रात जगकर कमीन खूसटो और बीमारियो का इन्तजार करें, हमारी दुधैली दाँतो वाली बच्चियाँ मकतब-मदरसे जाने के बजाय 'जियरा तरस-तरस रह जाय कि रामा हिच हिच हिचकी आय, कि अँगिया तड़प तड़प बल खाय कि छिनरी चुनरी तोहे बुलाय' के बदनाम गाने गाकर चक्कू-छुरी चलवायें और फिर भरी जवानी मे किसी शरीफ साहबजादे से दच्छिना-परसाद पाकर बिना दवा-दारू के पैर पटक-पटक कर कुत्ते की मौत मरें। अय हय भली कही पंडतजू; इधर-उधर मुँह मारकर तुम अपने कछुवे की खोल मे घुस जाओ और सर निकाल-निकाल कर वहीं से मुलुर-मुलुर झाँकते चिल्लाव कि ये अगर नही रहेंगी तो हमारे खोलो की खैरियत नही, भाड़ मे जायें तुम्हारी खोलें और तुम।'

उइ री, कहाँ मैं गुलब्बो को डाँट रही थी और कहाँ खुद नाँघ बैठी पर सरकार जैसे बोझ उतर गया हो यह सब आपके सामने कहके। और कहाँ तक कहे, ई भागवत तौ छैं महीने तुलुक न खतम होई सरकार! ऊ जो पियर रंग का मुडेर देख रहे हैं न आप, वो मे दिल्ली कलकत्ता, लाहौर, वलायत न जाने कहाँ-कहाँ से अटक-भटक के एक

चौदह-पद्रह साल की छोकरो अबहिन दुइ महीना पेश्तर आई । आय हाय, लडकी कइसी जइसी दिया के टेम, गुलाबाँस का फूल, हाथ छुये मैली होय, गऊ ऐसी सूधी, मिठबोली, हर इतवारे उपवास करे, तुलसा महारानी का पानी पियाये बिना एक घूँट हराम । पर उसका जो खसम कहो या दलाल सैकू नट, उससे रोज बीस रुपिया माँगे, एक बीसी बेचारी कहाँ से लाये, कौनो पेड मे तो लगे नाही कि हिला ले । एक बाबू साहेब राजधानी से आयके दू रुपल्ली के साथ दिल्ली वाला तोहफा दइ गयेन । अब बेचारी कौडी काम की नही पर दहिजरा सैकुवा तो बीस से एक कौडी कम न चाहे, एक बीसी न जुट सकै तो उलटा लटकाय के बेपरद करके कोडे से पीटै, हाय अल्ला ! केला के पात अइसी पिठाई मा बडे-बडे ददरा, नील चकत्ता, नाखून मे सुई चुभौवे, पलँग के पावा के नीचू गदेली दबाय के चढ बैठे ओर कलेजे के घावन मे तेजाब चुवाते हुए हर घडी कोचता रहै : 'पक्के चार सौ कलदार दिये है मैने सन्त किरपाल जी को, रडो ! अभी स''''''मे मेहदी रचा बैठी है, कर्जा कैसे भरेगी हरजाई, बदजात !'

सडाक्''''''सडाक्'' '';''''

'बडी बी; मैं'''मै उस अभागन को देखता चाहता हूँ ।'

'अरे सरकार ! उस लफगे के कौन मुँह लगे ? पक्का गुण्डा है गुण्डा ।'

'जैसे भी हो बडी बी, जिस कीमत पर भी हो, न जाने क्यो मेरा दिल जोर-जोर से धडक रहा है ।'

'अच्छा ठैरिये, पता करती हूँ, कल ही शाम को तो उसकी पडोसन हबीबुल दरगाह पर मिली थी, बता रही थी कि इस बार नासपीटे ने उसे इस कदर मारा है कि बेचारी एक हफ्ते से चारपाई से लगी पडी है ।'

'ओ मो'''रे'''भ'' इ'''या ऽ ऽ ऽ ।'

पंख नुची लुथडी गौरइया, जडाऊ पन्नीदार राखियो की एक मुट्ठी राख, गभुवारी तुलसी, कालिया नागो की गुजलक मे कसमसाती, एक-एक साँस के लिए जी-जान से लड़ती-जूझती, पियराई, रक्त-शून्य,

जीवनी-शून्य, सदल की एक बारीक फाँक, फटी-फटी पथराई आँखो में अपनी इज्जत मरजाद लिए लुढक गई।

'दइया रे दइया, हाय मोरी फूला, हाय मोरी बिट्टी'—पूरन दोनो हाथो के हथौडो से अपनी छाती कूटता हुआ बचपन की मिठबोली मैना को अँकवार मे भर लिया। आँगन-आँगन, द्वारे-द्वारे फिरा लेकिन मैना कभी की उड़ चुकी थी। उसने उन्मत्त आवेश मे अपने कपड़े-लत्ते चिन्दी-चिन्दी कर डाले। नाखूनो से चीथ-चीथकर सारा चेहरा लहू-लुहान कर लिया। जिसने भी रोकना चाहा, उसे धक्का देकर गिरा दिया। बहुत दिनो तक उसे लोगो ने गोमती के पल्ली पार श्मशान की कलायँछ बालू को मुट्ठियो मे कस-कसकर भीचते हुए देखा, पत्थर को भी पिघला देने वाली उसकी डिडकारियाँ सुनी और फिर एक दिन असामाजिक तत्वो को न पनपने देने वाले (?) पहरुयेदारो ने उसे धर-पकडकर पागलखाने मे बन्द करवा दिया। क्योकि उसने मुन्शी मनसुख लाल विश्वकर्मा से नकली ज्योतिषी बनकर चार सौ बीस करते हुए साढे तेरह हजार रुपये ऐंठ लिए थे। ख़ुदा ख़ैर करे भाई चम्पा लाल का जिसकी होशियारी से यह पर्दाफाश हुआ। अख़बारो ने शान के साथ छापा :

त्रिकालज्ञदर्शी कैलासवासी नकली जगद्गुरु स्वामी पूरनानन्द ने चार सौ बीस करके 'फुदकती मैना' फिल्म के ख्याति-प्राप्त लेखक मन-सुख लाल विश्वकर्मा से साढे तेरह हजार रुपये ऐंठ लिए, सती सावित्री सम्भ्रान्त कुल की बधुओ का सतीत्व नष्ट किया। सैंकडो घरो मे सेंध लगाकर वहा की पारिवारिक पवित्रता भग की। पुलिस सरगर्मी से ऐसे गुरुघटाल की खोज कर रही है। भक्तो! सावधान।'

उधर रूबी के पास पाकिस्तान से दादर के पते पर रिडाइरेक्ट किया हुआ एक खत आया : मेरी नेक आपा, मेरी रूह, मेरी ठडक !

मेरे करीब आ; आ, आ ना, गले से लग जा क्योकि वक्त अब बहुत रीब है बहुत क़रीब। तुम्हारी शबनमी याद ने तसव्वुर मे कितना-

कितना तडपाया है मुझे, इसे मेरे और तुम्हारे सिवा कौन जान सकेगा। मुये चन्द लफ्ज़ों की झीनी परतों पर वह सुकून, वह तर्जेबयानी अँट नही पाती मेरी जान, कैसे तुझे समझाऊँ ? देख तेरी नसीम, तेरी आँखो की प्यारी नीद एक ज़माने से तपे-लरज़ा मे पड़ी खौल रही है और ऐसी दर्दनाक हालत में भी वह खँगाली जाती रही है, बडी-बडी अदीब लफ्फ़ाजियों की बुलन्द ऊँचाइयो पर, तौबा, कहेगी मुई बडी बेशर्म है— मेरी जन्नत ! शर्म की भी एक अपनी हद होती है, अब इत्ता सारा बोझ नही सम्हाले सम्हलता। ओ बेदरद बहना ! उस दिन 'अजन्ता' में तेरी हिरना सावरी चन्द लमहो के लिए तुझसे मिली थी, कितना इतरा रही थी वह। सोचती थी कि चाँदनी रात की मुअत्तर ख़ुशबुओ और शह-नाई की गूँजो के बीच उसका सफीना मकसूद की बाजुओं के सहारे शाहे मदीना की ओर हौले-हौले बढता जायगा। हैफ। मैंने अपनी जिन्दगी की इब्तिदा अलस्सुबह वज़ू करके पढी जाने वाली क़ुरआन की आयतो से मिलने वाली पाकीज़गी से की और इन्तिहा सि…फ… लि…स…से वह सब फ्रॉड था रूबी, धोखा, एक हसीन धोखा। मक़सूद एक दल्लाल था। अपनी शार्कस्किनी चिकनाहटों के जाल मे भोली-भाली लड़कियो को फँसाकर ऊँचे किलास की सोसायटी में 'सप्लाई' किया करता था, वह सब तरह से मुझे मसलकर कहीं चला गया, किन-किन बाहों मे उसने मुझे नही सौंपा, किस-किस नदी-नार का पानी उसने मुझे नहीं पिलवाया, यह लम्बा किस्सा है मेरी हरारत ! मैंने आज अपने को कितना निचोडकर बुझते दिये की आखिरी लौ जैसी कुव्वत से यह लम्बी चिट्ठी तेरे लिये तकमील की है मेरी जाने वफ़ा ! एक कसाव एक फौलादी कसाव नसो की चिटखन और गले की खरखराहट में बडी तेज़ी से मेरे जानिब बढता चला आ रहा है। अगले जुमेरात को अपनी इस 'खिलन्दड़ी' के नाम का फ़ातिहा ज़रूर-ज़रूर पढ़वा देना मेरी प्यारी ! अरे रो मत मुझे कैसा लग रहा है तेरे आँसू देखकर ! अलविदा आपा ! अ…ल…वि…!

रूबी तरबतर गिरते आँसुओं से ख़त को भिगो रही थी कि अन्दर के कमरे से कराहने की दर्दनाक आवाज़ आई। शकुन्त पूरे दिन का वजनी गर्भ टाँगे अनजानी पीरों मे तडप रही थी। रूबी ने उसे टाँग-टूँगकर टैक्सी से अस्पताल पहुचाया। शाम को जनरल वार्ड मे उसने एक तन्दुरुस्त बच्चे को जन्म दिया : हूबहू छोटा चन्दानी।

तीसरे दिन, दिन ढले अस्पताल से जब रूबी निचुडी जच्चा और गलगुथने बच्चे को लेकर घर लौटी तो देखा : दरवाजे पर ताला पड़ा हुआ है और कॉरीडोर के कोने पर उनकी गृहस्थी लावारिस सी छितराई पडी है। तीन महीने से किराया न देने के कारण काम का सामान छावडीवाला ने अख़बार देखते ही हथिया लिया था और प्रोड्यूसर पूनम जी की लॉक्ड अम्बेसडर मुन्शी चार पाँच 'दादा' लोगो के साथ आकर घसिटवा ले गया था। सेठ छावड़ीवाला कल रात एक महीने के लिए अपने ब्राच आफिस बैंगलोर रवाना हो चुका था। तग पायचे-वाले सुथने पर लम्बा कुरता पहने, चाँदी के ढेर सारे बटन लगाये कोठी का रखवाला एक छः फुटा सरदार सलाख जैसी निगाहो से दोनो को दागते हुए बोला : 'ओए बादशाहो! मेरे नाल चलो, मैं त्वांनू असली काबुल कंधार दा तडकदार मेवा ख़्वाना।'

फुटपाथ पर दायें बाजू एक लैम्प पोस्ट के नीचे शकुन्त और रूबी अपनी बची-खुची गृहस्थी समेटे गुमसुम उदास बैठी थी और थोडे फासले पर फिसलती रोशनी में 'माउथ-आरगन' बजाते दो-तीन सीकिया रोमियो रेशमी शलवार और जालीदार कुर्ते वाली रूबी को देख-देखकर बेहूदी एक्टिग करते हुए 'फ्री-स्टाइल' दण्ड-बैठक कर रहे थे। नखरे वाली के नाज़ उठाने की कुव्वत हासिल कर रहे थे। दूर दूर जहाँ तक नज़र जाती थी, बाहर-भीतर घुमडता बियाबान अँधेरा पर्त पर पर्त जमाता गहराता चला जा रहा था और किसी अविश्वसनीय झरोखे से झरती निष्प्रभ जुगजुगाती चुटकी भर चाँदनी निचुडे आँचल की नन्ही कोंपल का मुखड़ा चूम रही थी।

●●●

● लेखक की अन्य रचनाएँ ●

- मेघदूत (लयवान मुक्त-छन्द मे रूपान्तरित सचित्र संस्करण)
- ऋतु-संहार (विस्तृत भूमिका सहित छदगन्धी-रूपान्तरण)
- मध्यकालीन सन्तो की विचारधारा और साधना-पद्धति (शोध-प्रबन्ध)
- ओ अनागत मीत (कवितायें)
- सुलगती साँझ और बेवा मीनारें (इतिहास का एक धूमायित-घायल पृष्ठ)
- पैसुनी के तीर (शब्द-चित्र)
- ढरकइ रस कै गागरी (आंचलिक लोक गीतों का संकलन)

●

वर्षा-मंगल का अभिनव उपहार

मेघदूत

रूपान्तरकार : डा० केशनीप्रसाद चौरसिया

मेघदूत का अनुवाद देखा। पसन्द आया। प्रौढ अनुवाद है। बहुत अच्छा है।

—निराला

मेघदूत का अनुवाद बहुत सुन्दर बना है। हार्दिक बधाई स्वीकार करें।

—डा० हजारी प्रसाद द्विवेदी

आपने मेघदूत की मन्दाक्रान्तात्मिकता-लय को जिस प्रकार के लोच-भरे सरल शब्दो मे गूँथा है उससे अमर काव्य की चिरन्तनी थिरकन का नया अनुभव मिलता है।

—डा० वासुदेवशरण अग्रवाल

मेघदूत ऐसे कठिन काव्य को इतनी सरल भाषा मे उतारना कमाल का काम है। मुक्त छन्द का माध्यम अपनाकर आपने एक नई राह खोजी है।

—बच्चन

चौरसिया जी के अनुवाद की विशेषता उसकी सरलता है। यदि मेघदूत के अन्य अनुवाद किसी की समझ मे न आये हो, तो उसे इस अनुवाद को एक बार अवश्य देखना चाहिये।

—डा० रामविलास शर्मा

श्री केशनीप्रसाद चौरसिया का यह प्रयास जितना उनके आत्म-विश्वास का प्रमाण है उतना ही उनकी कालिदास के काव्य की व्याप-कता और प्रेषणीयता के प्रति आस्था का भी। मेरा विश्वास है कि उनकी आश्चर्यजनक सफलता प्रत्येक ऐसा पाठक स्वीकार करेगा जो कालिदास का भी प्रेमी हो और आज की नयी हिन्दी कविता का भी।

—बालकृष्ण राव

अनुवाद अत्यन्त सरस और सफल है। भाषा की मिठास का आकर्षण मुग्धकरी है। मेघदूत के अनेक अनुवादो के बीच यह 'एक' ही रहेगा। बहुत बहुत बधाई।

—विनय मोहन शर्मा

छन्द-बद्ध रचना का अनुवाद सफल, स्निग्ध, लयवान मुक्त छन्द मे करके केशनी प्रसाद जी ने एक नया सार्थक प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त कालिदास के काव्य की शब्द-गंध उतारने के लिए भी अनुवादक ने ताजे और मिठास-भरे रंगीन जनपदीय शब्दो को लिया है जिनसे मेघदूत मे बसी जनपदीय सुवास भी कलम की नोक पर उतर आई है।

—गिरिजाकुमार माथुर

प्रत्येक पृष्ठ सिद्धहस्त चित्रकार गौतम के नयनाभिराम विभिन्न भाव-चित्रो से सुसज्जित; मोनो की सुन्दर छपाई से युक्त आकर्षक गेट-अप वाली सजिल्द पुस्तक का मूल्य, लागत मात्र रु० ३·५०

अशोक प्रकाशन मन्दिर, जीरो रोड इलाहाबाद।

---

* कतरनें (रिपोर्ताज) डा० केशनीप्रसाद चौरसिया
** हाथी दाँत की मीनारें (उपन्यास) त्रिलोकी नाथ श्रीवास्तव
*** सूखी रेत का सागर (उपन्यास) अजित पुष्कल।